महल और मकान

यज्ञदत्त एम० ए०

प्राप्ति-स्थान
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली ६

महल और मकान

लेखक की अन्य रचनाएँ :—

१. विचित्र-त्याग	उपन्यास
२. प्रेम-समाधि	,,
३. दो पहलू	,,
४. इन्सान	,,
५. निर्माण पथ	,,
६. अन्तिम चरण	,,
७. साहित्यिक सराय	,,
८. आलोचना के सिद्धान्त	आलोचना
९. प्रबन्ध-सागर	प्रबन्ध
१०. हिंदी का संक्षिप्त साहित्य	इतिहास
११. हिंदी साहित्य का सांकेतिक इतिहास	,,
१२. हिंदी के उपन्यासकार	समालोचना

[१]

प्रोफ़ेसर सुधांशु—"किसी भी सत्ता को हस्तगत करने का व्यक्तिगत प्रयास प्रजातंत्रात्मक सत्ता को एक चुनौती है, संघर्ष का आवाहन है। आप जानते हैं प्रकाश बाबू कि एकतंत्रात्मक सत्ता क्या है? दूसरों की परतंत्रता पर अपनी एकतंत्रता का यह वह दुर्ग है कि जिस की नींव में दबे हुए जरजरित हड्डियों के वह ढाँचे, जो कभी मानव कहलाते थे, आज चर-मर चर-मर कर रहे हैं।" प्रोफेसर साहब ने गम्भीरता पूर्वक कहा।

"यह सब अनर्गल बकवास है प्रोफ़ेसर सुधांशु! आपके मस्तिष्क को तो इन पुस्तकों ने चाट लिया है। अपनी-अपनी ढपड़ी और अपना-अपना राग अलापने वाले न तो व्यक्ति ही जीवन में सफल हो सकते हैं और न देश ही। प्रजातंत्र में अपनी-अपनी ढपड़ी लेकर जनता के ठेकेदार जनता के सामने नृत्य करने के लिए निकल पड़ते हैं और जनता, उसे मैं मूर्खों का समुदाय मानता हूँ, न उसका सम्बन्ध बुद्धि से है और न विवेक से। कुछ लोग उसे व्याख्यानों से रिझाकर मूर्ख बनाते हैं और कुछ पैसे देकर क्रय कर लेते हैं—बस यही है न आपका प्रजातंत्र का ढकोसला?" पतलून की क्रीज को सँवारते हुए प्रकाश बाबू ने अपना एक पैर उठाकर दूसरे पैर के घुटने पर रख लिया और फिर बैठक में इधर से उधर तक दृष्टि घुमाते हुए मुस्करा कर बोले, "आपके लिए तो प्रोफेसर सुधांशु! यमुना नदी आज भी वहीं लाल किले की चहार दीवारी के पग चूमती हुई प्रवाहित हो रही है, पांडवों के दुर्ग पर यदि आज भी दुर्योधन आजाय तो सम्भवतः आप दुर्ग की दीवारों से उसकी टक्कर करा दें।" इतना कहकर प्रकाश बाबू ने जेब से सिग्रेट निकाल कर लाइटर से जला लिया और उसके गोलाकार धुँए के गुब्बारे कमरे

के वायु-मंडल में छोड़ने प्रारम्भ कर दिये। यह बात प्रकाश बाबू ने इतनी गम्भीरता पूर्वक कही कि उन्हें स्वयं अपने मन में उसकी गम्भीरता के प्रति विश्वास हो उठा और उनके मन ने दृढ़ता पूर्वक कहा कि प्रोफेसर सुधांशु को निश्चित रूप से उनकी बात का लोहा मानना ही होगा। शक्ति का केन्द्रीयकरण और संचालन बच्चों का खिलवाड़ नहीं है जिसे लैक्चरबाजी के बल पर चार राय प्राप्त करके चुने जाने वाले संसद के सदस्य कर सकें। इस महान कार्य की पूर्ति के लिए उन्हें प्रकाश बाबू के मस्तिष्क की शरण लेनी ही होगी।

प्रोफेसर सुधांशु प्रकाश बाबू की बात सुनकर मुस्करा दिये और बहुत साधारण स्वर में बोले, "इस बार की अमेरिका-यात्रा से तो आपका दृष्टिकोण ही बदल गया प्रतीत होता है प्रकाश बाबू ! परन्तु मुझे प्रसन्नता हुई कि आपके जीवन में व्यंग्य ने स्थान पा लिया। वरना मुझे भय था कि कहीं किसी दिन किसी कारखाने में यंत्र के पास खड़े-खड़े आप भी एक यंत्र न बन जाओ। अब मैं आशा करूंगा कि आप जड़ न रह कर प्रगति के क्षेत्र में पदार्पण करेंगे।"

प्रकाश बाबू—"यंत्र से सम्भवतः प्रोफेसर साहब जीवन में भयभीत हो उठे हैं; परन्तु आज के युग में आप यह भुला कर नहीं चल सकते कि यह यंत्र का ही युग है; और बिना यंत्रों की सहायता के आज का मानव-समाज जड़ है, अप्रगतिशील है।"

"परन्तु यंत्र का युग होने का यह अर्थ नहीं कि मानव पर यंत्र को प्रधानता दे दी जाय; एक यंत्र का पेट भरने के लिए बीस व्यक्तिओं को भूखा मार दिया जाय। यदि यह यंत्र-युग ऐसा हुआ तो में इस युग का विरोध करूंगा।" गम्भीरता पूर्वक प्रोफेसर सुधांशु बोले और उन्होंने अपने ढीले कुर्ते की आस्तीनों को चढ़ाना आरम्भ कर दिया।

"विरोध ! और आप ?" इतना कहकर प्रकाश बाबू जोर से खिलखिला कर हँस पड़े। "आपके जीवन का विरोध से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता प्रोफेसर सुधांशु ! पुस्तकों में इतिहास के पन्ने उलटने-पलटने

से आज तक कोई सिकन्दर, नेपोलियन या हिटलर नहीं बना। जो व्यक्ति जवानी में संतोषी बन जाय, मैं समझता हूं वह मर चुका; उसकी प्रगति रुक गई; वह कुछ नहीं कर सकता। असंतोष ही प्रगति का अग्रदूत है।" प्रकाश बाबू ने कहा।

"आपकी दृष्टि मानव-जीवन के जिस पहलू पर पड़ी है प्रकाश बाबू! उसे मैंने अपने थीसेस में व्यक्ति का वह स्वार्थी रूप बतलाया है कि जिसकी दशा अथाह पानी में भँवर के समान होती है। उसमें गिरकर व्यक्ति बस वहीं पर चक्कर लगाने लगता है, एक इन्च इधर-उधर चलने की उसमें क्षमता नहीं रहती। उस भँवर में फंस कर मूर्ख व्यक्ति यह भी समझने का भ्रम कर सकता है कि वह स्वयं एक घिन्नी खाकर खेल करने वाले बालक की भांति उस भँवर का निर्माता है; परन्तु वास्तव में सत्य यह नहीं है। वहां व्यक्ति अपनी शक्ति को खोकर दास बन जाता है उस भँवर का और यहां आप दास बन चुके हैं अपनी मनोवृत्ति के। यह मनोवृत्ति कुछ नवीन नहीं, वही बाबा आदम के समय की विविध रूपों में चली आने वाली एकतंत्रात्मक मनोवृत्ति है, जिसमें प्रगति नहीं, विकास नहीं, प्रवाह नहीं, कला नहीं—एक झूठी और अस्थिर हविस मात्र है, जो कभी स्थायी नहीं रह सकती। आपकी विचार-धारा अपनी कमजोरियों पर आवरण डाल कर आज तक औरों के साथ-साथ अपने को धोखा देती चली आ रही है।" इतना कहकर प्रोफेसर सुधांशु ने गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू के मुख पर ताका और फिर धीरे-धीरे बोले, "प्रकाश बाबू के जीवन का कोई पहलू मुझसे छिपा नहीं है।" यह कहने के पश्चात् उन्होंने अपनी मेज की दराज से कुछ चित्र निकाल कर प्रकाश बाबू के सामने डाल दिये। यह चित्र व्यक्ति की खोपड़ी के थे, जिनपर लाल स्याही से बहुत प्रकार के चिह्न बने हुए थे। "यह व्यक्ति के मस्तिष्क की स्टडी है। मैंने आपके मस्तिष्क को उस दिन से ही पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था जिस दिन प्रथम बार मेरी और आपकी विद्यालय में भेंट हुई थी; और आज तो मैं दावे के साथ कहूं

सकता हूं कि आप भी अपने मस्तिष्क को उतना नहीं समझते जितना मैं समझता हूँ।"

प्रकाश बाबू ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। मूर्ख वह प्रोफेसर सुधांशु को नहीं समझ सकते थे, परन्तु उनके मत से सहमत होने का भी उनके पास कोई कारण नहीं था। वह मन ही मन मुस्करा कर बोले, 'किताबों के कीड़े हैं, इन बेचारों को दुनियाँ का क्या पता? इनकी सब बातें क्षम्य हैं। मैं इन्हें दया का पात्र समझता हूँ। बड़े से बड़ा विद्वान क्रय किया जा सकता है। हमारा काम विद्वानों को क्रय करना है और उनका काम हमारे विचारों का प्रतिपादन करना। प्रोफेसर सुधांशु की लेखनी का चुकता मूल्य देकर यदि एक दिन मैंने इन्हें अपना दास न बना लिया तो मेरा नाम भी प्रकाश नहीं।' बातों की दिशा बदलते हुए प्रकाश बाबू बोले, "सुना है मिस केतकी ने आजकल डाक्ट्री में बहुत प्रसिद्धि प्राप्त करली है।"

"क्यों, क्या भेंट नहीं हुई अभी तक? मैं तो समझा था कल ऐरोड्रम पर उन्होंने आपका स्वागत किया होगा।" बात बहुत सरलता पूर्वक प्रोफेसर सुधांशु ने कही थी परन्तु प्रकाश बाबू के हृदय में गुभ गये यह शब्द, और उन्होंने एक कसक सी पैदा करदी। प्रोफेसर साहब ने यह व्यंग्य-बाण मारे हैं परन्तु इन्हें भी एक दिन देखना होगा कि इनका व्यंग्य सत्य होकर ही रहेगा। ऐरोड्रम पर मेरे स्वागत के लिए बेचारी मिस केतकी ही क्या, न जाने कितनी मिस केतकियाँ आँखें बिछाये खड़ी रहा करेंगी। वह दिन दूर नहीं है जब मैं रुपये पर विजय प्राप्त कर लूंगा और मेरा रुपया संसार के अन्य साधनों को अपना दास बना लेगा।

इसी समय प्रोफेसर सुधांशु खड़े होते हुए बोल उठे, "लो यह आगईं मिस केतकी भी।" और फिर मिस केतकी की ओर मुख करके बोले, "आपकी आयु बहुत बड़ी है मिस केतकी! अभी एक क्षण भी नहीं हुआ कि प्रकाश बाबू आपके विषय में पूछ रहे थे।"

"मेरे विषय में !" मिस केतकी टेलिस्कोप सामने मेज पर रखकर एक ओर खड़ी हो गईं। मुख पर तनिक आश्चर्य के हाव भाव लेकर मिस केतकी ने प्रकाश बाबू के मुख पर मोहक दृष्टि से देखा और फिर व्यंग्य-वाण छोड़कर बोलीं, "प्रोफेसर सुधांशु ! यह दुनियाँ बड़ी विचित्र है। आपने तो 'कामायनी' पढ़ी है। कितने सरल और मधुर शब्दों में प्रसाद' जी लिख गये हैं—

'जिससे हृदय सदा समीप है, वही दूर रहता है।'

"परन्तु यह बात आप प्रकाश बाबू के लिए नहीं कह सकतीं।" मुस्करा कर सुधांशु बोले, "यहाँ मैं आपकी यह बात नहीं मानूंगा मिस केतकी ! चाहे मुझे 'प्रसाद' जी की कल्पना, भावना और अनुभव तीनों को ही चुनौती क्यों न देनी पड़े, परन्तु प्रकाश बाबू के ऊपर आपका यह आरोप सहन नहीं किया जा सकता।"

"न करें आप, परन्तु सत्य असत्य नहीं हो सकता।" यह वाक्य कहकर मिस केतकी ने प्रकाश बाबू पर फिर गहरी चोट की।

इस बार प्रकाश बाबू मौन न रह सके और हृदय में पीड़ा लेकर बोले, "मिस केतकी ! इसमें आपका कोई दोष नहीं, दोष है समय का। जीवन का सफल कलाकार असफल कलाकारों पर सर्वदा से ही हँसता हुआ देखा गया है। परन्तु यह व्यंग्य-वाण हम पर न छोड़िये। हम जरा कमजोर आदमी हैं, आपकी शक्ति के सम्मुख ठहरना हमारे लिए नितांत असम्भव है। हम नत मस्तक होते हैं आपके सामने।" इतना कहकर प्रकाश बाबू ने ऐसा सरल मुँह बनाकर सिर झुकाया कि प्रोफे-सर सुधांशु को हँसी आगई।

प्रोफेसर सुधांशु—"खूब व्यंग्य कसा प्रकाश बाबू आपने भी। वास्तव में सफल कलाकार की असफल कलाकार पर हँसने वाली प्रवृत्ति बहुत प्राचीन है; परन्तु मिस केतकी के विषय में आपका यह आरोप मैं नहीं मान सकता। संसार में सफल कलाकार असफल कलाकारों को अपने दल में बाँध कर उन्नति के शिखर-द्वार तक ले जाते हुए भी देखे गये

हैं। मिस केतकी को मैं उन्हीं सफल कलाकारों की पंक्ति की पथ-प्रदर्शिका मानता हूँ।" यह शब्द उच्चारण करते हुए प्रोफेसर सुधांशु किसी स्वप्न-लोक की कल्पना में विलीन हो गये।

"परन्तु आपके मानने को मैं अन्तिम-निर्णय स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता ही क्या है? मैंने आपसे आते ही सर्व प्रथम मिस केतकी के विषय में पूछा, अमेरिका से भी मिस केतकी के नाम पाँच पत्र लिखे, परन्तु मेरे पास उनका एक भी उत्तर नहीं पहुँचा। कल भी जिस समय मेरा जहाज़ उतर रहा था तो मेरे नेत्र............" कहते कहते प्रकाश बाबू के शब्द रुक गए।

प्रोफेसर सुधांशु—"हाँ हाँ! रुक क्यों गये? कहो न! कि आपके नेत्र भटक रहे थे मिस केतकी के गुलाबी कपोलों पर अंकित हो जाने के लिए और वहाँ आपकी इन्तजार में खड़ा था यह खूसट प्रोफेसर सुधांशु, परन्तु प्रकाश बाबू यह आप इनसे पूछ सकते हैं कि मैंने इन्हें वहाँ पहुँचने से नहीं रोका।"

मिस केतकी—"आपके युक्ति-संगत उलहने के लिए मैं क्षमा-याचना करती हूँ प्रकाश बाबू! परन्तु ज्यों ही मैं आपके स्वागत के लिए चलने को तय्यार हुई त्यों ही एक बहुत ही गम्भीर केस (Serious case) सामने आगया। यदि समय पर न पहुँचती तो एक जच्चा और उसके बच्चे को प्राणों से हाथ धोने पड़ते। ऑपरेशन करके बच्चा बाहर निकालना पड़ा।"

प्रकाश बाबू—"सुना आपने प्रोफेसर साहब! हमारी क़द्र सुनी आपने। देखा हमारा मूल्यांकन। दो चार सौ रुपया फ़ीस........"

प्रकाश बाबू अभी पूरी बात कहने भी न पाये थे कि मिस केतकी कड़क कर बोल उठीं, "बस यही है आपके विचारों का माप-दण्ड? आपके जीवन में पैसे का मूल्य इतना अधिक हो चुका है कि आपकी आत्मा उसके नीचे दब गई है। साथ ही सूचना के लिए मैं आपको यह भी बतलादूं कि उस बीमार से मैंने एक पैसा भी फीस का नहीं लिया

और औषधि भी अपने पास से मुफ्त दी है।" इतना कहकर मिस केतकी अकड़ कर बैठ गईं।

प्रोफेसर सुधांशु—"हियर-हियर मिस केतकी! साधुवाद-साधुवाद! आपने बहुत सुन्दर कार्य किया। मानवता को कलंकित होने से बचा लिया। देखा आपने प्रकाश बाबू! मिस केतकी अपने जीवन की इन्हीं घटनाओं के कारण मेरी श्रद्धा की पात्री हैं। इसी को मैं असफल कलाकार का हाथ पकड़ कर सफल कलाकार का अपने साथ उन्नति के पथ पर ले जाना कहता हूँ। मिस केतकी के दृष्टिकोण का अब मानवीयकरण हो चुका है। आपने अपने व्यवसाय (Profession) को सिद्धान्त रूप से अपनाया है। केवल स्वार्थ्य-सिद्धि को आधार मानकर आप जीवन-पथ पर अग्रसर नहीं हुई हैं, बल्कि मानव-मात्र के हित में आपने संलग्न रहने की कल्पना की है।"

"बस रहने दीजिए इन सिद्धांतों की बौछारों को।" चिढ़ कर प्रकाश बाबू तनिक खीजते हुए बोले, "मिस केतकी की प्रशंसा करके आप जिस लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहते हैं वह कुछ मुझसे छिपा नहीं है। ऐसे सिद्धान्त मैं न जाने कितने पढ़ चुका हूँ; परन्तु जो जीवन का अटल सत्य है उसकी अवहेलना करके चलने वालों को मैं मूर्खों की श्रेणी में गिनता हूँ। जीवन में आने वाले अवसर का पूरा-पूरा लाभ न उठाना, भावुकता में बह जाना अथवा अपनी दुर्बलता को मानवता का आवरण देकर बड़प्पन में फूलकर कुप्पा हो जाना, यह मृग-तृष्णा है प्रोफेसर सुधांशु! धोखा है। मैं वस्तु की जड़ को पकड़ता हूँ, भले ही वह सूखी क्यों न हो? दूब की जड़ें बीस वर्ष तक चिड़िया के घोंसले में रखी रहने के पश्चात् भी हरी हो जाती हैं। आपकी दृष्टि पहुँचती है लाल-लाल कोंपलों पर। मै जड़ों पर अधिकार प्राप्त करना चाहता हूँ, बला से उनकी कोंपलें झुलस ही क्यों न गई हों। मरने वाला मरता रहेगा, जीने वाला जियेगा, परन्तु यदि मिस केतकी अमेरिका में मुझसे मिलने आई होतीं तो ·····"

"तो·······अच्छा रहने दीजिए अब इस टॉपिक को। विषय व्यर्थ के लिए बहुत गम्भीर हो उठा है। इतने दिन पश्चात आज भेंट हो रही है और उसमें भी यह व्यर्थ का तनाव बीच में आगया।" प्रोफेसर सुधांशु ने तनिक मन हलका करते हुए कहा।

मिस केतकी—"खिचाव की आप चिंता न करें प्रोफेसर साहब! प्रकाश बाबू की यह पुरानी बान है। घाव करने और फिर उनपर नमक छिड़कने में यह बहुत दक्ष हैं। बल्कि सत्य यह है कि इसमें इन्हें आनन्द आता है।"

प्रकाश बाबू—"यही बात है मिस केतकी! उल्टा चोर कोतवाल को डाँट रहा है। हृदय को छलनी बनाकर भी आप चाहती हैं कि उसमें से एक बूंद रक्त न गिरे। विचित्र उपहास है, परन्तु कीजिए आप जो करना चाहें, स्वतन्त्रता जो दे चुके हैं आपको।" और इतना कहकर प्रकाश बाबू गम्भीर हो उठे।

प्रोफेसर सुधांशु—"कितना मिठास है आप लोगों की इस कटुता में भी, कभी-कभी जब मैं इस पर विचार करता हूँ तो मिठास और कटुता का वह सम्मिश्रण सामने आता है कि जिसके स्वाद की परख करना मेरे लिए असम्भव हो उठता है। दोनों के नेत्रों की मधुर मुस्क्यान पर जब हलकी-हलकी व्यंग्य और झूठे क्रोध की रेखाएँ नृत्य करती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानो सरिता की स्वच्छन्द प्रवाहित होने वाली धाराएँ मन्द मलय-समीरण के प्यार भरे हलके थपेड़ों से तरंगित हो उठी हों; झाग भरे निर्झर की मद-भरी इठलाती हुई पतली-पतली धाराओं के समान दोनों के बदन का स्नायु-जाल झंकृत हो उठा है और हृतंत्री बजने लगती है। फिर मैं सोचता हूँ कि यदि यही बात है तो इतना सब कुछ प्रदर्शन क्यों? क्या मुझे दिखलाने के लिए?" और इतना कह कर प्रोफेसर सुधांशु इस प्रकार चुप हो गए मानो अथाह सागर में कुछ खोजने के लिए डुबकीमार डुबकी लगा गया हो।

मिस केतकी मुस्करा रही थीं परन्तु प्रकाश बाबू को इस उपहास में भी मिठास की अपेक्षा कड़वाहट अधिक प्रतीत हुई। उनके मन में बहुत सी बातें आई कि वह प्रोफेसर सुधांशु को फटकार बैठें, परन्तु उन्होंने यह सब व्यर्थ समझा। मन ने कहा 'क्या लाभ ? जब लाभ ही नहीं तो कह कर हल्के भी क्यों बनें ? स्त्री-जीवन की एक आवश्यकता अवश्य है, परन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति भी पैसे से की जा सकती है। तराजू के एक पलड़े पर रुपया रखकर दूसरे पर संसार की जो वस्तु भी तुम रखना चाहो उपलब्ध हो सकती है। केतकी की कृपा-कोर पर न्यौछावर होने वाले प्रोफेसर सुधांशु जीवन में हलके हो सकते है, स्त्री के चरणों पर अपनी श्रद्धा के पुष्प चढ़ा सकते हैं, अपनी पलकें बिछा सकते हैं, ललचाये हुए नेत्रों से इनके मुख-मण्डल की छवि निहार सकते हैं परन्तु हमारा निहारना, हमारे कार्य-क्रम का एक-एक वह व्यावहारिक अंग है कि जिससे जीवन अस्त-व्यस्त नहीं हो सकता। जीवन की अनेकों साधारण घटनाओं के समान स्त्री भी जीवन में आती है। स्त्री जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकती, और यह विचारते-विचारते प्रकाश बाबू को सूफियों की नारी के प्रेम में ईश्वर की कल्पना करने वाली भावना का स्मरण हो आया। वह बैठे-बैठे एक दम मलिक मोहम्मद जायसी जैसे सूफ़ी कवियों को मूर्ख समझ कर जोर से ठहाका मार कर हँस पड़े।

मिस केतकी—"आपके हँसने का कारण मैं समझ गई।" गम्भीर मुख-मुद्रा बनाते हुए कहा, "आपकी मुखाकृति को पढ़ लेना मैंने सीखा है। आपकी हँसी में नारी के उपहास की रूपरेखा झाँक रही है। मैंने डाक्टरी पास की है प्रकाश बाबू ! आपको सम्भवतः ज्ञात नहीं कि मैं आज तक कई सौ खोपड़ियाँ चीर-चीर कर देख चुकी हूँ। उनकी बनावट का ज्ञान प्राप्त करना और फिर उस बनावट वाले मरीजों की खोपड़ी से उनका मिलान करते हुए उनके मुख पर आने वाले हाव-भावों को परखना ही आजकल मेरी खोज (Study) का प्रधान विषय रहा

है। मस्तक की सिलवटें देखकर ही मैं रोग पहिचान लेती हूं।" और इतना कहकर डाक्टर केतकी ने प्रकाश बाबू से भी अधिक गंभीर हो जाने का प्रदर्शन किया।

प्रोफेसर सुधांशु—"लो दोनों ही पत्थर की शिला बन गये। अब मैं समझ ही नहीं पा रहा हूँ कि आप दोनों के गाम्भीर्य को किस प्रकार समाप्त करूँ।"

डाक्टर केतकी—"नहीं समझ पा रहे हैं तो सुनिए, मैं बतलाती हूँ गाम्भीर्य के तोड़ने का उपाय।" और इतना कहते हुए उन्होंने अपने बेग से संध्या की 'वेंगर्स', नई दिल्ली, में होने वाली पार्टी के निमन्त्रण-पत्र निकाल कर मेज पर रख दिये।

पार्टी प्रकाश बाबू के स्वागत में डाक्टर केतकी द्वारा दी गई थी। निमन्त्रण-पत्र देखकर प्रकाश बाबू के मुख पर हलकी सी मुस्क्यान की लहर दौड़ गई और प्रोफेसर सुधांशु तथा डाक्टर केतकी के नेत्रों ने भी उसे इस प्रकार पी लिया कि मानो कुछ था ही नहीं।

प्रकाश बाबू—"परन्तु यदि संध्या को भी डाक्टर केतकी के मार्ग में कोई जच्चा-बच्चा आ टपके, तब क्या होगा प्रोफेसर सुधांशु?"

डाक्टर केतकी—"तब मेरा दावत में आना नहीं हो सकेगा।" नेत्र ऊँचे करके कहा। "कहिए स्वीकार है निमन्त्रण?"

स्वीकृति दोनों ने दे दी।

[२]

और वास्तव में मिस केतकी संध्या को दावत में भाग न ले सकीं। सभी निमंत्रित सज्जन उपस्थित थे परन्तु मिस केतकी का कहीं पर पता नहीं था। प्रकाश बाबू बार-बार कमरे से बाहर निकल कर इधर उधर झाँकते और जीने के पास तक जाते परन्तु उन्हें फिर निराश होकर अकेले ही अन्दर लौट आना होता।

निमन्त्रित यों तो लगभग पच्चीस सज्जन थे इस दावत में परन्तु बैरिस्टर पुण्डरीकर, कविवर 'शून्य' जी, नियाज अहमद, रानी सुशीला कुमारी, सरदार लुहारा सिंह, सेठ पोद्दार, प्रकाश बाबू तथा प्रोफ़ेसर सुधांशु के नाम इनमें विशेष थे।

'शून्य' जी—"समाज जुड़ गया परन्तु कविता नहीं आई।" और यह कहते हुए कविवर ने अपने अस्त-व्यस्त बिखरे हुए बालों में बाँये हाथ की पाँचों उँगलियाँ डालकर उन्हें एक ओर को ढुलका दिया।

नियाज अहमद—"आपका इशारा शायद मिस केतकी की ओर है। दरअस्ल आपका तसव्वुर दाद के काबिल है। मैं शायरी नहीं जानता, लेकिन शायरों की सुहबत जरूर की है मैंने भी।" और उनके नेत्र ऊपर उठ कर सुशीला कुमारी के मुख-मंडल पर जा टिके।

रानी सुशीला कुमारी—"बनने का प्रयत्न न कीजिए नियाज अहमद साहब! मुझे मालूम है कि आप कर्मचारियों के आन्दोलनों में कूदने से पूर्व एक अच्छे प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे। आपकी कल्पना और भावना ने ही आपके हृदय को कर्मचारियों के जीवन से जकड़ कर बाँध दिया है। आपके हृदय, मस्तिष्क और कंठ की कविता कार्यरूप में साकार होकर बह निकली है।"

नियाज अहमद—"यह सब कुछ तो प्रोफेसर सुधांशु की महर-बानी है रानी सुशीला ! उन्होंने मेरे अरमानों पर हथौड़े की चोट मार कर एक दिन कहा—मूर्ख ! ले यह हथौड़ा सँभाल । कलम एक ओर रख दे । और जब मैं हथौड़ा सँभालने लगा तो उन्होंने एक कसकर तमाचा मेरे दाँए गाल पर रसीद किया । मेरी आँखें खुली की खुली रह गईं । काफी देर तक मैंने उन्हें बन्द करने की कोशिश की, लेकिन कामयाब न हो सका । तब वह बोले—तुम्हारा कलम ही हथौड़ा है । इसकी ताकत से तुम न जाने कितने हथौड़े चलवा सकते हो ।"

'शून्य' जी—"हथौड़ा और लेखनी ! मूर्ख ! नितांत मूर्ख । कहाँ कल्पना की सलौनी सौम्य मधुर मूर्ति और कहाँ हथौड़े का विकराल रूप ? यह सब कुछ कहकर नियाज अहमद साहब ! आपने कविता का अपमान किया है, कुण्ठित कर दिया है स्वरों को । मैं कहता हूँ वीणा रो उठेगी जब उसे यह पता चलेगा कि उसके तारों पर खेलने के लिए हथौड़े से लिखे हुए राग सधने को आ रहे हैं । बेचारे तबले की मरी हुई खाल पर यदि एक भी हथौड़े का प्रहार हो गया तो बस..........."

नियाज अहमद और रानी सुशीला यह सुनकर धीरे-धीरे मुस्करा दिये । एक मेज पर यह तीनों व्यक्ति बैठे इस प्रकार बातें कर रहे थे । दूसरी मेज पर बैरिस्टर पुण्डरीकर, सेठ पोद्दार और सरदार लुहारा सिंह जी बैठे अपनी गप्पें लगा रहे थे ।

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"भारत का भविष्य बहुत उज्ज्वल है सर-दार लुहारा सिंह जी ! प्रकाश बाबू जैसे योग्य व्यक्तियों के संकेत पर देश की उन्नति की रूप-रेखाएँ बनेंगी । क्या गजब का प्लानिंग (कोई कार्य करने की रूपरेखा) है इस व्यक्ति का कि आपको बस क्या बतलाऊं ? जो-जो स्कीमें इन्होंने मुझे अमेरिका से भेजी थीं, उनके फलीभूत होने पर देश स्वर्ग बन सकता है । बेरोजगारी देश में रह ही नहीं सकती । प्रत्येक व्यक्ति के पास सवारी को एक कार, संगीत

सुनने को एक रेडियो और ऐश तथा तकल्लुफ़ के सभी सामान उपलब्ध होंगे।

सेठ पोद्दार—"सच !"

सरदार लुहारा सिंह—"सच नहीं तो क्या झूठ ? एक-एक चीज़ वह लाजवाब तय्यार होगी कि लेने वाले का मन फुदक-फुदक कर रह जायगा।" मूंछ और दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा। "माल तय्यार होने में देर लगेगी परन्तु मेरे बेचने में देर नहीं हो सकती। अरे ! साहब ! यह तो माल होगा, माल; हमने तो कूड़ा बेच डाला, गले से गला और सड़े से सड़ा।" और इतना कहकर सरदार जी के सीने में उभार आ गया, बल आ गया। उन्होंने तनिक धीरे से अपनी पगड़ी के पेंच सँवारे और जो उसका फटा हुआ भाग था उसे दबाने के लिए उन्हें उठकर गुसलख़ाने के शीशे की शरण लेनी पड़ी।

सेठ पोद्दार—"क्यों नहीं, क्यों नहीं ? आपकी माल बेचने की दक्षता के विषय में तो मैं काफ़ी सुन चुका हूँ। मैंने सुना है कि आपने गत युद्ध के ठेकों का माल सप्लाई (सरकारी माल देने) करने में अपनी विशेष योग्यता का परिचय दिया था।"

सरदार लुहारा सिंह—"अब क्या पूछते हो सेठजी ! वह तो एक कहानी ही बनकर रह गई है। परन्तु वाह रे भारत के स्टाकिस्ट ! (माल एकत्रित करके रखने वाले।) तूने भी फौलाद का कलेजा पाया है। जितनी भी तुझे दाद दी जाय थोड़ी है। सेठजी ! सन् १९१८ के ताले लगे गोदामों का ताला सन् १९४४ में खोला गया। माल की तह ज्यों की त्यों लगी थीं परन्तु क्या मजाल जो तुम एक भी बनियान को साबुत उठालो। चौथाई दामों पर वह माल मोल लेकर मैंने चौगुने दाम पर सरकार को भिड़ाया। अपने साथ अपने मित्रों की भी कोठियाँ बनवादीं। साठ-साठ रुपये के इन्सपेक्टरों को भी कारें ख़रीदवादीं सेठजी ! परन्तु भाग्य की बात है कि आज दस रुपये महीने पर साइकिल किराये की लेकर चलना पड़ रहा है।"

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"कोई चिन्ता की बात नहीं सरदार साहब! प्रकाश बाबू की नई-नई स्कीमों में आपको अपनी योग्यता प्रदर्शित करने का पूरा-पूरा अवसर मिलेगा। आपकी योग्यता आपको फिर उसी उन्नति के उच्च शिखर पर ले जायगी। मेरी ओर भी तो देखो। मैंने विलायत में रहकर बैरिस्ट्री पास की है, परन्तु यहाँ का मुकदमे-बाज मेरी योग्यता का मूल्यांकन नहीं कर सकता।" और इसी समय विद्युत की गति से उन्होंने अपना कोट उतार कर सामने मेज पर रखते हुए कहा, "यह देखा आपने? इसमें कितनी टुक्कियाँ लगी हुई हैं। परन्तु इनकी मुझे कोई चिंता नहीं। मैंने जो जीवन का लक्ष्य बना लिया है मैं उससे फिसलने वाला नहीं। पैसा मेरे पास आयगा और फिर आयगा, झख मार कर आयगा। पैसे को आना ही होगा।" दाँत किट-किटाते हुए पुण्डरीकर ने बैठकर मेज पर हाथ मारते हुए कहा। बैरिस्टर पुण्डरीकर के इस बड़बड़ाने में बल था और थी एक प्रकार की लिप्सा जिसकी शक्ति के संकेत पर उनका जीवन संचालित होता था।

सेठ पोद्दार—"अवश्य आयगा। पैसा आप लोगों के पैर चूमेगा। आपका दास बनकर रहना होगा पैसे को।"

लुहारा सिंह जी—"अवश्य चूमेगा।"

पुण्डरीकर—"जीवन नीरस हो गया है। किसी भी खेल-तमाशे में गये एक लम्बा युग व्यतीत हो गया। आज जीवन में लगता है कि मानो उनसे हमारा कभी कोई सम्बन्ध ही नहीं था। बेचारी मिस केतकी इतनी भली हैं कि सप्ताह में एक दो बार उनके पास एक आध घंटा बैठकर चिंता-मुक्त कट जाता है, परन्तु अब तो उन्हें भी अव-काश नहीं मिलता। मैं भी चाहता हूँ कि मुझे भी अवकाश न मिले परन्तु........."

सरदार लुहारा सिंह—"अब अवकाश कहाँ मिलेगा आपको? कम्पनी के पूरे कागजात तय्यार करने और प्रकाश बाबू को कानूनी

अनुमतियाँ देने से ही छुट्टी नहीं होगी। कितना व्यस्त कार्य-क्रम रहेगा आपका, इसका आप अनुमान भी नहीं कर सकते।"

सेठ पोद्दार—"भगवान करे आप लोगों की आशाएँ फलीभूत हों। प्रकाश बाबू के कार्य में मैं भी अपना पूरा सहयोग दूंगा।"

"सच !" आश्चर्य और आशा भरे नेत्रों से बैरिस्टर पुण्डरीकर तथा सरदार लुहारा सिंह ने कहा।

"हाँ !" गम्भीरता पूर्वक पोद्दार जी ने उत्तर दिया।

तीसरी मेज पर प्रोफेसर सुधांशु तथा प्रकाश बाबू बैठे थे। प्रकाश बाबू की बेचैनी को देखकर प्रोफेसर सुधांशु ने मिस केतकी की कोठी पर फोन किया, परन्तु वह वहाँ से चल चुकी थीं।

प्रकाश बाबू—"उस समय चलकर तो उन्हें यहाँ अब तक पहुँच जाना चाहिए था।"

प्रोफेसर सुधांशु—"अनुमान तो मेरा भी यही है, परन्तु कहीं मार्ग में उन्हें कोई जच्चा-बच्चा न मिल गये हों ?" और इतना कह-कर वह धीरे से मुस्करा दिये।

प्रकाश बाबू—"यह कम्बख्त जच्चा-बच्चा भी हमारे ही लिए रह गये हैं। संसार भर के जीने का भला कौन ठेका ले सकता है प्रोफेसर सुधांशु ! इस प्रकार की भावुकता को मैं जीवन का हलकापन ही कह सकता हूँ। आपका क्या विचार है इसके विषय में ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"ठेके की विचार-धारा से जीवन को संचालित करना मैं जीवन का उपहास मानता हूँ प्रकाश बाबू ! कर्त्तव्य की कसौटी पर ही मैंने आज तक अपनी विचार-धारा और कृत्यों को कसने का प्रयत्न किया है और उसी पर यदि आप चाहें तो मैं आपकी इस समस्या को भी कस कर आप की बात का उत्तर दे सकता हूँ।"

प्रकाश बाबू कुछ कहने ही वाले थे कि इसी समय बैरे ने आकर सूचना दी—'प्रोफेसर सुधांशु का फोन है।' फ़ोन मिस केतकी का था। अभी-अभी वह दरियागंज से सीधी चलकर, दिल्ली दरवाजे से बाहर

निकल कर ज्यों ही इर्विन हस्पताल की ओर मुड़ने वाली सड़क पर मुड़ीं तो देखा दो कारें बुरी तरह से टकरा गई हैं और उनमें से एक कार के ड्राइवर को बहुत अधिक चोट आई। उसी ड्राइवर को अपनी कार में लेकर मिस केतकी इर्विन हस्पताल चली गईं और यह फोन उन्हों ने वहीं से किया था। जब यह सूचना प्रोफेसर सुधांशु ने आकर पार्टी के सदस्यों को दी तो सभी की भाव-भंगियों पर विचित्र-विचित्र प्रकार के परिवर्त्तन हुए। अब और अधिक देर किसी की प्रतीक्षा करना व्यर्थ था, इसलिए पार्टी की खाने पीने की कार्यवाही प्रारम्भ हो गई। प्रकाश बाबू ने चाय बनाई और प्रोफेसर सुधांशु ने पेस्ट्रियों की प्लेट उठाकर प्रकाश बाबू के सामने करते हुए कहा, "यह लीजिए।" प्रकाश बाबू ने पेस्ट्री उठा ली।

पेस्ट्री दाँत से काट कर हलके-हलके खाते हुए प्रकाश बाबू बोले, "प्रोफेसर सुधांशु! यह डाक्ट्री का पेशा भी कुछ नहीं। जिस कार्य का कोई समय नहीं, कोई निश्चय नहीं, वह क्या कार्य है?"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु मैं ऐसा नहीं मानता प्रकाश बाबू! मेरे विचार से संसार में किसी भी महान कार्य के होने का कोई समय नहीं, कोई निश्चय नहीं। समय की परिधि में आप कार्य की महानता को नहीं बाँध सकते। आज तक कोई नहीं बाँध पाया है और भविष्य में यह महानता बँध जायगी इसकी भी मुझे कोई सम्भावना प्रतीत नहीं होती।"

प्रकाश बाबू—"आप हर बात को दार्शनिक दृष्टिकोण से परखने का प्रयत्न करते हैं प्रोफेसर सुधांशु! परन्तु मैं संसार का व्यक्ति हूँ। तुम्हें दर्शन और दर्शन के सिद्धांतों की आवश्यकता है और मुझे संसार तथा संसार के साधनों की।"

प्रोफेसर सुधांशु ने चाय की प्याली मेज पर रख दी और सरल भाव से प्रकाश बाबू के मुख पर देखते हुए बोले, "यह बात नहीं है प्रकाश बाबू! मेरे और आपके विचारों के मूल में अन्तर है। मैं

कल्पना के संसार में अठखेलियाँ करने वाला कलाकार नहीं, मानव-जीवन को मैंने बहुत निकट से परखा है। मैं जीवित और अजीवित साधनों में भेद करना चाहता हूँ और तुम्हारा स्थूल दृष्टिकोण उस अन्तर को एक ही धरातल पर रखकर परखता हुआ चलता है। आप जीवन को मशीन बना देना चाहते हैं, आत्मा को कुण्ठित कर देना चाहते हैं। आप चाहते हैं कि उस मशीन में जो आय वह पिसता चला जाय, न चीखे, न पुकारे, न करहाये और समाप्त हो जाय। मेरे विचार से तो आपकी यह गूंगी दुनियाँ चलनी असम्भव है और इसमें उन्नति की भी मुझे कोई आशा प्रतीत नहीं होती।"

प्रकाश बाबू—"आपको सचमुच नहीं हो सकेगी प्रोफेसर सुधांशु ! परन्तु मैं इस लहलहाती हुई खेती को अपनी आँख से देखकर आया हूँ। जब वह चमत्कार मैं भारत में प्रस्तुत कर दूंगा तो आपको न केवल आशा ही प्रतीत होगी वरन् उसका प्रत्यक्ष्य उदाहरण भी देखने को मिलेगा। केवल बटन दबाने से इच्छाओं की पूर्ति होगी; बैठे-बैठे आँखों के सामने नृत्य और कानों में मधुर संगीत का संचार होगा। तब तो कहोगे न कि कुछ दुनियाँ बदली।"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु क्या व्यक्ति इतना अकर्मण्य हो जायगा कि वह बैठे-बैठे अपाहिजों की भाँति ही यह सब देखना पसंद करेगा ? प्रत्येक कार्य के लिए बटन दबाते-दबाते क्या उसका अँगूठा नहीं दुखने लगेगा और जिह्वा निरर्थक होकर जड़ नहीं हो जायगी ?" इतना कहकर वह जोर से खिल खिलाकर हँस पड़े जिससे सब का ध्यान इस ओर आकर्षित हो गया।

"तो यों कहिए कि आपके लिए यह सब संसार के नवीनतम आविष्कार उपहास की वस्तु हैं।" चाय की प्याली तनिक खड़खड़ाहट के साथ तश्तरी में रखते हुए प्रकाश बाबू बोले और उनके शब्दों में इस समय कुछ खीज के स्वर झंकृत हो उठे। "मैं आप से जो बातें कर रहा हूं उनमें जीवन का कठोरतम सत्य झाँक रहा है। एक दिन पृथ्वी को

गोल गेंदाकार घोषित करने वाले व्यक्ति पर भी संसार इसी प्रकार हँसा था जिस प्रकार आप मेरी बातें सुनकर हँस दिये, परन्तु सत्य को आँच नहीं। आज संसार के बच्चे भूगोल में पृथ्वी को गेंदाकार मानकर ही पढ़ते और ज्ञान प्राप्त करते हैं। मुझे विश्वास है कि संसार एक दिन आपके इस हँसने को भूल कर अपने पूर्वजों की मूर्खता घोपिल कर देगा। आप के सौभाग्य से मिस केतकी नहीं आईं अन्यथा इस विषय पर उन्हें अवश्य मेरे साथ सहमत होना पड़ता।" प्रकाश बाबू अपनी झोंक में कहते चले जा रहे थे।

प्रोफेसर सुधांशु ने प्रकाश बाबू की बात को ध्यान पूर्वक सुनकर गम्भीरता से कहा, "संसार के अनेकों मार्ग हैं प्रकाश बाबू! प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए जो मार्ग चुनता है उसे अधिकार है वह मार्ग चुनने का। आपने जो कुछ अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है उसे आप अपनी कल्पना और तर्क का आश्रय देकर नवीन अवश्य समझते हैं परन्तु उसके मूल में संसार की प्राचीन से प्राचीन एकतंत्रात्मक सत्ता का आभास मिलता है। संगठन का अर्थ हड़प कर जाना नहीं है। शक्ति का दुरुपयोग करने की प्रणाली पर मानव-जीवन को आधारित नहीं किया जा सकता। इसमें पोल का रह जाना अनिवार्य है। गत महा-युद्ध में रूस के अन्दर लेनिनग्रेड का युद्ध मेरी इस भावना का ज्वलंत उदाहरण है। वह जनता का बल था कि जिसने आविष्कारों को कुण्ठित कर दिया और अन्त में विजय मानव की ही हुई, विज्ञान की नहीं।"

प्रकाश बाबू—"परन्तु आज तो रूस भी वैज्ञानिक खोजों के पीछे दीवाना बना हुआ है। क्या आप इस बात को नहीं जानते?"

प्रोफेसर सुधांशु—"रूस पागल बना हुआ है या अमेरिका, हमारा इससे कोई सम्बन्ध नहीं। हमें आँखें बन्द करके किसी के पीछे नहीं दौड़ना है प्रकाश बाबू! हमें अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपना मार्ग स्वयं निर्धारित करना है। भले ही वह मार्ग आज ऊबड़ खाबड़ हो, कँकरीला पथरीला और कंटकपूर्ण हो, परन्तु वह हमारा है

और उसी मार्ग पर चलने में हमारे जीवन की वास्तविक समस्याएँ हमारे सम्मुख आँयगी । हमें उन समस्याओं के सुझाव प्रस्तुत करने होंगे और यही अपने समाज और राष्ट्र की सब से बड़ी सेवा है ।"

प्रकाश बाबू—"सेवा !" और वह प्रोफेसर सुधांशु के मुँह पर गम्भीरता पूर्वक ताक कर जोर से हँस दिये । "समाज और राष्ट्र के ठग सेवा शब्द का प्रयोग अपनी कुटिलता और बदमाशी पर आवरण डालने के लिए करते हैं । आप जैसे विद्वान सज्जन के मुख से यह शब्द सुनकर मुझे आज खेद हुआ । ढकोसले का खंडन करते हुए भी आप ढकोसले का शब्द प्रयोग करने में नहीं चूकते यह विडम्बना मैं नहीं समझ पाया ।"

प्रोफेसर सुधांश—"यदि यहाँ मैं आपके ही शब्दों को दुहराऊँ कि इसे आप नहीं समझ सकेंगे तो मैं समझता हूँ कुछ अनुचित नहीं होगा। कोई ट्रस्ट स्थापित करके उससे व्यापार करना बुरा नहीं, परन्तु कोई लिमिटेड कम्पनी बना कर उसे ट्रस्ट समझ लेना अपराध है। सेवा और पैसे की नाप-तौल में जो यह अन्तर आप पैदा करना चाहते हैं यह भारत के जीवन में विष के समान कार्य करेगा। बस इससे अधिक मैं और कुछ कहना उचित नहीं समझता ।"

प्रकाश बाबू ने भी व्यर्थ श्रब और मस्तिष्क को इस विषय पर रगड़ना व्यर्थ समझा और मुस्कराते हुए बोले, "कभी-कभी व्यक्ति को जिस बात का भय रहता है वह अवश्य सत्य हो जाती है ।

प्रोफेसर सुधांशु—"यही बात है; और विशेष रूप से मिस केतकी के विषय में तो यह धारणा शत-प्रति-शत सत्य ठहरती है ।"

प्रोफेसर सुधांशु ने यह शब्द कहे ही थे कि सामने से टेलिस्कोप हाथ में लिए मिस केतकी आती हुई दिखलाई दीं । उन्होंने तुरन्त मुस्कराते हुए कहा, "परन्तु आज आप अपनी इस बात को अपवाद-स्वरूप ग्रहण कर लीजिए क्योंकि मिस केतकी आ रही हैं ।"

मिस केतकी ने आकर पहिले तो सभी उपस्थित सज्जनों से अपनी

देरी के लिए क्षमा माँगी और फिर मदमाती हुई इठलन का जादू इधर-उधर बिखराती हुई प्रोफेसर सुधांशु वाली मेज पर जा पहुँचीं। दावत सजीव हो उठी और खाने वालों ने अनुभव किया कि वही रसगुल्ले, जो एक क्षण पूर्व फीके-फीके लग रहे थे, अब बहुत मीठे थे और वही समोसे, जिन में एक क्षण पूर्व नमक, मिर्च, मसाला कुछ भी नहीं था, इस समय उन्हें खाने से मुँह में पानी भर-भर आ रहा था।

कविवर 'शून्य' जी के अतृप्त नेत्रों को जीवन मिल गया और उनकी कल्पना बंधन-मुक्त होकर मिस केतकी के दाँए कपोल पर बल खाती हुई घुँघराली लट के एक पेंच से क्रीड़ा करने लगी। मिस केतकी ने अपने सभी निमंत्रित अतिथियों से एक-एक बात करने के पश्चात 'शून्य' जी की ओर निहारा और 'शून्य' जी की कविता मुखरित हो उठी। 'शून्य' जी समयोपयोगी कविता लिखने में बहुत दक्ष थे और जब कभी वह किसी पार्टी में निमंत्रित किये जाते थे तो कविता सुनाना वह अपना धर्म समझते थे।

'शून्य' जी दिल्ली की 'कवि-समाज' के वह रत्न थे जिन्हें कवि-समाज ने जब से खोज कर निकाला था, तब से उनमें प्रतिभा की दमक दिन प्रति दिन बढ़ती ही जा रही थी। दिल्ली और दिल्ली के आस-पास सम्मेलनों का एक बार तूफान मचा देने में आपने ख्याति प्राप्त की थी। उर्दू मुशायिरों के दाँत खट्टे कर देने का आपने प्रण किया था। हिन्दी-प्रेमियों ने भी इनका बड़ी ही उदारता से स्वागत किया और बच्चों के मुण्डन से लेकर पूर्णाहुति के अन्तिम संस्कार तक घरों में जितने भी उत्सव होते थे सभी का श्रीगणेश कवि-सम्मेलन और कवि-गोष्ठी द्वारा होने लगा।

मिस केतकी से आते ही 'शून्य' जी कविता सुनाने के मूड में आ गये। इनके आने से पूर्व भी कुछ उपस्थित सज्जनों ने कवि महोदय से कविता सुनाने का आग्रह किया था, परन्तु जब मूड ही नहीं आया तो बेचारा कलाकार क्या करे ? कविता आरम्भ हो गई और सभी ने

उसमें रस लिया, परन्तु प्रकाश बाबू को इस सब में छिछोरेपन के अतिरिक्त और कुछ दिखलाई नहीं दे रहा था। कविता लिखना और सुनना उनकी दृष्टि में दोनों ही व्यर्थ कार्य थे। कोई समय रहा होगा, जब कविता मानव-जीवन में उत्साह-वर्धिनी-कला मानी जाती रही होगी, परन्तु प्रकाश बाबू को तो इसमें कोई उत्साह की भावना दिखलाई नहीं देती। हाँ कविता के स्थान पर यदि व्यापार-सम्बन्धी कोई वार्ता छिड़ी होती और उसमें करोड़ दो करोड़ के लाभ का संकेत होता, तो अवश्य कुछ प्रोत्साहन की बात थी। बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारा सिंह के कानों में भी कोई किसी प्रकार का रस संचरित नहीं हो सका। कविता के ऊंचे-नीचे स्वरों से ऊब कर बैरिस्टर साहब ने अपनी बाल उड़ी चाँद पर हाथ फेरना प्रारम्भ कर दिया और सरदार जी ने अपने बालों में से छोटा हाथी दाँत का कंघा, जो उनके स्वर्ण-युग का एक-मात्र स्मृति-चिह्न उनके पास रह गया था, निकाल कर अपनी दाढ़ी और मूंछों के बालों को सँवारना आरम्भ किया।

इसी समय श्रोता-गण झूम-झूमकर साधुवाद-साधुवाद कह उठे और 'शून्य' जी ने भी मस्ती में झूम कर उस रस और चमत्कार से पूर्ण कविता के छन्द को अपनी विशेष कला के साथ दुबारा और तिबारा सुनाया। प्रोफेसर सुधांशु ने कविवर 'शून्य' जी की कविता में रस लेते हुए कहा, "भावना को कल्पना की तूलिका से चित्रित करके तुमने शब्दों में प्राण फूंक दिये हैं कवि! कुछ सुना तुमने केतकी! कितनी मधुर कल्पना है। नारी सौन्दर्य की प्रतिमा है, नारी कोमलता की कसौटी है, नारी कर्त्तव्य की अग्रगामिनी है, नारी मर्यादा की देवि है, नारी जीवन की जन्म-दात्री है और पुरुष को जो अधिकार प्राप्त हैं वह सब नारी के ही प्रदान किये हुए हैं। जब-जब पुरुष उन अधिकारों का दुरुपयोग करने का प्रयत्न करेगा तब-तब नारी शक्ति का रूप धारण करके उन अधिकारों को छीन लेगी। परन्तु शक्ति के इस विकराल रूप को शांति भी पुरुष के बाहुपाश में बँधकर ही प्राप्त होती है। तुम्हें विस्मरण

नहीं हुआ होगा वह शिव और पार्वती का सुन्दर चित्र जो उस दिन नई दिल्ली में होने वाली कला-प्रदर्शिनी में मैंने तुम्हें दिखलाया था ।"

"आपने खूब परखा प्रोफेसर साहब ! वास्तव में यह कविता मैंने उसी शिव और पार्वती के चित्र को देखने के पश्चात सौन्दर्य की प्रतिमा मिस केतकी को सम्मुख रखकर लिखी है ।" 'शून्य' जी कुछ प्रसन्न और कुछ लजाये से अपने में बल खाकर बोले ।

मिस केतकी के मुख-मंडल पर भी हलकी सी मुस्क्यान खेल उठी और वह धीरे से बोलीं, "परन्तु कवि ! आपकी कल्पना अधूरी ही रह गई । पार्वती के साथ शिव की पूर्ति न होने से कविता का आधा प्रभाव नष्ट हो गया ।"

और यह सत्य 'शून्य' जी को मानना ही पड़ा । प्रकाश बाबू, जो बहुत देर से चुपचाप बैठे थे, तनिक आँखों को मलते हुए बोले, "तो कविवर आपकी रचना अधूरी ही रही ।"

"जी हाँ ।" 'शून्य' जी ने सरलता पूर्वक उत्तर दिया; परन्तु तुरन्त ही तनिक सचेत होकर बोले, "अधूरी संसार की कोई वस्तु नहीं होती, क्योंकि पूर्ण आज तक कोई वस्तु संसार में नहीं हुई । और फिर कविता, कला, इनका तो कोई अन्त ही नहीं, कोई सीमा ही नहीं । कल्पना कला का पार नहीं पा सकती, फिर बुद्धि बेचारी का तो कहना ही क्या है ? आप लोग बुद्धि-वादी युग के कल पुर्जे कला की पूर्णता और अपूर्णता परखने का प्रयत्न न करें ।" और 'शून्य' जी ने कविता पर टीका करने का अधिकार प्रकाश बाबू के हाथ से इस प्रकार छीन लिया मानो उनकी दृष्टि में उन्हें कविता पर विचार-प्रदर्शन के लिए विधाता ने बनाया ही नहीं था ।

प्रकाश बाबू मन-ही-मन लज्जित से होकर खीज उठे और इस बेढंगे व्यक्ति के प्रति उनके हृदय में घृणा उत्पन्न हो गई । परन्तु कुछ कहना उचित नहीं समझा और इस प्रकार आज की पार्टी विविध विचार-धाराओं के साथ कुछ हलके-हलके वाद-विवादों और कविता-

पाठ के पश्चात समाप्त हुई। 'शून्य' जी का प्रकाश बाबू को दिया गया उत्तर कड़ा कुछ मिस केतकी को भी लगा परन्तु कवि अपनी दुनियाँ का सम्राट था, उससे कुछ कहा भी नही जा सकता था, इस लिए केवल अन्त मे मिस केतकी ने प्रकाश बाबू से क्षमा याचना ही कर ली।

"पहले ऐसे गधे बुलवा कर मेरा अपमान करा दिया और फिर आप क्षमा-याचना करने चली है।" एकांत में, मन में कसक लेकर, प्रकाश बाबू ने कहा। प्रकाश बाबू के इन शब्दों का कोई उत्तर देना मिस केतकी ने व्यर्थ समझा। जहाँ कोई मिस केतकी के अपने व्यवहार पर भी संदेह करने का प्रयत्न करे, वह करा करे, केतकी को उसकी किंचित मात्र भी चिंता नही। क्षमा उसने व्यवहार के नाते माँगी थी, अपनी किसी भूल के नाते नहीं।

[३]

प्रकाश बाबू मिस केतकी की ख्याति का प्रयोग अपने व्यापारिक लक्ष्य (Aim) की पूर्ति के लिए करना चाहते थे, परन्तु स्पष्ट रूप से इसका संकेत उन्होंने मिस केतकी को नहीं दिया। साधारण चातुर्य के साथ ही साथ व्यावहारिक कुशलता में भी आज मिस केतकी ने दक्ष्यता प्राप्त करली थी, इसी लिए प्रकाश बाबू की नियत का आभास उन्हें पहिले ही क्षण मिल गया था। मिस केतकी अपना या अपने प्रभाव का प्रयोग इस रूप में प्रकाश बाबू को प्रदान करने को उद्यत नहीं थी, परन्तु व्यावहारिकता के नाते अपनी इस नियत का भी आभास वह प्रकाश बाबू को देना नहीं चाहती थी। इस प्रकार प्रकाश बाबू और मिस केतकी का पारस्परिक सम्बन्ध प्रत्यक्ष और गुप्त विचार-धाराओं के अन्तर्गत जीवन में प्रवाहित हो चला।

"इसमें तुम्हारा दोष नहीं है केतकी ! मैं तो देखता हूँ कि आज के जीवन में राजनीति और राजनीति में भी कूटनीति प्रधान रूप से प्रश्रय पाती जा रही है। आज का समाज महामुनि चाणक्य का शिष्य बनकर मंत्री राक्षश पर विजय प्राप्त करने के संघर्ष में जुटा हुआ है, और ऐसा प्रतीत होता है कि मानो स्पष्ट और प्रत्यक्ष बात को सामने रखने का युग ही समाप्त हो चुका। स्पष्टता-वादी व्यक्ति को ही मूर्खता-वादी व्यक्ति मानकर बुद्धि-वादी समुदाय उस पर फब्तियाँ कसता है, उसका उपहास कर के अपने मन में प्रसन्न होता है, ऊपर से मुस्कराता और अन्दर से खिल-खिलाता है। ऐसी परिस्थिति में मैं आश्चर्य के साथ सोचने लगता हूं कि क्या वास्तव में स्पष्टता मूर्खता है, परन्तु मेरा मन इस विचार-धारा के प्रति विद्रोह करता है, सहानुभूति नहीं रखता।" प्रोफेसर सुधांसु बोले।

मिस केतकी—"स्पष्टवादिता को मैं एक गुण अवश्य मानती हूँ प्रोफेसर साहब ! और आपके विचारों से बहुत कुछ सहमत भी हूँ, परन्तु कभी-कभी जीवन में अस्पष्ठ विचार-धारा को भी लेकर चलना होता है । अस्पष्ट विचार-धारा सर्वदा निर्धारित ही नहीं होती, बल्कि कभी-कभी परिस्थितियों की अस्पष्टता के कारण स्वयं भी अस्पष्ट हो उठती है । ऐसी परिस्थिति में समय को विचार कर चुप रह जाना होता है और यों ही साधारणतया स्पष्ट बात कह कर किसी के हृदय को ठेस पहुँचाना उचित प्रतीत नहीं होता ।" और इतना कह कर मिस केतकी की मुख-मुद्रा गम्भीर हो उठी ।

प्रोफेसर सुधांशु—इन परिस्थितियों को व्यक्ति ने स्वयं बनाया है केतकी ! आज तक मानव समाज स्वयं अपना उपहास कर के मन में प्रसन्न होता रहा है। इसे मैं व्यक्ति के जीवन की निर्बलता मानता हूँ । इसी निर्बलता के फल स्वरूप जीवन में भ्रम और संदिग्ध भावनाओं का समावेश होता है ।······"

"यह मैं मानती हूं ।" बीच ही में मिस केतकी बोल उठीं, "परन्तु बुद्धि से मानते हुए भी कभी-कभी हृदय बुद्धि पर छा जाता है । हृदय कहता है कि विवेक ! यदि तू वास्तव में विवेक है तो दूसरे के हृदय को कष्ट पहुँचाने का साधन मत बन । ऐसा करने से तू इतने दिन पुरानी जीवन की स्नेह पूर्ण बाँधी हुई शृंखलाओं को तोड़ डालेगा । ऐसा करने से तुझे कुछ मिलने वाला नहीं और भविष्य के सम्बन्ध विच्छेद हो जाने से एक दूसरे का आश्रय समाप्त हो जायगा । और संबन्ध विच्छेद करना मैं किसी मूल्य पर भी नहीं चाहती······।"

"परन्तु स्पष्टवादिता का अर्थ आपने सम्बन्ध विच्छेद हो जाना कैसे लगा लिया ?" प्रोफेशर सुधाँशु ने पूछा ।

मिस केतकी "मेरा यह विचार केवल विचारों पर ही आधारित नहीं है, अनुभवों पर आधारित है प्रोफेसर साहब ! आपको मैं इसमें अपवाद स्वरूप ग्रहण करती हूँ । प्रकाश बाबू को ही आप देख लीजिए

उनका मस्तिष्क सर्वदा वक्र-गति के साथ ही चलता है। परन्तु इसमें उनका दोष भी मैं नहीं मानती। मस्तिष्क को वह वक्र-गति से चलाते हैं, यह मैं कभी भी मानने को उद्यत नहीं। जिसके मस्तिष्क का स्वाभाविक विकास जिस दिशा में हो रहा है उस पर प्रतिबन्ध लगाना प्रजातंत्र राज्य-व्यवस्था के अन्दर किसी की शक्ति में नहीं। आपकी विचार-धारा पर भी इसी प्रकार कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता। मैं तो अपना संबन्ध इन विचार-धाराओं के झमेले से ऊपर उठाकर केवल मानव और मानव के प्रति अपने कर्तव्य तक ही सीमित कर देना चाहती हूं। परन्तु आप लोग करने दें तब तो। आपके तो वाद-विवाद ही समाप्त नहीं होते। फिर आपसे तो वाद-विवाद करके तनिक मन हलका कर लेती हूँ, परन्तु प्रकाश बाबू तो आजकल एक ऐसे स्थिर जलाशय बनते जा रहे हैं कि जिस में ढेला फेंक कर मारो तो बस गुड़ुप, कुछ पता ही नहीं, अनेकों मेंडकों के समान वह ढेला भी उसके गर्त्त में समा जाता है। आजकल मैं देख रही हूं कि उनकी पाचन-शक्ति बहुत बढ़ती जा रही है।"

प्रोफेसर सुधांशु मुस्कराते-मुस्कराते एक दम जोर से हँस पड़े और उनका स्वर पूरे कमरे में छा गया। फिर धीरे से अपने को सँभालते हुए बोले, "जिस शक्ति का नामकरण तुमने 'पाचन-शक्ति' के रूप में किया है उसे मैं 'विनाशक-शक्ति' कहता हूं केतकी! बस यहीं पर मेरा तुम्हारा मतभेद 'पाचन' को मैं बुरा नहीं मानता और उससे समाज तथा राष्ट्र में बल आता है, परन्तु 'विनाशक-शक्ति' कभी उत्पादक नहीं हो सकती; और जो शक्ति उत्पादक नहीं है, वह समाज और राष्ट्र को कभी उन्नति की ओर नहीं ले जा सकती। प्रकाश बाबू अपनी इस शक्ति द्वारा राष्ट्र में समानता प्रतिपादित करने के लिए प्रयत्नशील हैं। तुम जानती हो उसके फल स्वरूप क्या होगा?"

मिस केतकी—"जानती हूँ—और क्या होगा यह न भी जानती सही, परन्तु यह अवश्य जानती हूँ कि आप क्या कहेंगे।"

इसी समय नियाज अहमद वहाँ आ गये और बातों की दिशा बदल गई। उन्होंने आते ही मुस्कराते हुए सूचना दी,"आपने कुछ सुना है प्रोफेसर साहब ?"

"क्या ? मैंने तो कुछ नहीं सुना।" जानने की उत्सुकता मुख पर लेकर प्रोफेसर साहब ने नियाज अहमद के मुख पर देखा, और मिस केतकी के भी कान नियाज अहमद के मुख से निकलने वाले शब्दों को सुनने के लिए उत्कंठित हो उठे।

नियाज अहमद—"प्रकाश बाबू ने चाँदनी चौक में सर्राफ़े के सामने, ऊपर की मंजिल में, मोती बाजार के दाँई ओर पच्चीस हजार रुपया पगड़ी देकर एक दफ्तर ले लिया है। बड़ा शानदार दफ्तर है। प्रकाश बाबू कल कह रहे थे कि पच्चीस हजार पगड़ी का दिया और अब पच्चीस हजार रुपया केवल उसके डेकोरेशन (सजावट) पर व्यय किया जायगा। प्रत्येक मेज पर प्रथक-प्रथक टेलीफोन होगा और प्रत्येक क्लर्क को एक-एक चपरासी दिया जायगा। हैड क्लर्कों के पास दो-दो चपरासी होंगे और सुपरिनटेंडेन्टों के पास तीन-तीन। इस दफ्तर का प्रत्येक कार्य विद्युत की गति से होगी। आफिस में पिन-ड्राप साइलेन्स (पूर्ण शांति) रहेगी। दफ्तर से बाहर ही सब कर्मचारियों को अपने चमड़े के जूते उतार कर रबर-सोल जूते पहिन लेने होंगे। जिस किसी भी कर्मचारी के किसी भी वस्त्र में एक शिकन होगी उसे एटेन्डेन्स (हाज़री) के रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने का अधिकार नहीं होगा और वह आफ़िस में प्रवेश नहीं कर सकेगा। आफिस के बाहर एक कमरे में बिजली की स्त्री रखी होगी, साबुन, तौलिया शीशा सभी कुछ वहाँ पर होगा। दफ़्तर में प्रवेश करने से पूर्व प्रत्येक कर्मचारी को वहाँ जाकर अपना सुधार करना होगा। यह मैं प्रकाश बाबू के ही शब्द दुहरा रहा हूँ प्रोफेसर साहब, और उनका विचार है कि यही टीप-टाप उनके व्यापार की आधार-शिला होगी।"

मिस केतकी—"परन्तु कब ? यह दफ्तर कब लिया प्रकाश बाबू ने ?"

नियाज अहमद—"कल संध्या को।"

"देखा आपने प्रोफेसर साहब ! मैंने कहा था न आपसे कि प्रकाश बाबू बहुत शीघ्र एक बड़ा कार्य करने वाले हैं।" मुख पर और हृदय में प्रसन्नता के भाव लेकर मिस केतकी ने कहा। मिस केतकी के मन में एक आशा की रंगीन लहर दौड़ गई।

"बड़ा कार्य करने वाले हैं, तो क्या हुआ ? किसी भी कार्य का बडा होना उस कार्य की महानता का द्योतक नहीं हो सकता। अजगर साँप कितना बडा होता है, परन्तु उससे संसार आज तक कुछ लाभ नहीं उठा सका। उल्टा वही अपने सामने आने वाली वस्तुओं को निगल जाता है।"

नियाज अहमद—"खूब कहा आपने प्रोफेसर साहब ! बहुत खूब। दरअसिल ठीक कहा। प्रकाश बाबू से जब कभी भी मेरी बातें हुई हैं तो मैंने उनके खयालातों के नजरिये में अजदहा की फुंक्कार को छुपा हुआ पाया है। वह शख्स जब किसी से बातें करता है तो उसकी ताकत को अपने में जज्ब कर लेने के लिए लपक कर उस पर हमला करने की कोशिस करता है।"

मिस केतकी—"आपका अनुमान ठीक है नियाज अहमद साहब ! परन्तु यह जो कुछ भी आप कह रहे हैं, यह सभी बातें प्रोफेसर सुधांशु में प्रकाश बाबू से किसी प्रकार कम नहीं, बल्कि अधिक ही हैं; यह मैं दावे के साथ कह सकती हूँ।" और यह कहने के पश्चात् मिस केतकी ने अपनी बात का समर्थन स्वयँ प्रोफेसर सुधांशु से कराना चाहा।

प्रोफेसर सुधांशु—"मेरे विचार से इस समय इस विषय पर यदि हम बात-चीत बन्द कर दें तो अच्छा रहेगा। तुम्हें एक सूचना देना चाहता था मिस केतकी ! परन्तु अभी तक भी डर रहा हूँ कि पता नहीं तुम उसका स्वागत करोगी या······।"

मिस केतकी—"वह सूचना देने की आपको आवश्यकता नहीं।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तब क्या तुम्हें मिल चुकी है वह सूचना ?"

मिस केतकी—"हाँ ! मैं आपके त्याग का स्वागत करती हूँ और आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मेरा और मेरी सुविधाओं का पूर्ण सहयोग आपको प्राप्त रहेगा। इससे अधिक मेरे पास और कुछ नहीं है प्रोफेसर सुधांशु !"

प्रोफेसर सुधांशु—"मैं तो डर रहा था मिस केतकी ! कि कहीं तुम मुझ पर 'संकुचित-बुद्धि' का लेबिल लगाकर फटकारें न डालने लगो। तुम्हारे स्वागत का बल पाकर मैं अपने स्वप्न को फलीभूत करने में अवश्य सफल हो सकूँगा। नियाज अहमद जैसे निस्वार्थ कार्य कर्त्ताओं और कुमारी सुशीला रानी जैसी देश-प्रेम की भावना से ओत-प्रोत महिलाओं का सहयोग मेरी योजनाओं में चमत्कार पैदा कर देगा। जीवन का वह सुख-स्वप्न जिसमें सहयोग के लिए स्थान है शोषण के लिए नहीं, साकार हो उठेगा। मेरे उस साकार सुख-स्वप्न को और भी रंगीन तथा भावनामय बनाने में मुझे कविवर 'शून्य' जी का सहयोग प्राप्त होगा। उनकी कविता मेरे निर्माण किये हुए समाज के जीवन से नीरसता का लोप करके सरसता का संचार करेगी, उत्साह और आशाओं के पुष्प खिलायेगी, प्रेम और सद्भावना की जागृति प्रदान करेगी, शांति और सुख का साम्राज्य स्थापित कर देगी। उस समाज में बुद्धि और शारीरिक शक्ति का संघर्ष न होकर दोनों के पारस्परिक सहयोग की भावना जाग्रत हो उठेगी।"

इसी समय कविवर 'शून्य' जी एक पर्चा हाथ में लिए झूमते हुए सामने आकर, बिना यह देखे और देखने की आवश्यकता समझे कि वहाँ पर क्या हो रहा है, कौन-कौन बैठे हैं और किस विषय पर बातें चल रही हैं, बोले, "प्रोफेसर साहब ! देखिए तो क्या लिख दिया आज मेरी लेखनी ने ? आज प्रातःकाल ही शौचालय में बैठे-बैठे एक कविता की पंक्ति भावना के स्वरों में झंकृत हो उठी और बस शौच से निवृत्त होना कठिन हो गया। तुरन्त बाहर आकर बिना हाथ धोये ही लेखनी उठा कर लिखना आरम्भ कर दिया। देखिए ! कैसी सजीव निर्माण की

भावना कल्पना की तूलिका ने चित्रित की है ।" और बिना यह प्रतीक्षा किये कि कोई सुनना चाहता है अथवा नहीं, कविता सुनानी प्रारम्भ कर दी ।

यह नये निर्माण का युग ।
गत पुरातन रूढ़ियों का
आ गया अवसान का युग ।
यह नये निर्माण का युग ।
द्वेष का अवसान समीप है ।
सहयोग के नव विटप कुसुमित हो चले,
जल उठा वह नव-प्रगति का दीप है
शिखा पर जिसकी शलभ हँस-हँस जले ।
आज श्रम-जीवी ! तुम्हारे
आ गया उत्थान का युग ।
यह नये निर्माण का युग ।

नियाज अहमद—"खूब कहा आपने शायर साहब ! खूब कहा । कमाल कर दिया आपने । क्या दाद दी जाय आपके कलाम की, बस जान फूंक दी है आपने अपनी शायरी में । प्रोफेसर सुधांशु की खयालाती दुनियाँ का क्या शानदार नक्शा तय्यार किया है आपने, कि बस......"

कविवर 'शून्य' जी—"प्रशंसनीय मेरी कविता नहीं है नियाज ! प्रशंसनीय तुम्हारी प्रखर बुद्धि है कि जिसके द्वारा तुमने कवि की आत्मा को परख लिया, कवि की भावना और प्रेरणा को खोज निकाला । कविता कामिनी का स्वागत वास्तव में आप जैसे हृदय व्यक्ति ही कर सकते हैं ! कविता रुपये की झंकार का नाम नहीं, कविता नवयुग की मधुर कल्पना है, प्रगति का अमिट संदेश है और प्रकाश-हीन अन्धकार की वह ज्योति है जो भूले भटके राही का पथ-प्रदर्शन करती है । दूसरों को मूर्ख बनाकर, उनकी आँखों में मिर्चें झोंक कर,

अन्धकार और अविद्या का लाभ उठाते हुए जीवन में स्वार्थ का आश्रय ग्रहण करके चलने वालों के पास हमारी कविता को समझने, परखने और रस-ग्रहण करने वाला हृदय कहाँ ?" और यह कहते हुए 'शून्य' जी ने अपने नेत्र आकाश पर अनिश्चित दूरी तक चले जाने के लिए फैला दिये।

प्रोफेसर सुधांशु ने कविवर 'शून्य' जी का खड़े होकर स्वागत किया और मिस केतकी तो अभी तक उनकी कविता की प्रथम पंक्ति को ही गुन-गुना रही थीं। उन्होंने कई बार होठों ही होठों में कहा—यह नये निर्माण का युग—वास्तव में आज समाज और सभ्यता के नव-निर्माण का युग आ गया है। पुराने स्वरों पर अलापने वाला संसार की प्रगति की दौड़ में पछड़ जायगा। और वह स्वाभाविक गम्भीरता पूर्वक बोलीं, "तुमने जिस प्रगति का संकेत अपनी कविता में किया है, वह वास्तव में सराहनीय है। मैंने कल प्रोफेसर सुधांशु से यही कहा था कि आगामी युग का नामकरण हम को श्रमजीवी-युग रखना होगा। क्योंकि भविष्य में जीवन की असमानताएँ भाग्य को दोषी ठहरा कर समाज में सहन नहीं की जा सकेंगी। संसार का जो राष्ट्र अपने मस्तक से यह असमानता का काला धब्बा धोकर साफ नहीं करेगा वह उच्च-वर्ग के राष्ट्रों की सभा सोसाइटियों में अपना प्रतिनिधि भेजने का अधिकारी नहीं गिना जायगा।"

प्रोफेसर सुधांशु—"कवि के प्रगति-संदेश का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ परन्तु यह प्रगति नेत्र बन्द कर के किसी के पीछे आत्मविस्मरण करके भागने और छलाँग लगाने वाली नहीं होनी चाहिए। हमें आगे अवश्य बढ़ना है, परन्तु अपनी शक्ति के बल पर। हमें औरों का सहयोग भी प्राप्त करना है, परन्तु अपनी स्वतंत्रता और अपने आत्म-सम्मान तथा संस्कृति का बलिदान देकर नहीं। हमें अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपना प्रगति-पथ स्वयं निर्धारित करना है। मार्ग में आने वाले बवंडरों के सम्मुख सीना खोल कर संघर्ष करते हुए पग

आगे बढ़ाना है......।"

कविवर 'शून्य' जी—"यही है मेरी कविता की आत्मा प्रोफेसर साहब ! मैं सच कहता हूँ कि यदि आप जैसे दो चार भी मेरी कविता की सूक्ष्म-भावनाओं को परखने वाले विचारक तथा समालोचक मिल जाँय तो बात की बात में नोबिल पुरस्कार को आपके चरणों में ला पटकूं । मेरी कविता की एक-एक कल्पना में न जाने कितने-कितने संसार नित्य बनते और बिगड़ते हैं ! परन्तु जाने भी दीजिये नोबिल पुरस्कार को । पुरस्कारों के पीछे दौड़ना बच्चों का काम है । हमारा कर्त्तव्य है संसार को प्रगति और कल्याण का संदेश देना।" इतना कहकर 'शून्य' जी अपने अस्त-व्यस्त सूखे बालों में उँगलियाँ घुमाते हुए मंत्र-मुग्ध से हो गये ।

नियाज अहमद—"क्या दाद दी जाय आपकी इस दरिया दिली और नाजुक खयाली की शायर साहब ! नोबिल प्राइज (पुरस्कार) आपके नजरिये में नाचीज है, और हिमाकत है उसके पीछे दौड़ना । आपके पास शायरी का खुदादाद इल्मोहुनर है जिसकी कद्र करने वाले न लखनऊ के नव्वाब ही रह गये हैं और न बहादुर पृथ्वीराज और शिवाजी का ही जमाना अब लौटने वाला है; लेकिन प्रोफेसर सुधांशु जैसे/इल्मोहुनर के पारखी आज भी जरूर हैं जो शायरी को पैसे पर न तौल कर काबलियत पर तौलते हैं । शायद 'शून्य' जी मैं उम्मीद करता हूँ कि एक दिन वह जरूर आयगा जब तुम्हारी शायरी हिन्दोस्तान के हर इन्सान की जबान पर नाच उठेगी !"

कविवर 'शून्य' जी—"मेरी कविता भारत-राष्ट्र की जन-वाणी बन जाय यही मेरी महत्त्वाकांक्षा है अहमद ! परन्तु कभी-कभी कवि होने के नाते जब मेरी लेखनी अधिक भावुक हो उठती है, हृदय सरसता से छलछला उठता है, तो मैं शृंगार की कविता लिखने पर विवश हो जाता हूँ । पता नहीं मिस केतकी ! आप मेरी उन कविताओं को मेरे जीवन का हलकापन, पगलापन या भोलापन कहती हैं या बस

कोरी मूर्खता मानकर हृदय में संतोष कर लेती हैं।" और इतना कह कर 'शून्य' जी ने मिस केतकी के मुख पर स्वाभाविक सरलता से एक बार देखा।

प्रोफेसर सुधांशु के मुख-मंडल पर मुस्क्यान खेल रही थी और नियाज अहमद टकटकी लगाये मिस केतकी के होठों की थिरकन को परखने का प्रयत्न कर रहे थे। कविवर 'शून्य' जी का इस प्रकार विषय बदल कर मिस केतकी से सीधा प्रश्न कर बैठना आज कोई नई बात नहीं थी, परन्तु फिर भी वह एक क्षण के लिए सकपका सी गई। तुरन्त ही अपने को सँभाल कर मुस्कराती हुई बोलीं, "आपको मूर्ख समझने और कहने की धृष्टता कोई मूर्ख व्यक्ति ही कर सकता है कवि ! क्या आप केतकी की गिनती मूर्खों की श्रेणी में किये बैठे हैं ?"

कविवर 'शून्य' जी—"बात यह नहीं है मिस केतकी ! परन्तु भावुकता के उद्रेक में कवि स्वयँ मूर्ख बन जाता है। वह अपने बचपन को लौटाकर उसके भोलेपन का प्रयोग भावना की सफलता के लिए करता है। उस परिस्थिति में उसकी कोमल-कल्पनाओं पर थोड़ा सा भी आघात हो जाने से उसकी वीणा के तार टूट जाते हैं और स्वर बिखरने लगते हैं। प्यार से सँजोई हुई मधुर-स्मृतियों के रंगीन खिलौने टप्प-टप्प करके कठोर भूमि पर गिर पड़ते हैं और टूट-फूट कर चकनाचूर हो जाते हैं।" कहते-कहते 'शून्य' जी रुक गये और सब ने देखा कि उनके नेत्रों से टप्प-टप्प आँसू की बूदें झर रही थीं।

मिस केतकी—"नारी की हृदय-हीनता से टकरा कर रो रहे हो कवि !"

कविवर 'शून्य' जी—"नारी की हृदय-हीनता से टकरा कर नहीं रो रहा केतकी ! मैं रो रहा हूँ अपनी कविता की अशक्तता पर।"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु इस अशक्तता ने तो तुम्हें सशक्त बनाया है कवि ! तुम्हारे जीवन की इसी टक्कर ने तुम्हें प्रगति की प्रेरणा

दी है।" और इतना कहकर कवि की झुकी हुई गर्दन को अपनी दो उँगलियाँ उसकी ठोड़ी के नीचे लगा कर ऊपर उठाते हुए बोले, "अभी घाव नया ही तो है, इसी लिए बहक जाते हो। घाव पर घाव खाते हुए जब जीवन-पथ पर अग्रसर होगे तब कविता मँजकर अपने में कसक और टीस का साम्राज्य स्थापित करेगी। अभी घाव हरा है, उस पर पपड़ी जमने दो, घाव भरने दो, दर्द मिटने दो, और उसे चिह्न बन जाने दो स्मृति की रेखाओं का, जिसे देखकर तुम मुस्कराओ, कविता फूट पड़े और स्वर बह निकलें। जब यह सब कर सकोगे तब समझूँगा कि मेरा कवि आज विजयी होकर आया है।"

और कविवर 'शून्य' जी बिना बैठे ही विजयी होकर लौटने की प्रतिज्ञा करके चले गये। मिस केतकी ने बैठने का बहुत आग्रह किया परन्तु 'शून्य' जी पर उस आग्रह का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

नियाज अहमद इस झमेले को बिलकुल कुछ न समझ सके और न ही उन्होंने उसे समझने में ही कोई दिलचस्पी ली। मिस केतकी का भी चिकित्सालय जाने का समय हो गया था, इस लिए उन्होंने भी प्रोफेसर साहब तथा नियाज अहमद से विदा ली।

[४]

रानी सुशीला कुमारी के हृदय का कोमलतम भाग कविवर 'शून्य' जी की कविता का निवास-स्थान था और वहाँ से उसे नोंच-नोंच कर फेंक देने का प्रयत्न करने पर भी वह उसमें सफल नहीं हो पाती थी। सच तो यह अवश्य था, कि प्रकाश बाबू के रंगीन स्वप्न कवि की कल्पना पर विजय प्राप्त कर चुके थे, परन्तु कवि और उसकी जीवन-दायिनी कविता की मीठी-मीठी कसक आप ही आप कभी-कभी हृतंत्री के तारों को झंकृत कर देती थी। एकान्त में बैठे-बैठे यों ही जीवन कुछ बज सा उठता था और कानों में ऐसा प्रतीत होता था कि मानो कोई मधुर रागनी अलाप-अलाप कर उसके निष्ठुर-व्यवहार पर स्नेह-भरे आँसू ढुलका रहा है। उसके कानों में टप्प-टप्प आँसुओं के भूमि पर गिरने और कण-कण में फूट कर पृथ्वी में विलीन हो जाने की आवाज आती थी। वह सुनती थी कि मानो कवि कह रहा है—'रानी! तूने जीवन ही बदल दिया। प्यार प्रदान करने से पूर्व ही यदि तुझे इस प्रकार प्यार से उऋण हो जाना था तो प्यार की झाँकी ही क्यों दिखलाई थी। तू जिस मृग-तृष्णा के पीछे पगली बनी, नेत्र बन्द किये, लपक रही है, वहाँ तुझे तृप्ति नहीं मिल सकेगी। परन्तु यदि तूने निश्चय ही कर लिया है तो मैं स्वार्थी बन कर तेरा निश्चय बदलना नहीं चाहता। तू यदि अपना मार्ग स्वयं निर्धारित करना चाहती है, तो कर, मैं तेरे मार्ग से हट जाता हूँ'—परन्तु कहाँ? हट कर भी कवि! तुम मार्ग से हटने का नाम नहीं लेते—रानी सुशीला ने धीरे से एकांत में कहा—मैं जितना तुमसे दूर भागने का प्रयत्न करती हूँ उतना ही तुम मुझे जकड़ते चले जा रहे हो। तुम मुझे सताना चाहते हो, यह मैं विश्वास नहीं कर सकती; परन्तु सताई मैं अवश्य जा रही हूँ।

कुमारी सुशीला के जीवन में भावुकता का प्राधान्य होने से किसी भी नवीनता की ओर उसका फिसल जाना हर समय सम्भव था। यही कारण था कि प्रोफेसर सुधांशु ने उसे योग्य और कर्मठ मान कर भी कभी अपने किसी ठोस कार्य-क्रम की रूप रेखा में स्थान नहीं दिया। परन्तु 'शून्य' जी ने उसे अपनी कल्पना की देवि मानकर कविता की आधार-शिला बनाया था। अब आधार-शिला के डाँवा-डोल होने पर कल्पना का सुदृढ़ दुर्ग ढह जाने की सम्भावना प्रतीत होने लगी; लेकिन ज्यों-ज्यों दुर्ग ढहना प्रारम्भ हुआ त्यों-त्यों हृतंत्री के तार झनझनाये और वीणा अनेकों स्वरों में मुखरित हो उठी। कहते हैं कवि टूटे हृदय की पुकार को ही कविता का सच्चा स्वरूप मानता है। कवि के हृदय में व्यापक वेदना ने जन्म लिया और लैनिन का व्यापक नियम—कर्मचारी-वर्ग में ज्यों-ज्यों भूख, प्यास और गरीबी वढ़ेगी त्यों-त्यों क्रांति का द्वार उन्मुक्त होगा—और 'शून्य' जी क्रांति के अग्रदूत बन कर शृङ्गार से राष्ट्र-उत्थान की ओर अग्रसर होकर देश के कर्णधार की कल्पनाओं से ओतः प्रोत एक नई दुनियाँ में विचरण करने लगे।

रानी सुशीला ने जब प्रकाश बाबू से उनकी अमेरिका-यात्रा के अनुभव सुने, और उनके भविष्य की रूप-रेखा पर गम्भीर दृष्टि से विचार किया, तो उसे भारत के प्राङ्गण में स्वर्ग उतरा हुआ दिखलाई दिया। "सुख का ही तो नाम स्वर्ग है।" प्रकाश बाबू ने गम्भीरता पूर्वक कहा। "सुख की स्थापना प्रोफेसर सुधांशु भी करना चाहते हैं और सुख की स्थापना मैं भी करना चाहता हूँ। लक्ष्य दोनों का एक है, केवल मार्ग में अन्तर है। वह प्राचीन काल की बैलगाड़ी पर बैठ कर ऊँघते हुए उस लक्ष्य की ओर अग्रसर होना चाहते हैं और मैं वायु-यान की सवारी करना उचित समझता हूँ। बतलाओ रानी! तुम किसके साथ यात्रा करोगी? इसमें संकोच करने से काम नहीं चलेगा। तुम्हें जो कुछ भी उत्तर देना है, वह वहुत स्पष्ट होना चाहिए।"

"जो जीवन में उन्नति की अधिक से अधिक सुविधाएँ मुझे प्रदान कर

सकेगा, मुझे उसके साथ चलना है।" रानी सुशीला ने गम्भीरता पूर्वक संकोच त्याग कर कहा।

"तब ठीक है। उस पागल कवि का साथ छोड़ दो। कवि को मैं मूर्ख समझता हूँ। जब और लोग अज्ञानी होते थे, तब दो चार अक्षर सीख कर गा बजा लेने वाले कवि को ज्ञानी मान लिया जाता था। आज के युग में जब सत्य कवि की कल्पना की उड़ानों से कहीं ऊँचा उड़ चुका है तो मैं नहीं समझता कि उस झूठ से अपना पल्ला बाँधकर व्यर्थ के लिए जीवन भर रगड़ते रहने में क्या लाभ है? सूखी रोटी खाते हुए मक्खन-मक्खन गाने से कभी भी रोटी चुपड़ी नहीं जा सकती, कभी भी दाल शाक में तरावट दिखलाई नहीं दे सकती। वहाँ तो तुम्हारे इन गोल गुलाबी गालों की लावण्यमय-यौवनावस्था भी चार दिन का ही आतिथ्य ग्रहण कर पायगी रानी! किसी भी वस्तु का स्थायित्व सुरक्षा चाहता है। जब स्पात के शहतीर और पत्थर के किले एक दिन मिट्टी हो जाते हैं तो बेचारा यौवन............"

और यौवन की कल्पना नेत्रों के सम्मुख आते ही रानी सुशीला कुमारी झूमकर इठलाती हुई सामने जाकर अपने सिर से ऊँचे आइने के सम्मुख खड़ी हो गई। प्रकाश बाबू ने समय को हाथ से खो देना सीखा ही नहीं था। गर्म लोहे पर चोट लगाना उन्हें खूब आता था। वह भी धीरे से उठकर सुशीला के पीछे जा खड़े हुए। और धीर-धीरे गम्भीर स्वर में बोले, "इतने यत्न से सँजोये और परमात्मा की विशेष सुकृपा से प्राप्त किये यौवन को इस प्रकार संसार की भट्टी में सुलगने के लिए झोंक देना मैं बुद्धिमानी नहीं समझता। आज का दिन कल और कल का दिन परसों नहीं आयगा रानी! कवि और गायक मैं तुम्हारे लिए जितने तुम चाहोगी खरीद कर ला दूंगा।"

कवि और गायक खरीदा जा सकता है परन्तु पैसा नहीं खरीदा जा सकता—रानी सुशीला ने मन में विचार किया।

प्रकाश बाबू ने धीरे से बार-बार उड़कर रानी की कुन्तल को

कपोलों से टकराते हुए रोक कर कहा, "हाँ, कह दो रानी ! मैं नहीं चाहता कि तुम व्यर्थ की भावुकता के झमेले में पड़कर जीवन की यौवन-कलिका को अपने ही हाथों से कुचल डालो। एक दिन की नादानी पर जीवन भर हाथ मलते हुए व्यक्ति मैंने जीवन में कम नहीं देखे हैं। मैं व्यापार का खिलाड़ी हूँ और जीवन में वह खेल खेलने जा रहा हूँ कि जिसके एक-एक दाव पर करोड़ों के वारे न्यारे होंगे।"

प्यार और चमत्कार के जादू पर धन का रंगीन आवरण चढ़ा कर प्रकाश बाबू ने कुमारी सुशीला रानी के मन को लुभा लिया और रानी सुशीला ने प्रकाश बाबू के विवाह-प्रस्ताव पर मौन हस्ताक्षर कर दिये।

एक दिन कविवर 'शून्य' जी के देखते-देखते यह विवाह सम्पन्न हो गया और सुशीला महलों की रानी बन गई। जीवन का रंग रूप बदल गया। जो रानी कल तक कर्मचारियों के प्रत्येक प्रस्ताव की समर्थक थी, उसे आज उनके हर प्रस्ताव में स्वार्थ्य और राष्ट्र की संकलित होती हुई पूंजी को खा-चाट कर नष्ट कर देने की बू आने लगी। प्रकाश बाबू उसके भाग्य-निर्माता के रूप में उसे दिखलाई देने लगे और मज-दूरों के भाग्य को कोरी कापी पर स्याह-सफेद कुछ भी लिख देने का उसे अधिकार मिल गया। प्रकाश बाबू की जो बातें उसे कल तक अमानुषिक प्रतीत होती थीं, वह आज नीति-युक्त और राष्ट्र-हित की गूढ़ विचार-धारा से सम्पन्न दिखलाई देने लगीं।

रानी सुशीला को आज भी कविवर 'शून्य' जी से मिलने तथा बातें करने की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। सुशीला का विवाह होने पर कवि-वर के हृदय को ठेस लगी अवश्य, परन्तु कवि ने उसे एक वीर योद्धा की भाँति सहन किया और एक दिन पश्चात् निर्भीकता पूर्वक प्रकाश बाबू की कोठी पर जा पहुँचा। कोठी के द्वार पर कुछ ठहर कर राह देखनी पड़ी, अन्दर जाने में बाधा अनुभव करके निराश लौट जाना चाहा, परन्तु इसी समय रानी सुशीला स्वयं सामने आकर एक चमत्कृत वेश-

भूषा में खड़ी हो गईं और होंठों से मन्द-मुस्कान बिखेर कर धीमे स्वर में बोली, "आओ कवि ! मै समझती थी कि तुम अब रूठ गये हो और सम्भवतः कभी नहीं आओगे; परन्तु मेरा अनुमान भ्रम सिद्ध हुआ, और तुम्हारे जीवन की महानता ने उसे हार दे डाली। मैं अपने विचारों में भी आ जाने वाली इस त्रुटि के लिए क्षमा-याचना करती हूँ।"

'शून्य' जी—"क्षमा-याचना ! परन्तु तुम्हें क्षमा प्रदान करने का अब मुझे अधिकार नहीं रहा रानी ! लोग मन्दिरों में जाते हैं, मैं यहाँ चला आया, लोग सम्भवतः याचना और कुछ प्राप्ति के लिए जाते हैं, परन्तु मैं केवल देखने भर के लिए आया हूं। तुम्हारे दर्शन न होने से मेरी कई कविताएँ दार्शनिक और विचार-प्रधान हो उठी हैं। परन्तु मै चाहता हूँ कि उनमें रस का संचार हो। मेरे मानस का रस उलीच कर तुम यहाँ आ छुपी हो............ जाने भी दो रानी ! मैं तुम्हें क्षमा नहीं कर सकूँगा, क्योंकि उसका मैं अधिकारी नहीं हूँ।"

रानी सुशीला—"तुम वास्तव में दार्शनिक बन गये हो कवि !"

कविवर 'शून्य' जी—"बन गया हूँ कहोगी रानी ! यह नहीं कहोगी कि बना दिया गया हूँ।" और इतना कहकर कवि ने अपने नेत्र नीले आकाश पर बिछाते हुए दृष्टि को अदृश्य पर टिका दिया। कवि की वेश-भूषा में पहिले से उतना ही अन्तर था जितना रानी सुशीला की अपनी वेश-भूषा में आ गया था; हाँ प्रगति की दिशाएँ दोनों की एक दूसरे से भिन्न थ[illegible] कवि के बालों ने सम्भवतः सप्ताहों से कंघे के दर्शन नहीं किये थे और दाढ़ी बनाने को तो शायद परेशानी मानकर कवि ने एक प्रकार से छोड़ ही दिया था। कुर्त्ता उन्होंने कई दिन से नहीं बदला था और शेरवानी की दशा से प्रतीत होता था कि कवि ने उसे पहिले-पहिले ही सोने का अभ्यास कर लिया था। हाथ की कलाई पर घड़ी बँधी अवश्य थी परन्तु उसे कूकने का कई दिन से अवकाश नहीं मिला था। जूतों के फीते कवि ने निकाल कर इस

लिए फेंक दिये थे कि उन्हें बार-बार बाँधना उनके लिए सम्भव नहीं था और बिना बाँधे मार्ग में एक फीता दूसरे पैर से दब जाने पर शायद कवि को कहीं सड़क पर लुढ़क जाना पड़ा था; जिसकी सूचना घुटने पर से फटा हुआ रक्त से भीगा पायजामा दे रहा था। यह जूता विशेष आग्रह करके रानी सुशीला ने ही खरीदवाया था।

कविवर 'शून्य' जी की यह दशा देखकर रानी सुशीला का हृदय हिल उठा और उसे अपने श्रृंगार पर स्वयं लज्जा प्रतीत होने लगी। अपने में ही बल खाती हुई रानी लज्जा के आवरण में नेत्रों को झाँपने का प्रयत्न करते हुए भी न मुस्करा पाकर धीरे से बोली—"मेरी दुर्बलताओं पर दया-दृष्टि डाल कर मुझे क्षमा कर दो कवि! परन्तु यह सत्य समझो कि मेरी आत्मा आज भी तुम्हारे ही चरणों में भटक रही है।"

कवि पागल की भाँति खिल-खिला कर हँस दिया और फिर एक दम गम्भीर बन कर बोला—"आत्मा! आत्मा तुम्हारे पास कहाँ रह गई है अब रानी! आत्मा के क्षेत्र से बाहर निकल कर अब तो तुम धन के परमात्मा की अङ्क में आत्मा का उपहास करने के लिए आ बैठी हो। जिस प्रकार परमात्मा आत्माओं का संसार रचकर उनके साथ खिलवाड़ करता है उसी प्रकार तुमने संसार में परमात्मा का लौकिक-प्रतिनिध चुन लिया है। अन्तर केवल इतना ही है कि यदि परमात्मा कोई चीज है तो वह सौदा नहीं करता और उसका लौकिक-प्रतिनिध सौदा पटाने में बहुत दक्ष्य है। देखो न तुम्हारे ही जीवन का सौदा उसने कितनी निपुणता से कर लिया। हम आज यही मानेंगे कि हमने तुम्हारे रूप को अमूल्य केवल इसी लिए कहा था कि हमारे पास उसे क्रय करने के लिए धन नहीं था।"

कवि के यह शब्द सुनकर रानी सुशीला तनिक गम्भीर होकर बोली—"आप जो चाहें मान सकते हैं, परन्तु कोरी कल्पना पर भी तो संसार नहीं चलता। आपके विचारों और आपकी भावनाओं का मैंने

सर्वदा हृदय से स्वागत किया है, परन्तु जीवन की कठोर परिस्थितियों के सामने आ जाने पर भावनाओं में बहना मैंने उचित नहीं समझा।"

कविवर 'शून्य' जी—"तुमने जो कुछ भी किया, मैं उसका स्वागत करता हूँ रानी ! परन्तु मैं आज यहाँ प्रेमालाप करने के लिए नहीं आया। मैं तो आया था प्रकाश बाबू........... ।"

रानी सुशीला—"तब ठीक है। वह प्रोफेसर सुधांशु से बातचीत कर रहे हैं, सामने उस कमरे में बैठे हुए। आप भी वहाँ जा सकते हैं।

कविवर 'शून्य' जी—"मेरे वहाँ जाने से पूर्व तुम्हें वहाँ से आज्ञा प्राप्त करनी होगी रानी ! क्यों कि यह एक व्यापारी का मकान है, जहाँ पर कुछ गुप्त-रहस्यों के विषय में भी बातें चल सकती हैं। बिना आज्ञा वहाँ पहुँच कर मैं उनके गुप्त-परामर्श में बाधा उपस्थित नहीं करना चाहता।"

आज अपनी कोठी पर 'शून्य' जी को इस प्रकार आया देख कर प्रकाश बाबू ने सूचना पाते ही स्वयँ आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और सम्मान-पूर्वक बैठक में लिवा ले गये। कवि का भावुक हृदय प्रकाश बाबू का यह स्वागत देखकर पानी का तरह बह गया—मानो उसका कोई भी अपराध उनसे हुआ ही नहीं।

प्रकाश बाबू की बैठक को देखकर कविवर दंग रह गये। कला की मानो यह बैठक एक प्रदर्शिनी थी। पाँचों ललित कलाओं के सुन्दरतम नमूने वहाँ पर उपलब्ध थे। संगीत साजों के रूप में अमुखरित दशा के अन्दर सुप्त पड़ा विश्राम कर रहा था। चारों ओर दीवारों पर विश्व के प्रख्यात चित्रकारों के चित्र लगे हुए थे। कमरे का वायु-मंडल इत्र और अगर की मँहक से परिपूर्ण था। कवि को आदर के साथ मखमली सोफे पर प्रोफेसर सुधांश के ठीक सामने बिठलाते हुए प्रकाश बाबू आनंद पूर्वक बोले, "कविवर 'शून्य' जी को आज अपनी कुटिया पर देख कर मुझे कितनी हार्दिक प्रसन्नता हो रही है इसका वर्णन

करने में मेरी वाणी असमर्थ्य है। कितना सुन्दर होता यदि मैंने भी सरस्वती का आशीर्दवाद लेकर जन्म लिया होता ?"

कविवर 'शून्य' जी—"आपके सम्मान का मैं स्वागत करता हूँ प्रकाश बाबू ! आज अकस्मात ही आपके यहाँ आकर मैंने जो कला का चमत्कार देखा उससे मेरे हृदय को वास्तविक प्रसन्नता हुई। कला की सजीव प्रतिमा रानी सुशीला कुमारी को अपने हृदय में निमंत्रण देकर आपने कला की महान सेवा की है। मैं उस के लिए आपको बधाई देता हूँ।"

प्रोफेसर सुधांशु कवि की भावुकता पर मुस्कराते हुए बोले—"कवि ! तुम वास्तव में कवि हो। भारत की राजधानी के कलाकारों को तुम पर अभिमान होना चाहिए। शारीरिक रोगियों की सहायता के लिए भारतीय रक्त-कोष (Blood-bank) में रक्त-दान करने वाले तो बहुत मिल जाँयगे परन्तु हृदय-रोग से पीड़ितों के लिए हृदय-कोष (Heart-bank) में हृदय-दान करने वाले तुम प्रथम ही 'दान करण' का अवतार लेकर आये हो। कला के क्षेत्र में तुम्हारा यह त्याग सराहनीय है।"

प्रकाश बाबू—"वास्तव में सराहनीय है।" मन ही मन प्रोफेसर सुधांशु के गम्भीर व्यंग्य पर कटते हुए ऊपर से प्रसन्नता पूर्वक मुस्करा कर बोले।

कविवर 'शून्य' जी के पास इन व्यंग्य-भावनाओं से उलझने का न तो समय ही था और न आवश्यकता ही। प्रकाश बाबू की बैठक ने उन्हें इतना वशीभूत कर लिया था कि वह बिना प्रोफेसर सुधांशु से एक शब्द भी बोले उमर खय्याम के चित्र के नीचे जा खड़े हुए और झूम-झूम कर गुन-गुनाते हुए बोले "प्रकाश बाबू ! चित्रकार ने चित्र सुन्दर बनाया है, प्राण फूंक दिये हैं।"

प्रकाश बाबू—"यह चित्र मैंने दो हजार रुपये का मोल लिया था। 'शून्य' जी ! उस प्रदर्शिनी में यही चित्र सबसे सुन्दर था। केवल ईर्षा

चित्र के पीछे मैंने वहाँ पर दो राजकुमारों को वह करारी मात दी कि बच्चा जीवन भर याद रखेंगे।"

कविवर 'शून्य' जी—"क्यों क्या अटक बैठे थे बीच में ?"

प्रकाश बाबू—"जी हाँ ; परन्तु टक्कर प्रकाश से थी, जिसने चित्रकार की रङ्ग भरने की कूची, रङ्ग घोलने की तशतरियाँ और कोरे चित्र बनाने के कागजों से लगाकर तय्यार किये हुए सब चित्रों के मुँह माँगे दाम देकर कार के सामान रखने वाले पीछे के बक्से में रखा कर ताला लगा दिया। दाम नकद चुकता किया था 'शून्य' जी !"

कविवर 'शून्य' जी—"क्यों नहीं, क्यों नहीं ?"

प्रोफेसर सुधांशु अकेले चुप चाप बैठ रह गए और प्रकाश बाबू कविवर 'शून्य' जी को अपनी बैठक की विशेष कारीगरी दिखलाने में तल्लीन हो गये। यह बैठक एक अजायब-घर के रूप में प्रकाश बाबू ने तय्यार की थी, जिसका प्रभाव न केवल कविवर 'शून्य' जी पर ही पड रहा था वरन् प्रत्येक दिशा के विचारक को प्रभावित करने की सामग्री इसमें उपलब्ध थी। इस सामग्री को किस आगंतुक के सम्मुख किस प्रकार रखना चाहिए इस कला में प्रकाश बाबू बहुत निपुण थे।

इस नए पंछी को प्रकाश बाबू के जाल में फंसा हुआ छोड़ कर प्रोफेसर सुधांशु धीरे से एक ओर का पर्दा उठाकर खिसक लिए। बाहर पोर्टिगो में खड़ी रानी सुशीला ने प्रोफेसर साहब को आदर पूर्वक प्रणाम करते हुए पूछा, "आप जा रहे हैं ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"हाँ सुशीला ! मुझे कुछ आवश्यक कार्य से जाना है।"

रानी सुशीला—"और कविवर 'शून्य' जी ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"उन्हें अभी कुछ समय और लगेगा। प्रथम बार आये हैं। प्रकाश बाबू से आज खूब घुट रही है।"

रानी सुशीला—"सच !"

प्रोफेसर सुधांशु—"सच नहीं तो तुम झाँक कर देख लो। कला-

प्रदर्शिनी का निरीक्षिण हो रहा है ।"

इतना कहकर प्रोफेसर साहब चले गए और रानी सुशीला बाहर लॉन में चली आई । संध्या ढल रही थी, सूर्य की अंतिम लालिमा रात्रि के अन्धकार में विलीन हुआ चाहती थी । सड़क की बत्तियाँ यकायक इसी समय झम-झमा उठीं और रानी सुशीला ने भी माली से कोठी के सामने वाली बत्ती को प्रकाशित करने के लिए आदेश दिया । प्रकाश बाबू कविवर 'शून्य' जी का इस प्रकार स्वागत करेंगे इसकी रानी सुशीला को स्वप्न में भी आशा नहीं थी । रानी का भारी हृदय हलका हो गया और मन में प्रकाश बाबू के प्रति आज प्रथम बार मीठी-मीठी श्रद्धा ने जन्म लिया । कविवर 'शन्य' जी का स्वागत स्वयं रानी सुशीला का स्वागत था, सम्मान था और यह वह मधुर प्यार की कल्पना थी जिसमें आत्म-विस्मरण और आत्म-समपर्ण झाँक रहा था ।

[५]

प्रोफेसर सुधांशु प्रकाश बाबू की कोठी से चल कर सीधे अपने मकान पर जाना चाहते थे। उन्हें मार्ग में ही नियाज अहमद मिल गए। नियाज अहमद इस समय सीधे महरौली से चले आ रहे थे। वहाँ की सूचना देते हुए बोले, "सड़क के दाँई ओर के सब प्लाट बिक चुके हैं। किसी महानुभाव ने कोई बहुत बड़ा कराखाना वहाँ लगाने और अपनी नई योजनाओं द्वारा उसके आस पास में नई बस्ती बसाने का आयोजन किया है।"

"चलो कोई बात नहीं, परन्तु बाँई ओर का भू-भाग भी तो खाली पड़ा है। आप वहीं पर एक प्लाट ले डालिए। सड़क के बाँई ओर एक ऊबड़-खाबड़ सी बस्ती बसी हुई है, कच्चे मकानों की। उसी के अन्दर या कहीं आस-पास में कोई स्थान ले लीजिए। हम लोग वहाँ रहकर उसी बस्ती को सुधार लेंगे और उसे नया रूप देकर वहाँ के रहने वालों में शिक्षा का प्रचार करेंगे। एक दिन हम उसी गन्दी बस्ती को स्वर्ग बना लेंगे नियाज !"

"जरूर बना लेंगे प्रोफेसर साहब ! आपके सम्मिलित प्रयोगों की योजना उस उजाड़ बस्ती में प्राण फूंक देगी, उसके खंडहरों को सुन्दर और सुव्यवस्थित कमरों में तबदील कर देगी ,उस बस्ती के रहने वालों के मुख-मंडल पर उड़ने वाली हवाइयों को काफूर बना कर एक नवीन क्रांति और आभा से अच्छादित कर देगी, गलियों में आवारा घूमने वाले बच्चों को कतारें बनाकर स्कूलों में बिठला देगी, गाँव की सड़ी-व्यवस्था को स्वच्छ-वातावरण में बदल देगी—तब क्यों न स्वर्ग बन जायगी वह बस्ती ?" आशा भरे स्वर में नियाज अहमद ने प्रोफेसर सुधांशु के मुख पर दृष्टि डलते हुए कहा।

"निश्चित रूप से यही होगा नियाज अहमद ! तुम वहीं पर एक प्लाट ले डालो ।" और यह निश्चम हो गया कि प्लाट वहीं पर लेना है । इस प्रकार बातें करते हुए प्रकाश बाबू के विषय में बातों की धारा चल पड़ी । कविवर 'शून्य' जी किस प्रकार प्रकाश बाबू के अजायब-घर की कला-प्रदर्शनी देख कर रीझ उठे, उसका कच्चा-चिट्ठा प्रोफेसर साहब ने नियाज अहमद के सामने उपस्थित किया और फिर दोनों खूब जोर से ठहाका मार कर हँस दिये ।

यह हँसी का बंधन प्रोफेसर साहब की कोठी के द्वार में प्रवेश करने के पश्चात ही खुला था, जहाँ मिस केतकी पहिले से बैठी आपकी राह देख रही थीं । इतनी वेग पूर्ण हँसी सुनकर बैठक से बाहर निकलते हुए बोलीं—"आखिर मैं भी तो सुनूँ इस विकराल हँसी का क्या कारण है ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"अरे ! केतकी ! तुम यहाँ बैठी हो । लो अच्छा ही हुआ । वरना हमें अभी-अभी तुम्हारे पास आना था ।"

मिस केतकी—"क्यों ? क्या कोई विशेष बात है ?"

प्रोफेसर साहब—"विशेष बात क्या ? नियाज अहमद साहब को महरौली वाली सड़क पर हवाई जहाज के अड्डे से दो मील आगे चल कर दाँई ओर की भूमि में एक प्लाट लेने के लिए भेजा था, परन्तु ज्ञात हुआ कि उधर का तो समस्त भू-भाग किसी महाशय ने ले लिया है । वहाँ पर वह कोई बड़ा मिल लगाने वाले हैं । इस लिए हमने विचार किया है कि ठीक उसके सामने सड़क के बाँई ओर जो एक बस्ती है, उसी में एक प्लाट ले लिया जाय ।"

मिस केतकी—"परन्तु वह बस्ती तो बहुत गन्दी है और उसके आस-पास का वायु-मंडल भी स्वास्थ्य-प्रद नहीं है । पानी के कच्चे तालाब इतने गन्दे हैं कि वहाँ बारह महीने मलेरिया फैला रहता है ।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तब क्या हुआ ? तुम डाक्टरनी होकर यह सब कह रही हो मिस केतकी ! स्वच्छता और गंदगी तो हम लोगों के

हाथ की वस्तु है। क्या हम परिश्रम करके उस गन्दगी को दूर नहीं कर सकते ?"

नियाज अहमद—"क्यों नहीं कर सकते ? हम उस स्थान को सफाई के विचार से बहुत सुथरा बना देंगे। उस बस्ती के बच्चे-बच्चे को हम सफाई के काम पर जुटा देंगे और चन्द दिन में ही आप देखेंगी कि उस गन्दी बस्ती का रूप रङ्ग बदल जायगा मिस केतकी।"

मिस केतकी—"परन्तु यह सब आप कर सकेंगे ? आपको पूर्ण विश्वास है इसका ? बिना पैसे के मैंने योजनाओं को कागज के टुकड़ों पर ही नाच कर रह जाते हुए देखा है। समस्याएँ धन के अभाव में सुधरने से स्थान पर उलटी और उलझ कर रह जाती हैं। क्या आपने कभी अनुभव नहीं किया प्रोफेसर साहब इस बात का ?" और इतना कहकर मिस केतकी बहुत गम्भीर हो गईं।

प्रोफेसर सुधांशु—"देखा क्यों नहीं है मिस केतकी ! परन्तु साहस और सुव्यवस्था को कभी-कभी धनाभाव से दो हाथ करने में विजयी भी होते देखा है। अभाव एक तुलनात्मक (Comparative) टर्म है जिसकी निश्चित परिधि बाँधना असम्भव है। यह बढ़ाने से बढ़ती और घटाने से घट भी सकती है। अभी उस दिन आपने देखा था कि वहाँ रात्रि में कोई साधन न होने पर भी मैंने अपनी आधी धोती फाड़ कर उस बच्चे के शव को लेजाने के लिए दी थी। समय कभी-कभी इस प्रकार भी निकालना होता है और बाजे गाजों के साथ मुर्दों पर बीस-बीस शाल दुशाले लदे हुए आप नित्य ही देखती हैं। मानव-जीवन के संचालन में यह मैं नहीं कहता कि धन अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं रखता, परन्तु इतना भी मैं अवश्य मानता हूं कि व्यक्ति धन पैदा करने की क्षमता अपने में रखता है धन व्यक्ति को पैदा नहीं करता।"

नियाज अहमद—"यह खूब कहा प्रोफेसर साहब आपने ! मैं दाद देता हूँ आपके खयालातों की। क्या बुलन्दी है आपके खयालात में। इन्सान की जरूरत का खाका खींच दिया आपने। दरअसिल रुपये

को जो अहमियत इन रुपये वालों ने दे डाली है वह नहीं मिलनी चाहिए और इन्सान को जमूरियत का झंडा बुलन्द करके इन्सानियत के लिए यह अहमियत रुपये से छीन लेनी चाहिए, झपट लेनी चाहिए और रुपये को सिर्फ रोजगार के एक साधन तक ही महदूद कर देना चाहिए। रुपया हमारी इन्सानियत पर छा गया है, रुपये ने हमारी तहजीब को खरीदने का बीड़ा उठाया हुआ है, रुपये ने हमारे आपसी प्यार और मुहब्बत को दुश्मनी और चाल बाजियों में बदल दिया है...नहीं-नहीं प्रोफेसर साहब! इसे नहीं चलने दिया जायगा। मैं जी जान से आपकी योजनाओं पर जुट कर एक नई दुनियां का खाका तय्यार करूँगा जिसमें सब बराबर के हकूक लेकर एक दूसरे की तरक्की के लिए महनत करेंगे। क्या खूब ढाँचा तय्यार किया है आपने अपने उस नये समाज का?"

मिस केतकी—"केवल वायु-मंडल में दुर्ग बनाने से काम नहीं चल जाता है नियाज भय्या! मैं देख रही हूं कि आप लोग कोरी बातें ही बनाना जानते हैं और दूसरी ओर प्रकाश बाबू अपनी ठोस योजनाओं के साथ एक तूफान की तरह उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहे हैं।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तुम सत्य कह रही हो मिस केतकी! मेरे विचार से सड़क के दाँई ओर वाला समस्त भू-भाग प्रकाश बाबू ने ही लिया है। यह और भी अच्छा हुआ। अब तो मुझे निश्चित रूप से टूटी-फूटी बस्ती में अपनी योजनाओं का विकास करना है। धन के अभाव में मैं दाँई ओर वाला भू-भाग नहीं ले सका, परन्तु मेरे न लेना अच्छा ही हुआ। कम से कम उस बस्ती का तो अन्त होने से बच गया। यदि मैंने दाँई ओर का भू-भाग ले लिया होता तो हो सकता था प्रकाश बाबू बाँई ओर का भू-भाग लेकर उस बस्ती को उजाड़ डालते।" और इतरा कहकर प्रोफेसर सुधांशु यकायक गम्भीर हो उठे। उनके मस्तक पर सिलवटें बल खाने लगीं और नेत्र बठक की

छत पर फैल गये। वह बिलकुल मौन थे।

इस समय तीनों व्यक्ति बैठक में जाकर कुर्सियों पर बैठ चुके थे। एक दो क्षण ही बैठे हुए हुए थे कि प्रोफेसर सुधांशु जैसे स्वप्न जाग्रत होते हुए बोले—"गाड़ी लाई हो मिस केतकी !"

मिस केतकी—"अवश्य लाई हूँ।"

प्रोफेसर सुधांशु—"दे सकोगी एक घंटे के लिए ?"

मिस केतकी—"केवल एक घंटे के लिए ?" मुस्कराते हुए केतकी ने कहा और तुरन्त ही तीनों व्यक्ति उठकर खड़े हो गए। मिस केतकी अपनी डिस्पेंसरी (चिकित्सालय) पर उतर गई और नियाज अहमद तथा प्रोफेसर सुधांसु कार लेकर महरौली को ओर प्रस्थान कर गये।

केतकी अपने रोगियों को देख कर बैठी ही थी कि प्रकाश बाबू की कार सामने आकर रुकी और कार से प्रकाश बाबू कविवर 'शून्य' जी को साथ लेकर उतर पड़े। मिस केतकी ने दोनों का खड़ेहोकर स्वागत किया और फिर तीनों बैठ गये। एक क्षण तीनों के शान्त रहने के पश्चात प्रकाश बाबू बोले, "मिस केतकी ! तुम्हें यह जान कर प्रसन्नता होगी कि कविवर 'शून्य' जी की रचनाओं के प्रकाशन के लिए मैंने बीस हजार रुपया देने का निश्चय किया है।"

केतकी—"बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर प्रकाश बाबू ! मैं आपके इस शुभ-कार्य की सराहना करती हूँ। ऐसा करके आपने कविवर 'शून्य'जी पर ही उपकार नहीं किया, वरन् कला की महान सेवा की है। इससे आपको ख्याति प्राप्त होगी।"

कविवर 'शून्य' जी—"अवश्य होगी मिस केतकी ! मैं ऐसे दानी पुरुष की प्रशंसा में एक कविता लिखूंगा।" मुख-मुद्रा पर अथाह प्रसन्नता लाते हुए बोले, "मेरा एक बार यह विचार हो चला था कि रीति-कालीन नरेशों का देहावसान होने के पश्चात भारत में कला के पारखियों ने जन्म लेना ही बन्द कर दिया है, परन्तु आज प्रकाश बाबू की

उदारता देख कर तो मेरा कवि-हृदय गद्-गद हो उठा है। आज जीवन के अणु-अणु से तरंगित होने वाली प्रसन्नता की सुकुमार लहरियों का वर्णन मैं तुम्हारे सम्मुख नहीं कर सकता। प्रकाश बाबू मुझे कला की साक्षात प्रतिमा के रूप में दृष्ठिगोचर हो रहे हैं। मैं तो आज परख पाया हूं मिस केतकी! कि आपके जीवन में परम पिता परमात्मा ने व्यापार और कला का कितना सुन्दर सामंजस्य स्थापित कर दिया है। विभव की अनूठी शक्तियों ने सौंदर्य, पुन्य और लक्ष्मी को एक ही स्थान पर लाकर गठबन्धित कया है। तुम देखोगी कि एक दिन भारत को गर्व होगा अपनी इस महान विभूति पर।"

केतकी—"क्यों नहीं ?" मुस्कराते हुए बोलीं। "प्रकाश बाबू ने आज वास्तव में कलात्मक-चमत्कार प्रदर्शित किया है। अपना बना लेने की आपकी कला सराहनीय है। मैं समझती हूँ कि आपने कविवर 'शून्य' जी को यह रुपय भेंट कर दिया होगा।" और इतना कह कर केतकी कटु व्यंग्य के साथ अपने दाँतों में ऊपर का होंट काटते हुए मुस्कराती-मुस्कराती रुक गईं।

'शून्य' जी का इस हलके व्यंग्य से कोई सम्बन्ध नहीं था। जीवन की साधारण घटनाओं के प्रति उदासीन रहना वह अपनी कला का एक अङ्ग समझते थे। जिस समय से प्रकाश बाबू ने पाँच हजार रुपया आपकी रचनाओं के प्रकाशन के लिए घोषित किया था, उस समय से 'शून्य, जी का मस्तिष्क एक से एक नवीन योजना की तरंगों में आलोड़ित हो रहा था। शेखचिल्ली की भाँति आपने आशाओं के वह किले अपने मस्तिष्क में निर्मित कर लिए थे कि जिनमें बैठकर वह जीवन भर सुख तथा चैन की बंसरी बजाया करेंगे और कविता देवी का आवाहन करके मंत्र-मुग्ध होकर स्वर्ग का आनंद ले सकेंगे; सुन्दर प्रकाशन का आश्रय पाकर उनकी प्रतिभा को चार चाँद लग जाँयगे और...

इसी समय प्रकाश बाबू ने गम्भीरता पूर्वक कहा—"हमने श्रीयुत कविवर 'शून्य' जी के नाम से एक ट्रस्ट स्थापित करने का निश्चय

किया है और उस ट्रस्ट में ही यह बीस हजार रुपया भी जमा कर दिया गया है।"

"ट्रस्ट में !" एक दम पके हुए आम के समान कठोर भूमि पर गिरने के पश्चात् आशाओं के घुले हुए चकनाचूर भेजे को सँभालते हुए चकित दृष्टि से प्रकाश बाबू के सम्मुख 'शून्य' जी बोले।

"हाँ कविवर 'शून्य' जी ! इस प्रकार यह पाँच हजार रुपया आपकी स्थायी सम्पत्ति बन जायगा और आपको इससे मासिक आय होती रहेगी।" गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू ने कहा।

"अर्थात् ! यह पाँच हजार रुपया अपनी एक जेब से निकाल कर दूसरी जेब में डालने की कलात्मक क्रिया द्वारा आपने मुझे जीवन भर के लिए अपना दास बना लिया।" एक दम त्यौरी बदल कर खड़े होते हुए 'शून्य' जी बोले। "अब समझा मैं आपकी चाल को प्रकाश बाबू ! मुझे आपका रुपया नहीं चाहिए। मैं आपकी प्रशंसा में कोई कविता-वविता नहीं लिखूंगा !" और इतना कह कर 'शून्य' जी गर्मी में वहाँ से खड़े होकर बाहर चले गये। मिस केतकी ने भी उन्हें रोकने का प्रयत्न किया परन्तु विचारों के बवंडरों में छटपटाता हुआ उनका मस्तिष्क सम्भवतः मिस केतकी की बातों की ओर ध्यान ही न दे सका।

"कवि क्या है, पूरा काठ का उल्लू है मिस केतकी ! मैंने तो सोचा था कि चलो एक शगल रहेगा और इस बेचारे को भी सौ पचास रुपया मासिक की आय हो जाया करेगी। परन्तु पाँच हजार रुपये की रकम इस प्रकार एक मूर्ख को अनोत्पादक (unproductive) रूप में केवल खा-चाटने के लिए तो नहीं सौंपी जा सकती। आपका क्या विचार है इस सम्बन्ध में मिस केतकी ?" और उत्तर पाने की आशा में केतकी के मुख-मंडल पर निहारा।

केतकी की बिखरी हुई घुँघुराली लटों में प्रकाश बाबू के नेत्र उलझ गये और एक क्षण के अंदर ही उनके मस्तिष्क से कविवर 'शून्य'

जी इस प्रकार विदा हो गये कि मानो वह कभी वहाँ आये ही नहीं थे। केतकी के गले में पड़ा हुआ टेलिस्कोप इस समय उनके सौंदर्य में किसी आभूषण से भी अधिक वृद्धि कर रहा था। इसी समय प्रकाश बाबू की दृष्टि केतकी की नाक में पहनी हुई एक लोंग पर पड़ी और वह यकायक कह बैठे, "यह लोंग तुम्हारे पास कहाँ से आई केतकी !"

केतकी—"क्यों ? क्या कोई विशेष बात है इसके विषय में ?"

प्रकाश बाबू और ध्यान से देख कर बोले—"परन्तु यह तो पुख-राज है। हीरे की लोंग लौटा कर पुखराज की लोंग पहिनना आपको शोभा नहीं देता मिस केतकी !"

केतकी—"जाने दीजिए इन बातों को प्रकाश बाबू ! अब यह बातें पुरानी हो चुकीं।" और इतना कहकर मिस केतकी ने एक गहरा श्वाँस लिया। प्रकाश बाबू भी चुप थे, मंत्र-मुग्ध। कुछ देर दोनों इसी प्रकार मौन बैठे रह कर उठ खड़े हुए और फिर प्रकाश बाबू की कार में जा बैठे। प्रकाश बाबू ने कार चलानी आरम्भ कर दी और अभी तक भी यह दोनों उसी प्रकार मौन थे।

[६]

प्रोफेसर सुधांशु को स्थान बहुत पसंद आया और उन्होंने गाँव के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को बुलाकर वहाँ एक बच्चों का स्कूल खोलने का प्रस्ताव उनके सम्मुख रखा। प्रोफेसर साहब को यह लोग गाँव की चौपाल पर ले गये, जो गाँव के बीचों बीच स्थित थी। चौपाल का मकान एक कच्चा दुकड़िया था, जिसमें शहतीरों के स्थान पर दो खजूर के वृक्ष काटकर गाँव वालों ने लगा लिये थे। इस दुकड़िये के सामने एक चबूतरा था जिसपर नीम का घिनका वृक्ष लगा हुआ था और उसकी छाया इतनी शीतल थी कि उस मार्ग से निकलने वाला राही गर्मी के दिनों में दो क्षण वहाँ विश्राम करने के लिए अवश्य लालायित हो उठता था। चौपाल के इसी चबूतरे के एक किनारे पर एक छोटी सी प्याऊ लगी थी और दूसरी ओर दो कंडे (उपले) सिलग रहे थे, सम्भवतः हुक्का पीने वालों के लिए।

प्रोफेसर साहब तथा नियाज अहमदक का वहाँ पर स्वागत बड़े आकर्षक ढंग से किया गया और एक बूढ़ा तो अपने घर से दो गिलास शर्बत के भी बनाकर ले आया। शर्बत इत्यादि पीकर बहुत देर तक गाँव के आदमियों से बात चीत होती रहीं और फिर प्रोफेसर साहब ने उन सबको साथ लेकर गाँव को घूम कर देखा। प्रोफेसर साहब के बच्चों का स्कूल खोलने के प्रस्ताव का किसी ने भी विरोध नहीं किया और जब उन्हें यह पता चला कि प्रोफेसर साहब इस स्कूल के साथ ही साथ वहाँ पर एक दवाखाना भी खोलना चाहते है तब तो गाँव वालों की बाँछें खिल गईं। उनकी प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा और सब ने मिलकर गाँव की चौपाल का अधिकार बिना किसी संकोच के प्रोफेसर साहब को दे दिया।

प्रोफेसर साहब की आज की यह यात्रा कितनी सफल रही, इसका और इसके भविष्य का अनुमान केवल प्रोफेसर साहब ही लगा सकते थे। जिस समय यह इस गाँव से लौट रहे थे तो इनकी मुख-मुद्रा पर प्रसन्नता छाई हुई थी और गाँव वाले स्वप्न के समान इनके मुख-मंडल को निहार रहे थे। उन्हें तो विश्वास हो ही नहीं रहा था कि कहाँ तक प्रोफेसर साहब के आश्वासन सत्य हो सकते हैं, परन्तु नियाज अहमद भी अपने विचारों के विषय में संदिग्ध थे। केवल प्रोफेसर सुधांशु ही इस समय एक ऐसे व्यक्ति थे जिनके मस्तिष्क में संदिग्ध विचार-धारा के लिए कोई स्थान नहीं था।

जिस समय प्रोफेसर साहब तथा नियाज अहमद मिस केतकी की डिस्पेंसरी (दवाईखाना) पर पहुँचे तो वह वहाँ नहीं थीं। कम्पाउन्डर से ज्ञात हुआ कि वह प्रकाश बाबू के साथ उन्हीं की कार में अभी पच्चीस मिनट हुए कहीं चली गई है। नियाज अहमद यहीं से विदा हो लिए और प्रोफेसर साहब कार यहीं पर छोड़ कर अपने मकान की ओर प्रस्थान कर गये। प्रोफेसर साहब का मस्तिष्क आज समस्याओं से भरा पुरा था और उस गाँव के भविष्य की सम्पूर्ण रूप-रेखा वह निश्चित कर चुके थे। यह सत्य था कि उनके पास पैसा नहीं था परन्तु नियाज अहमद जैसा साथी उनके पास था। कविवर 'शून्य' जी तथा रानी सुशीला के पथ-भृष्ट हो जाने का उन्हें खेद अवश्य था परन्तु मिस केतकी के विषय में अब कुछ आशा-किरणों के प्रकाशमान होने की सम्भावना उन्हें निश्चित होने लगी थी।

प्रोफेसर सुधांशु इस सत्य से अपरिचित नहीं थे कि मिस केतकी प्रकाश बाबू को प्रेम करती हैं और प्रकाश बाबू के भी हृदय में उनके लिए कहीं न कहीं कुछ कोमल स्थान अवश्य है, परन्तु रानी सुशीला से विवाह हो जाने वाली घटना ऐसी थी कि जिसका प्रभाव केतकी पर स्थायी रूप से पड़ना चाहिए। फिर आज इस समय कम्पाउन्डर से यह सूचना पाकर कि मिस केतकी प्रकाश बाबू की ही कार में उनके

साथ कहीं गई हैं, उनका ध्यान विचलित हो उठा। ग्राम की समस्याएँ केतकी के चरित्र-विश्लेषण में विलीन होने लगीं और वह ग्राम्य-समस्याओं तथा सम्मिलित योजनाओं पर विचार करते करते नारी के चरित्र पर विचार करने लगे।

'रानी सुशीला को ही ले लो। कैसा विचित्र परिवर्त्तन है ? मानो किसी ने जादू कर दिया। कल्पना और भावना के क्षेत्र में विचरण करने वाली बालिका का मन एक दम ठनाठन-झनाझन चाँदी के टुकड़ों की झंकार सुनने के लिए लालायित हो उठा। जिसे कल तक हृदय प्यार करता था उसी से आज सम्बन्ध विच्छेद करके·········और कवि ! वह तो बिलकुल ही विचित्र निकला। उस पर तो आज दया आने लगी है मुझे।'

इसी प्रकार के विचारों में निमग्न प्रोफेसर सुधांशु जब अपने मकान पर पहुँचे तो कविवर 'शून्य' जी वहाँ पहिले से ही विराजमान थे। प्रोफेसर साहब को देखकर खड़े होते हुए, हाथ जोड़ कर बोले, क्षमा-याचना करता हूं प्रोफेसर साहब ! बस सत्य समझिए कि मैं उस धूर्त्त के जाल में फँसता-फँसता किसी प्रकार बच निकला। न जाने किस प्रकार मेरी विलुप्त चेतना-शक्ति एक दम जाग्रत हो उठी और मेरे सम्मुख जो गढ़ा वह प्रकाश बाबू खोदने जा रहे थे, वह मुझे दिखलाई दे गया।"

प्रोफेसर सुधांशु—"कुछ जानूं भी तो कि क्या धूर्त्ता हुई आपके साथ ? क्यों कि मैं प्रकाश बाबू को धूर्त्त नहीं मानता।"

'शून्य' जी—"नहीं मानते !" क्रोध में आग-बबूला होकर कविवर आँखों की त्यौरी चढ़ाते हुए अपने सूखे घुँघराले बालों वाले सिर को मदारी की भाँति घुमा कर बोले, "आप नही मान सकते।"

"ऐसा क्यों ?" प्रोफेसर साहब ने मुस्कराते हुए पूछा।

"आप दोनों की मित्रता जो बीच में आकर अटक जाती है, इस लिए।" उसी प्रकार क्रोध में भर कर कविवर बोले।

प्रोफेसर सुधांशु—"कारण यह नहीं है कविवर! कारण मैं बतलाता हूँ। तुम कवि बनने से पूर्व व्यक्ति बनना सीखो। पहिले व्यक्तित्व का विकास होने दो और व्यक्तित्व का विकास हो जाने पर अपना हलकापन तुम स्वयं जान सकोगे। दूसरे को धूर्त कहने से पूर्व व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने गिरहबान में मुँह डाल कर एक बार कम से कम निहार ले।"

यह बात प्रोफेसर सुधांशु ने इतनी सरलता पूर्वक कही कि कविवर 'शून्य' जी का सिर ऊपर को नहीं उठ सका। उनके नेत्रों से अश्रु-धारा बह चली। प्रोफेसर साहब ने प्रेम तथा सहानुभूति के साथ उन्हें संवार कर एक कुर्सीदार मूढ़े पर बिठलाया और अपनी जेब से रूमाल निकाल कर उनके गीले नेत्र पोंछ दिये।

प्रोफेसर साहब कविवर 'शून्य' जी को इस प्रकार बैठक में बिठला कर अन्दर कपड़े उतारने चले गये। अभी कपड़े उतार कर बाहर आये ही थे कि मकान के सामने प्रकाश बाबू की कार आकर रुकी और उस में से मिस केतकी तथा प्रकाश बाबू उतर कर बैठक में आ गये। कवि-वर 'शून्य' जी उसी प्रकार स्थिर रूप से पत्थर की शिला के समान बैठे रहे, हाँ इस समय उन्होंने गुन-गुनाना कुछ अवश्य प्रारम्भ कर दिया था।

तीनों के बैठते ही बातों का विषय प्रकाश बाबू की नवीन योजनाएँ बना। बहस प्रारम्भ हो गई। मतभेद दोनों का सैद्धांतिक था, पारस्परिक नहीं। कविवर 'शून्य' जी बीच-बीच में कभी-कभी गर्दन उठा कर स्वप्न से जाग्रत से होते हुए कुछ सुन लेते थे, परन्तु मिस केतकी बातों में विशेष रस ले रही थीं। उसके नेत्र उसी के मुख पर टिक कर स्थिर हो जाते थे जो बोलना प्रारम्भ करता था और दोनों के अकाट्य प्रमाणों के साथ बह कर वह अपनी कोई भी निश्चित विचार-धारा बनाने में असमर्थ थी।

प्रकाश बाबू—"मानव और पशु में केवल यही अन्तर है प्रोफेसर

सुधांशु कि मानव के पास मस्तिष्क है और आप जानते हैं आज तक मानव ने अपने इस मस्तिष्क का प्रयोग किस दिशा में किया है ? उसने आज तक अपने मस्तिष्क की शक्ति द्वारा दानव-शक्ति पर विजय प्राप्त की है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"आपकी यह बात मैं मानता हूँ।"

प्रकाश बाबू—"यदि आप मानते हैं तो मेरी बात सत्य हो जाती है। मानव के मस्तिष्क की यही विशेष शक्ति संसार के सभी व्यक्तियों में भी समान रूप से नहीं पाई जाती। इस लिए यही असमानता समाज की असमानताओं का कारण बन कर समाज में श्रेणियों की स्थापना करती है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"क्या स्वार्थ-पूर्ण बातें करते हो प्रकाश बाबू ! जिस असमानता को तुम मस्तिष्क की विशेषता कहते हो वही मानव के चरित्र की वह संकुचित मनोवृति है जिसके फल-स्वरूप संसार में आज तक संघर्ष और युद्ध का बीजारोपण होता आया है। जिसे तुम व्यक्ति के विकास की विशेष प्रगति मानते हो उसे मैं दूसरों के अधिकारों को हड़प कर डाका डालना मात्र समझता हूँ। मानव की शक्तियों का यह वह दुरुपयोग है कि जिसका मानव-जीवन की शांति से कोई सम्बन्ध नहीं।"

प्रकाश बाबू प्रोफेसर सुधांशु की यह बात सुन कर मुस्करा दिये और व्यंग्य पूर्ण दृष्टि उनके मुख पर डाल कर धीरे से अपना मुख घुमा कर केतकी के नेत्रों में नेत्र डाल कर बोले—"यह अशक्त का सशक्त के प्रति विष उगलना प्रकृति के आदि से बना रहा है और अन्त तक बना रहेगा, परन्तु उन्नति के पथ पर चलने वाला राही कभी इसकी चिन्ता नहीं करता। उदाहरण-स्वरूप आप समझ लीजिए कि मुझे कोई कार्य करना है या और भी स्पष्ट रूप से समझ लीजिए कि मैंने महरौली को जाने वाली सड़क पर हवाई जहाज के अड्डे से दो मील आगे चलकर दाँई ओर की सब भूमि खरीद ली है। वहाँ मुझे एक

मिल लगाना है और वहीं पर अपने रहने के लिए एक आलीशान महल बनाना है। इस समस्त निर्माण-कार्य में मुझे वहाँ के पुराने रहने वालों को एक बार उजाड़ देना होगा, उनके टूटे-फूटे घरों को भूमि पर मिला देना होगा.........."

प्रोफेसर सुधांशु—"तुम महलों के स्वप्न देखते हो प्रकाश ! परन्तु मैं तो भारत के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक मकान की व्यवस्था करना चाहता हूँ। तुम गरीबों की झोंपड़ियों में आग लगा कर उनकी छाया पर अपना महल बनाना चाहते हो, और तुम बनाओगे भी, परन्तु अच्छा हो यदि तुम एक महल न बनाकर अनेकों मकान बनाने की योजना तय्यार करो। भारत की रियासतों के ज्वलंत उदाहरणों को क्या तुम विस्मरण कर सकोगे ? वहाँ भी एक लम्बे काल तक यही सब कुछ होता रहा है जो तुम करना चाहते हो। केवल दोनों के रूप में थोड़ा अन्तर है, सिद्धान्त में नहीं। इसी लिए मैं कहता हूँ कि तुम्हारी यह विद्युत के समान प्रगति विनाश की क्रोड़ में पल रही है। जिसे तुम मानव की शक्तियों का विकास कहते हो उसे मैं ह्रास मानता हूँ। रबड़ को उतना खींचना चाहिए प्रकाश बाबू ! कि जिससे वह टूट कर उल्टी अपने पर ही चोट न करे।"

मिस केतकी—"अनधिकार चेष्ट मुझे आप लोगों की बातों के बीच में बोलने की करनी तो नहीं चाहिए प्रकाश बाबू, परन्तु इतना अवश्य है कि तुम्हारे समस्त कार्य-क्रम में कुछ स्वार्थ्य और असमानता की बू तो मुझे भी आती है।" स्वाभाविस सरलता से कहा।

मिस केतकी के मुख से यह शब्द निकलने थे कि कविवर 'शून्य' जी एक दम सिर ऊँचा करके अपने घुंघराले बालों को हिलाते हुए बहुत गम्भीर ध्वनि में बोले—"मानव की जिस मनोवृत्ति को आपने 'स्वार्थ्य' कहकर अभी-अभी पुकारा है, मिस केतकी ! वह एक धूर्त व्यक्ति की वह शक्ति है जिसके बल पर वह मानव की साधारण प्रगति से शत्रुता कर बैठता है। हम उस शक्ति को भारत में प्रस्फुटित नहीं

होने देंगे। जब तक हमारी लेखनी में शक्ति है तब तक यह मनोवृत्ति नहीं पनप सकती।" और इतना कहकर कविवर फिर गम्भीर विचार-धारा में विलीन हो गये।

प्रकाश बाबू 'शून्य' जी की बात सुनकर तनिक भी विचलित न होते हुए बोले, "मिस केतकी! विषय बहुत गम्भीर है, और तुमने जो कुछ भी समझा, वह बहुत संकुचित है। रही बात स्वार्थ्य की, सो स्वार्थ्य की भावना ही व्यवसाय में मानव की प्रगति की वह शक्ति है जो मानव जीवन को संचालित करती है। जिस व्यक्ति में स्वार्थ्य को समझने की क्षमता नहीं, वह परमार्थ भला क्या करेगा? जो कमा कर धन एकत्रित करेगा, वह दान भी दे सकेगा।"

कविवर 'शून्य' जी—"दान!" और दान शब्द का उच्चारण करके शून्य जी जोर से खिल-खिला कर हँस दिये। "दान देना धूर्त्ता है और दान ग्रहण करना मानव की नपुंसकता।" केवल इतना ही कह कर बिना कुछ उत्तर की प्रतिक्षा किये अथवा किसी से चलने की आज्ञा माँगे कविवर 'शून्य' जी उठकर बैठक से बाहर चले गये। किसी ने उन्हें रोकने का भी प्रयत्न नहीं किया।

प्रोफेसर सुधांशु—"आपके लिए कविवर 'शून्य' जी ने जिन कटु शब्दों का प्रयोग किया है उनके लिये मैं क्षमा माँगता हूँ प्रकाश बाबू!"

प्रकाश बाबू—"क्षमाँ माँगने की आपको आवश्यकता नहीं है प्रोफेसर साहब! ऐसे मूर्ख मोहरे तो जीवन की शतरंज पर पिटने के लिए न जाने नित्य ही कितने आते हैं। आजकल इनका मस्तिष्क कुछ खराब मालूम देता है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"यह भी सम्भव हो सकता है; क्योंकि जब किसी की कोई वस्तु उसके हाथ से निकल जाती है तो उसका प्रभाव उसके मस्तिष्क पर पड़ता ही है।"

प्रकाश बाबू—"भाई मेरा तो सौदा है। खरे दाम दिये हैं, कुछ चोरी करके नहीं प्राप्त किया।" और इतना कह कर मुस्करा दिये

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु चोरी का माल पैसे देकर लेने पर भी चोरी का ही रहता है, यह सत्य आप जीवन में भुला कर नहीं चल सकते। पुलिस जब चाहे आपको हथकड़ियाँ लगा सकती है। क्यों मिस केतकी ?"

"आप सत्य कह रहे हैं प्रोफेसर साहब ! यह चोरी नहीं डाका है, परन्तु मैं अभी तक यह निर्णय करने में असमर्थ्य हूँ कि कौन डाका डालने वाला है और किस पर डाका डाला गया है।" मुस्कराते हुए मिस केतकी नें कहा।

प्रोसफेर सुधांशु—"पुलिस सब पता चला लेगी।"

प्रकाश बाबू—"पुलिस की गहराई को हम खूब माप सकते हैं प्रोफेसर साहब ! इस लिए वह पता नहीं लगा सकेगी। हाँ यदि किसी प्रकार सरकार ने पुलिस-विभाग आपके सुपुर्द कर दिया तो सम्भव है कि कुछ........."

मिस केतकी—"तब तो कुछ नहीं प्रकाश बाबू......"

प्रकाश बाबू—"अजी रहने भी दो ! हमारे चाँदी के जूते की ठोकर सँभालना बच्चों का खिलवाड़ नहीं है। हमने स्पात को मोम बनकर बह जाते हुए देखा है।"

प्रोफेसर सुधांशु ने विषय को आगे बढ़ाना पसंद न करके मिस केतकी की ओर देखते हुए कहा, "आज मैंने आपकी कार लेकर निश्-चय ही आपकी हानि की होगी।"

मिस केतकी—"हानि कुछ नहीं की आपने। मुझे आवश्यकता ही नहीं हुई। एक रोगी को देखने के लिए जाना था सो प्रकाश बाबू अपनी कार लेकर आ पहुँचे। आज मैंने प्रकाश बाबू को विचित्र प्रकार का एक रोगी दिखलाया है। आप उसे देखकर नहीं पहिचान सकते कि उसे कोई रोग हो सकता है, परन्तु वह अन्दर से खोखला हो चुका है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"वह व्यक्ति कोई बहुत बड़ा धनाड्य होगा।"

मिस केतकी—"आपका अनुमान ठीक है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"व्यक्ति कभी-कभी अपने को भी धोखा देता है प्रकाश बाबू ! परन्तु यह कभी भी उसके लिए हितकर नहीं होता।"

प्रकाश बाबू—"अच्छा अब रहने दीजिए इन बातों को। मैं आज आपके पास सहयोग की भावना लेकर आया हूँ।"

प्रोफेसर सुधांशु—"सहयोग की भावना ! परन्तु तुम्हारी विचार-धारा का मेरी विचार-धारा के साथ मेल नहीं खा सकता। भारत की समस्याओं के विषय में तुम्हारा और मेरा दृष्टिकोण ही विपरीत है। तुम यदि यह भावना लेकर आये हो कि जो तुम बड़ा भारी मिल लगा रहे हो उसका मैनेजमेंट (प्रबन्ध) मैं सँभाल लूं तो यह मैं नहीं कर सकूंगा, कभी नहीं।"

प्रकाश बाबू—"परन्तु क्यों ? इसमें हजारों मजदूरों को नौकरी मिलेगी। लाखों का पेट पलेगा ...."

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु उन सबको तम्हारे महल की छत्र-छाया में रहना पड़ेगा और भगवान् न करे कि एक दिन आपके महल की कोई मंजिल चकनाचूर होकर नीचे गिर पड़े और उन बेचारे मज़-दूरों को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े।"

प्रकाश बाबू—"तो आप निर्माण से पहिले विनाश पर जा पहुँचे"

प्रोफेसर सुधांशु—"छोटी दृष्टि से भारत की महान समस्याओं को आँकने की भूल मैं नहीं कर सकता।"

प्रकाश बाबू ने बातों का विषय बदल दिया और फिर बहुत देर तक इधर-उधर की बातें चलती रहीं। मिस केतकी के प्रोफेशन (काम) के विषय में ही एक लम्बी चर्चा चल गई और प्रोफेसर साहब ने उसकी हृदय से प्रशंसा की; परन्तु प्रकाश बाबू उसे मिस केतकी के लिए उप-युक्त न मान सके।

प्रोफेसर साहब ने अपनी ग्राम-यात्रा के विषय में यहाँ पर कोई भेद प्रकट नहीं किया और न ही मिस केतकी ने उसके विषय में कुछ

पूछना उचित समझा। प्रकाश बाबू और अधिक यहाँ न रुक सके क्योंकि उन्हें अपनी कम्पनी के डाइरेक्टर्स की मीटिंग में जाना था और आज उसमें कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय होने थे। मिल के जनरल मैनेजर की नियुक्ति के विषय में भी आज ही चर्चा चलनी थी, इसी लिए प्रकाश बाबू प्रोफेसर सुधांशु के पास आये थे; परन्तु उनकी यह आशा फलीभूत न हो सकी।

"अच्छा प्रोफेसर साहब ! नमस्कार। मुझे एक आवश्यक कार्य से जाना है।" खड़े होकर प्रकाश बाबू ने कहा।

"कुछ देर और बैठते प्रकाश ! आपसे मिलकर सच कहता हूँ प्रकाश बाबू ! कि चित्त को बहुत प्रसन्नता होती है। विचारों में आकाश पाताल का अन्तर होने पर भी हृदय इतने निकट से तुम्हें स्नेह करता है कि वाणी से मैं उसका स्पष्टीकरण नहीं कर सकता।"

प्रकाश बाबू कृतज्ञता प्रकट कर फिर नमस्कार करके चल दिये और उनके साथ मिस केतकी भी चली गईं। प्रोफेसर साहब के मस्तिष्क में वह ग्राम की समस्याएँ फिर उभर कर ऊपर आगईं और वह एकांत में कागज तथा कलम लेकर कुछ लिखने के लिए बैठ गये।

[७]

प्रकाश बाबू मिस केतकी को उनकी डिस्पेन्सरी पर छोड़ कर सीधे अपनी कोठी पहुँचे, तो रानी सुशीला अपनी मुनियाँ बिल्ली को गोद में लिए सोफे पर बैठी थीं। प्रकाश बाबू, आकर ज्यों ही कमरे में खड़े हुए कि त्यों ही वह त्योरी चढ़ा कर बोलीं, "क्यों जी ! मै कहती हूं कि क्या आप मेरे लिए केवल इतना भी नहीं कर सके ?"

प्रकाश बाबू—"तुम्हारे लिए ! क्या नहीं कर सका मैं तुम्हारे लिए रानी !"

रानी सुशीला—"क्या बीस हजार की बात थी ? वह बेचारे 'शून्य' जी जीवन भर के लिए दास बन जाते। सभा में, सोसाईटी में, कवि-सम्मेलनों में, न जाने कहाँ-कहाँ आपकी प्रतिष्ठा बढ़ाते। आपने भी बस रुपये से ही स्नेह करना सीखा है।"

प्रकाश बाबू—"अनुमान तुम्हारा असत्य नहीं है रानी ! परन्तु तुम्हारे तो इंगित मात्र पर लाखों की सम्पत्ति न्यौछावर की जा सकती है। 'शून्य' जी जैसे कवि नित्य रुपये के बल पर न जाने कितने खरीदे जा सकते हैं ? मेरे विचार से तुम्हें भी मेरे सम्पर्क में आकर रुपये का मूल्यांकन करना सीखना चाहिए।"

रानी सुशीला—"तो जैसा आपका जी चाहे कीजिए। हमें क्या ? आपके विचार से तो हमारा जन्म ही धन लुटाने के लिए हुआ है और धन संचित करने का अधिकार केवल आपको ही विधाता ने दिया है। धन-वान पति निर्धनों की कन्याओं के साथ विवाह करके उन्हें इसी प्रकार ताँसते हैं। इसमें आपका कोई दोष नहीं, दोष अपने भाग्य का होता है।" और रानी सुशीला के नेत्रों से झर-झर करके अश्रु-धारा बह चली।

प्रकाश बाबू ने आगे बढ़कर रानी को स्नेह-अंक में भर लिया और प्यार से उसकी चिम्बुक पर दो उँगलियाँ रख कर मुख ऊपर को उठाते हुए नेत्रों में नेत्र डाल कर बोले—"बस रो उठीं। मैं कहता हूं कि विवाह के पश्चात् भी तुम्हारा उस पागल दीवाने की ओर द्रवित होना क्या मेरे हृदय को छलनी नहीं बनाता होगा रानी !"

रानी सुशीला—"बनाता होगा, यह मैं जानती हूँ; परन्तु इसमें मेरा कोई दोष नहीं। अपराधी सर्वदा आप ही रहे हैं, और रहेंगे भी। मैंने अपने जीवन की शतरंज पर आने वाले प्रत्येक मोहरे और उसकी चालों का पूरा ब्यौरा आपको देने के पश्चात् आपसे विवाह करना स्वीकार किया था; और इतने पर भी प्रस्ताव आपकी ओर से था। मैंने कोई धोखा नहीं दिया, कोई छल नहीं किया, कोई पाप नहीं किया।"

प्रकाश बाबू—"यह मैं मानता हूँ रानी ! परन्तु मन के लिए कभी-कभी यह विचार असहनीय-सा हो उठता है। लेकिन मैं कवि को बीस हजार रुपया अवश्य दूंगा। रुपया मैं उसे देना अवश्य चाहता हूँ, परन्तु अपने रुपये का एक अंश भी उसके शरीर में प्रवेश कर देने के पश्चात् मैं उसे पूर्ण रूप से अपने वश में कर लेना चाहता हूँ; मेरी पूंजी का प्रत्येक पैसा मछिहारे के जाल का काँटा है और यह काँटा ही बना रहेगा। मैं यह रुपया कब और किस प्रकार दूंगा यह बात तुम मुझ पर छोड़ दो रानी !"

और रानी ने प्रकाश बाबू की यह बात मान ली। 'शून्य' जी के लिए रानी सुशीला के मन में वासनामय प्रेम की भावना तो इस समय वर्त्तमान नहीं थी, परन्तु चिरकाल से हृदयों का सम्बन्ध कुछ ऐसा जुड़ गया था कि आमने-सामने होने पर पुराने वचन कानों में बज उठते थे। कभी-कभी रानी अपने इन्हीं वचनों को प्रकाश बाबू की वर्त्तमान इच्छाओं और परिस्थितियों पर कसने का भी प्रयत्न करती थी, तो प्रकाश बाबू उसकी दृष्टि में बिलकुल निर्दोष सिद्ध होते थे।

मानव के मन की निर्बलताओं को ही रानी मानव की मानवीयता

मानती थी और जो व्यक्ति उसे इससे ऊपर उठने की चेष्टा करता हुआ प्रतीत होता था उससे उसे घृणा हो उठती थी। प्रोफेसर सुधांशु के प्रति उनके हृदय में जो प्रथम बार घृणा का बीजांकुर उत्पन्न हुआ वह केवल इसी सिद्धान्त के आधार पर हुआ था। इस सिद्धान्त का निर्माण एक दिन अपनी कुछ दुर्बलताओं को छुपाने के लिए कविवर 'शून्य' जी ने किया था और बाद में इसे गुरु-मंत्र मानकर रानी सुशीला ने अपने जीवन में स्थान दिया और इसी सिद्धान्त को आधार मानकर रानी सुशीला ने कविवर 'शून्य' जी का मुँह बन्द करके प्रकाश बाबू को वरण किया था।

यह सिद्धान्त रानी सुशीला के जीवन का एक प्रधान अंग बन चुका था और इसने उसे जीवन से काफी खुलकर खेलने की स्वतन्त्रता दे डाली थी। परन्तु प्रकाश बाबू को जो स्वतन्त्रता एक दिन सौन्दर्य की प्रतीक प्रतीत हुई थी वही आज उनके हृदय में ज्वाला सुलगाने लगती थी। 'शून्य' कवि को बीस हजार की रकम प्रकाश बाबू यों ही दारू पीने और विजया छानने के लिए नहीं थमा सकते थे। देश की सम्पत्ति को अनोत्पादक कार्य में लगाना उनकी दृष्टि में पाप था।

प्रकाश बाबू अपने को राष्ट्र के उत्थान का एक महान स्तम्भ समझते थे और उन्हें विश्वास था कि यह अपनी प्रतिभा के बल पर देश की उन्नति की वह रूपरेखा प्रस्तुत करेंगे कि जिस पर चलकर भारत धन-धान्य से पूर्ण हो जाय और भारत में बड़ी-बड़ी मिलों और कारखानों की भरमार दिखलाई देने लगे।"

प्रकाश बाबू ने अपनी कल्पना का एक महल बनाया था और जीवन में यह निश्चय कर लिया कि महरौली की सड़क पर जो स्थान उन्होंने लिया है उसके आस-पास की सब झोंपड़ियों को खरीद कर उजाड़ दिया जाय और वहाँ एक सात मंजिल का महल बनवाया जाय। महल अपने प्रकार का यह एक ही महल होगा भारत में, जिसकी सबसे ऊँची मंजिल में बैठ कर प्रकाश बाबू अपने व्यापारों के सूत्रों को सँभालेंगे।

प्रकाश बाबू का यह विचार रानी सुशीला को बहुत पसंद था और प्रकाश बाबू कभी-कभी जब एकांत में बैठकर इस महल का काल्पनिक चित्र तय्यार करते थे तो रानी सुशीला उनके साथ बैठकर उसकी रूपरेखा तय्यार कराने में पूरा सहयोग देती थीं।

रानी सुशीला—"अब तो कई दिन से मिस केतकी दिखलाई ही नहीं पड़ रही हैं।" इसी समय अकस्मात रानी सुशीला ने कुछ उत्सुकता के स्वर में पूछा।

प्रकाश बाबू—"अवकाश न मिला होगा बेचारी को। कई दिन से मिल का कार्य इतना फैल गया है कि मुझे भी अवकाश नहीं मिलता उधर जाने का और वह, वह तो रोगियों के चक्कर में खाना भी भूल जाती हैं।"

रानी सुशीला—"फिर खाने के समय आप क्यों नहीं पहुँच जाया करते हैं वहाँ। यह जान लीजिए कि यदि उनका स्वास्थ्य खराब हो गया तो दावा आप पर किया जायगा।"

"मुझ पर !" मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू बोले।

"जी हाँ, आप पर। आप लोग स्त्रियों के साथ खेल करते हैं।" और इतना कहकर रानी सुशीला ने मुँह एक ओर को धीरे से पिचका दिया।

"और आप पर नहीं कि जो आपने अपने विरह में कविवर 'शून्य' जी को कविता लिखने की एक मशीन ही बनाकर छोड़ दिया है।" मुस्करा कर प्रकाश बाबू बोले।

रानी सुशीला—"ठीक है ! परंतु मेरे व्यवहार ने कल्पना के परों को फड़फड़ाने का अवसर दिया, कवि की सोती हुई प्रतिभा को ललकार कर जगा दिया और उसकी सुप्त वीणा के तारों में झंकार पैदा कर दी। परंतु कहीं ऐसा न हो कि आपके व्यवहार से प्रेरित होकर मिस केतकी किसी रोगी का आपरेशन खराब कर दें।"

रानी के इन शब्दों पर प्रकाश बाबू रानी को दाद देकर उसकी

चतुर बुद्धि की प्रशंसा करते हुए हथेली पटखा कर हँस दिये और रानी का हृदय भी आनंद से विभोर हो उठा। रानी एक हीरा थी, जिसकी परख 'शून्य' जी तथा प्रकाश बाबू दोनों ने की, परंतु हीरे को कोरा पारखी ही प्राप्त नहीं कर सकता। उसके पास मूल्य आँकने और चुकाने की क्षमता होनी चाहिए। उसी क्षमता पर तो रानी सुशीला ने अपने को कल्पना के क्षेत्र से दूर हटाकर वास्तविक क्षेत्र में रखकर प्रकाश बाबू के समर्पित कर दिया।

रानी की यह दूरदर्शिता प्रकाश बाबू के लिए उसके जीवन का सबसे बड़ा गुण था। प्रकाश बाबू ने धीरे से पूछा—"क्या 'शून्य' जी यहाँ आये थे ?"

रानी सुशीला—"यदि न आते तो यह सब बातें मैं किस प्रकार जान पाती ?"

प्रकाश बाबू—"बेचारे बहुत निराश हुए जब मैंने ट्रस्ट की बात कही। परन्तु रानी ! मैं कहता हूँ कि यह लोग वास्तव में बड़े ही स्वार्थी हैं। मैं रुपया ट्रस्ट को देकर एक संस्था की स्थापना करना चाहता हूँ। इससे अंत में चलकर 'शून्य' जी जैसे न जाने कितने कवि पलेंगे। परंतु यह महाशय अकेले ही सब पूंजी डकार जाना चाहते हैं। अब तुम ही तनिक ठंडे हृदय से विचार करो कि क्या इन्हें यों ही यह पूंजी दे दी जाय ?"

रानी सुशीला प्रकाश बाबू के मत से सहमत हो गईं और उन्हें वास्तव में कविवर 'शून्य' जी की कलात्मकता में धूर्त्तता मिली हुई दृष्टिगोचर होने लगी। समस्या को कई बार रानी ने अपने मन में दुहराया और अंत में उन्हें यही विचार-संगत प्रतीत हुआ कि इस रुपये का ट्रस्ट बनाकर ही उनके सुपुर्द किया जाय और उस ट्रस्ट का संचालन पूर्ण रूप से प्रकाश बाबू के ही हाथों में रहे।

दूसरे दिन 'शून्य' जी को रानी सुशीला के सामने झुक जाना पड़ा और वह एक शब्द भी उसके विपक्ष में न बोल सके। रानी के

शब्दों पर उनके जीवन की प्रत्येक अमूल्य वस्तु न्यौछावर थी, तो फिर बीस हजार रुपये का क्या महत्त्व था। निश्चय यही हुआ कि इस ट्रस्ट का संचालन तो प्रकाश बाबू के ही आदेश से होगा परंतु कविवर 'शून्य' जी भी अपने जीवन को इसी ट्रस्ट के उत्थान में लगा देंगे।

कविवर 'शून्य' जी—"जो कुछ भी अत्याचार तुम हम पर करना चाहती हो करलो रानी! हमारा तो जन्म ही इस संसार में सहन करने के लिए हुआ है। तुम हमें खिलौना समझ कर हमसे खेलना चाहती हो, तो खेलो, हम भी कुछ नहीं कहेंगे।" इतना कहकर 'शून्य' जी और भी गम्भीर हो उठे और उन्होंने ट्रस्ट को आजीवन सहयोग देने का वचन इस प्रकार दे दिया जिस प्रकार संसार के प्रत्येक प्राणी को अपने प्रिय से प्रिय व्यक्ति के शव को उठाने के लिए सहमत हो जाना पड़ता है।

रानी सुशीला—"तब आप प्रसन्नता पूर्वक मेरी अनुमति से सह-मत नहीं है?"

कविवर 'शून्य' जी—"तुम्हारी अनुमति नहीं,आदेश है रानी! और रही प्रसन्नता और अप्रसन्नता की बात, सो, वह तो मन की कल्पना मात्र है। भली से भली परिस्थिति में मन कष्ट की कल्पना कर सकता है और दुखद से दुखद परिस्थिति में मनुष्य आनन्द की कल्पना कर सकता है। हम कवि ठहरे। कल्पना के ही तो बल पर हम आकाश में दुर्ग की नींव स्थापित करते है। और हाँ! रानी! तुम्हें अपने रूप पर भी अभिमान नहीं करना चाहिए। हमारी कल्पना रूप का भी निर्माण कर सकती है।"

रानी सुशीला तनिक लज्जित सी होकर बोलीं,—"कवि! तुम अब बहकने बहुत लगे हो।"

'शून्य'जी—"आज्ञा जो दी हुई है आपने।"

रानी सुशीला—"परन्त यह ठीक नहीं। तुम जानते हो कि मैं अब किसी की पत्नी हूँ।"

'शून्य' जी,—"जानता हूँ, परन्तु मानता नहीं।" शून्य जी ने स्थिरता

के साथ अपने नेत्र रानी के मुख पर डाल कर गम्भीरता पूर्वक कहा, "यों स्वार्थ्य जीवन का आवश्यक अङ्ग है और उसके ही फल स्वरूप विशेष रूप से संसार में व्यक्तियों के जीवन संचालित होते हैं। परन्तु जहाँ उसी को जीवन का प्रधान तत्त्व मानकर चलना होता है वहाँ जीवन नीरस हो जाता है, और नीरस जीवन उसी परिस्थिति में अधिक दिन नहीं चल सकता।"

इतना कह कर बिना इस बात की प्रतीक्षा किये कि रानी उसकी बात का क्या उत्तर देगी कविवर 'शून्य'जी वहाँ से चल दिये। यहाँ से चलकर शून्य जी सीधे मिस केतकी की डिस्पेन्सरी (दवाईखाना) में पहुँचे। वहाँ जाकर देखा तो मिस केतकी स्वयं कम्पाउन्डर के स्थान पर खड़ी दवाइयाँ बना रही थीं।

'शून्य' जी—"आज यह कष्ट आप कैसे कर रही हैं?"

मिस केतकी—"बेचारा कम्पाउन्डर ही बीमार हो गया आज। उस का कार्य भी मुझे ही करना पड़ रहा है।"

'शून्य' जी डिस्पेन्सरी के अन्दर घुस कर बोले—"लाइए मुझे दीजिए यह सब मैं किये देता हूँ।"

"आप!" आश्चर्य चकित होकर मिस केतकी बोलीं।

और सच मुच ही 'शून्य' जी ने प्रेसक्रिप्शन (नुसखा) हाथ में लेकर खटाखट दवाइ बनानी प्रारम्भ करदी। फिर धीरे से बोले—"यह कार्य मेरे लिए नया नहीं है मिस केतकी! परन्तु यदि आप मेरी बात पर विश्वास करें तो मैं आपको बतलाऊँ कि मेरे कवि बनने का श्रेय इसी कम्पाउन्ड्री को पहुँचता है।"

दवाइयाँ बनाने के पश्चात बहुत देर तक दोनों की बातें होती रहीं और बातों का विषय भी बदल कर रानी सुशीला और प्रकाश बाबू पर पहुँच गया। मिस केतकी एक दम पूछ बैठीं—"क्या आपके विचार से दोनों का जीवन इस समय एक ही विचार-धारा द्वारा संचालित हो रहा है?"

'शून्य' जी—"हाँ, यदि जीवन के कार्य-कलापों के मोटे रूपों पर दृष्टि डाल कर देखा जाय तो यही कहना होगा।"

मिस केतकी—"और यदि सूक्ष्म कार्य-कलापों पर दृष्टि डाली जाय तब ?"

'शून्य' जी—'तब'..........तब के विषय में हम अभी कुछ नहीं कहना चाहते, परन्तु अनुभव आपका भी हम से कुछ कम नहीं है। प्रकाश बाबू को जितने निकट से आपने परखा और देखा है उतने निकट से मैं नहीं परख पाया हूं। परन्तु इतना सत्य है कि दोनों के जीवन में स्वाभाविक आकर्षण की अपेक्षा खिचाव की मात्रा अधिक आ चुकी है।"

मिस केतकी—"यही तो मैं पूछना चाहती थी 'शून्य' जी! रानी व्यक्ति का मूल्यांकन करने में असमर्थ रही। उसने व्यक्ति का मूल्य न आँक कर धन को ही जीवन का लक्ष्य बनाया।"

'शून्य'जी—"यह कोई नई बात नहीं है मिस केतकी! रानी ने जो कुछ भी किया है वह ठीक ही किया है। उसने प्रकाश बाबू से विवाह करके मुझे प्रेरणा दी है और दी है नारी के चरित्र को समझने की दिव्य-दृष्टि।"

मिस केतकी—"परन्तु जिस दृष्टि को तुम दिव्य-दृष्टि कहकर अपनापन समझने का प्रयत्न कर रहे हो वह तुम्हारे जीवन की निर्बलता है।"

'शून्य' जी—"परन्तु जिसे आप निर्बलता समझ रही हैं वह मेरे जीवन का बल है, मेरे जीवन की अनुभूति है।"

मिस केतकी—"दुर्बल प्राणी इसी प्रकार कल्पना का आश्रय लेकर बात किया करते हैं। बलवान प्रकाश बाबू हैं, जो करना चाहने से पूर्व कर डालते हैं, और आप करने की इच्छाओं से ही परास्त होकर कविता लिखने बैठ जाते हैं। आपके जीवन की पराजय का नाम आप की कविता है और कभी-कभी ऐसा देखा गया है कि व्यक्ति अपनी पराजय के गान गाकर भी प्रसन्न होता है। इस प्रकार की कविताएँ लिखकर

आप निराशावाद को जन्म देना चाहते हैं, जो राष्ट्र के उत्थान में बाधक सिद्ध होगा। मैं आज और भी स्पष्ट शब्दों में आपसे निवेदन करदूँ कि आपकी यह कविता कुछ नहीं है, केवल रानी के न मिलने पर आपकी आत्मा का प्रलाप मात्र है।"

'शून्य' जी—"आपके अनुमान को चुनौती देना मैं नहीं चाहता, परंतु यदि मेरी क़विता को यह भी मान लिया जाय तब भी व्यक्ति के जीवन की यह उन परिस्थितियों का स्पष्टीकरण है कि जिनमें से होकर प्रायः प्रत्येक स्त्री पुरुष को कम अथवा अधिक अवस्था में गुजरना होता है। आज जितनी स्पष्ट बात आपने कही है यदि उतनी ही मैं भी कहने का प्रयत्न करूँ तो मैं कह सकता हूँ कि प्रकाश बाबू के इस विवाह से आपके हृदय को एक गहरी चोट लगी है। परंतु इस संसार के कुछ व्यक्तियों को विधाता ने केवल दूसरों को दण्ड देने के ही लिए बनाया है।

मिस केतकी ने कविवर 'शून्य'जी की इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया और वह इसी समय आये हुए एक रोगी को देखने में व्यस्त हो गई। रोगी की दशा बहुत खराब हो चुकी थी। उसके संरक्षक लोग उसे इधर-उधर ले जाकर उसका काफी इलाज करा चुके थे परन्तु कोई लाभ नहीं हो सका। मिस केतकी ने भी मरीज को पूरी तरह देखा परन्तु रोग की जाँच न कर सकीं।

कविवर 'शून्य' जी—"नहीं पहिचान सकीं, लो मैं बतला देता हूँ।" और इतना कह कर उन्होंने रोगी को अन्दर के कमरे में लेजाकर लिटाने की आज्ञा दी और उसका पालन किया गया। रोगी के सभी सगे सम्बंधी बाहर चले आये। इसके पश्चात कविवर 'शून्य' जी मिस केतकी को अंदर लेजाकर रोगी पर देखते हुए बोले, "भूख व्यक्ति को, चाहे किसी भी वस्तु की क्यों न हो, पूरी न होने पर जला डालती है।"

रोगी ने प्यासे नेत्रों से 'शून्य' जी के मुख पर देखते हुए कहा, "आपने आज मेरे मन की बात कह डाली महाशय! मेरे घर वालों ने

मुझे दवा पिला-पिला कर पागल बना डाला है। मैं भूख से मर रहा हूँ और यह लोग इसे रोग समझते हैं। तमाम दिन बूढ़े-बूढ़े खुर्राट लोग मेरी खटिया को घेर कर बैठे रहते हैं। रोग-रोग-रोग कह-कहकर इन लोगों ने मुझे वास्तव में रोगी बना दिया है।"

मिस केतकी—"तब क्या आप वास्तव में रोगी नहीं है ?"

'शून्य' जी—"फिर वही बात। रोगी भी तो कई प्रकार के होते हैं। इन्हें आप अपने यहाँ एक कमरे में रख लीजिए और मेरा विचार है कि यह बहुत शीघ्र स्वस्थ हो जाँयगे।"

रोगी कुछ नहीं बोला और उसके सगे सम्बन्धी उसे वहीं पर छोड़ कर चले गये। चलते समय रोगी की माता ने केवल इतना अवश्य कहा —"मिस साहिबाँ ! इकलौता पुत्र है मेरा; यदि आप बचा लेंगी तो सोने में तौल दूंगी। धन की चिन्ता नहीं, चिन्ता इसके प्राणों की है।"

मिस केतकी—"चिन्ता न कीजिए माजी ! मैं अपनी करनी में कुछ उठा न रखूंगी।" और कविवर 'शून्य' जी ने तो बुढ़िया को शत-प्रति-शत विश्वास दिला दिया कि यहाँ रोगी अवश्य अच्छा हो जायगा।

विदा होते समय 'शून्य' जी ने धीरे से मिस केतकी के कान के पास मुख ले जाकर कहा—"जानती हो यह रोगी रूप का भूखा है। इसलिए इसकी देख रेख तुम स्वयं ही करना। स्वस्थ्य यह अवश्य हो जायगा।"

मिस केतकी ने कोई उत्तर नहीं दिया और 'शून्य' जी चले गये।

[८]

प्रोफेसर सुधांशु की योजनाएँ ग्रामीण जनता के सहयोग से पन-पनी प्रारम्भ हो चली थीं। ग्राम की चौपाल, जो कि ग्राम के सब रहने वालों ने आपको सौंप दी थी, अब एक सुन्दर और सुव्यवस्थित पाठशाला बन चुकी थी और उसके एक ओर एक छोटा सा कमरा भी बन गया था, जहाँ पर एक छोटी सी डिस्पेन्सरी (दवाखाना) खुल गयी थी। मिस केतकी, दोपहर के समय जब कि उन्हें अपने कार्य से अवकाश रहता था, वहाँ दो घंटे के लिए बैठती थीं और ग्राम-वासियों की उनके घर जा-जा कर चिकित्सा करती थीं।

इस विद्यालय और चिकित्सालय की ख्याति आस पास के सब देहातों में फैल चुकी थी और अब तो दूर-दूर से विद्यार्थी तथा रोगी यहाँ पर आते और अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर आनन्द लाभ करते थे। प्रोफेसर सुधांशु नीम की छाया में लकड़ी के तख्त पर चटाई बिछाए बैठे कुछ फ़ाइलों को इधर-उधर पलट रहे थे कि इतने में सामने नियाज अहमद आकर खड़े हो गये और धीरे से बोले, "मैंने कहा फाइलों का मुतायला हो रहा है ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"अरे आ गये नियाज भय्या ! मैं तो अभी-अभी तुम्हारी ही राह देख रहा था। तुम्हें यह जान कर बहुत प्रसन्नता होगी कि कल संध्या की सार्वजनिक सभा में हमारी बस्ती के सब चर्मकार भाईयों ने दारू न पीने की सौगन्ध ले ली है और अभी-अभी मैं तुम्हें जो अपनी नई योजना बतलाने जा रहा हूँ उसे सुनकर तो तुम बस उछल ही पड़ोगे।"

नियाज अहमद—"तनिक सनूं भी तो वह कौन सी योजना है आपकी। अब फौरन कह डालिए बस। ज्यादा इन्तजार करना अपने

वश की बात नहीं।" और इतना कहते हुए वह प्रोफेसर सुधांशु के पास ही चप्पल उतार कर तख्त पर विराजमान हो गये।

प्रोफेसर सुधांशु—"तो सुनिए नियाज भय्या ! अब मेरी योजनाओं का आर्थिक रूप तुम्हारे सम्मुख आयगा। मैंने यहाँ पर तीन जूते बनाने के केन्द्र स्थापित किये हैं और उन तीनों केन्द्रों को मिला कर एक 'सहयोगी सोसाइटी' (Co-operative Society) बनाई है। उसका रजिस्ट्रेशन तुम्हें कराना होगा। हमारी यह सोसाइटी प्रति दिन पचास जोड़ी जूते तय्यार कर सकेगी और जूते बाजार में बेचने पर हमें एक रुपया प्रति जोड़ा लाभ होगा।"

नियाज अहमद—"बहुत खूब, बहुत खूब ! भय्या ! कमाल कर दिया तुमने। इनकलाब आजायगा इस गाँव की जिंदगी में। बेचारे अच्छे खासे कारीगर होने पर भी शहर में जाकर सड़कों के चौरस्तों पर बैठे पुरानी जूतियाँ गाँठने से छुटकारा पा जायँगे। एक नई जिंदगी देखने को मिलेगी इन लोगों को और एक नया नजरिया इनके सामने आयगा। यह लोग समझ सकेंगे कि यह भी इन्सान हैं। इनकी स्त्रियों और इनके बच्चों की दशा को देखने से आँखों में आँसू आ जाते हैं।" नियाज अहमद की बाँछें खिल उठीं और उसका हृदय आनन्द से गद्-गद् हो गया।

इसी समय मिस केतकी की कार वहाँ पर आ पहुँची और कार से केतकी के साथ ही साथ कविवर 'शून्य' जी भी उतर पड़े। दोनों चौपाल की सीढ़ियों से ऊपर चढ़ कर सीधे तख्त के पास पहुँच गये। उन्हें देखकर प्रोफेसर सुधांशु मुस्कराते हुए बोले, "अरे ! कविवर को भी घसीट लाईं मिस केतकी ! तुम बड़ी ही विचित्र हो। किसी के समय का मूल्यांकन करना, मानो तुमने सीखा ही नहीं। जो तुम्हारे जाल में फँस गया, सो फँस गया।"

नियाज अहमद—"भाय्या प्रोफेसर! आपने हरुफ-ब-हरुफ ठीक कहा है। अपनी तो हम जानते हैं कि आपसे छुट्टी प्राप्त करने के लिए

कहना बस हमारी ताकत की बात नहीं है।"

'शून्य' जी कटाक्ष को समझ कर बोले—"परन्तु प्रोफेसर सुधांशु ! आप तो निर्लिप्त प्राणी जान पड़ते हैं। मैं देखता हूं इनका आप पर तो कोई प्रभाव नहीं पड़ता। फिर रही मेरी हानि की बात; सो आपको मेरा यहाँ पर आना यदि इतना खटक रहा है, तो मैं चला जाता हूँ।" और उठकर खड़े हो गये।

मिस केतकी—"बस ! इतनी सी बात पर रूठ चले। कहाँ प्रकाश बाबू को तो एक ओर आपने यह वचन दिया है कि वह चाहे जो कुछ भी इनसे क्यों न कहें यह कभी उसका बुरा नहीं मानेंगे और यहाँ तनिक सी बात पर ऐंठ कर टैंट हो गये।"

'शून्य' जी—"ऐंठ कर टैंट होने की बात नहीं है मिस केतकी ! यह कलाकार का अपमान है। कलाकार अपमान सहन नहीं कर सकता।" आँखें तरेरते हुए बोले।

"जी हाँ !" व्यंग्य-पूर्ण मुस्कयान के साथ नियाज अहमद ने कहा, "आपका फरमाना बजा है। परन्तु हमारे इस ग्राम में आप सम्भवतः नहीं जानते कि हम कलाकार अपने उत्तम चर्मकारों को कहते हैं। जो सब से अच्छा जूता बनाता है वही सबसे अच्छा कलाकार है।............"

कविवर 'शून्य' जी—"सुना आपने कुछ मिस केतकी ! मैं जानता था कि आप इसी लिए मुझे यहाँ पर ला रही हैं। परन्तु यह भिगो-भिगो कर जूतियाँ मारने से मैं अपना मार्ग नहीं बदल सकता। मैं कला-कार हूं, मैं पत्रकार हूं और आपके इन सभी आघातों का उत्तर आपको मेरे पत्र के प्रथम अंक में ही मिल जायगा।" बस इतना कहकर 'शून्य' जी ने अपने सूखे बालों के गुच्छे को दो उँगलियों से ऊपर को फेंकते हुए मस्तक पर हाथ फेरा।

'शून्य' जी का यह कहना था कि अन्य तीनों व्यक्ति खल-खिला कर हँस पड़े और फिर उन्होंने 'शून्य' जी को सम्मान के साथ तख्त

पर बिठलाया। 'शून्य' जी भी तनिक नखरा सा करके, उचक कर, शेरवानी के बटन खोलते हुए, तख्त पर बैठ गये।

शेरवानी के बटन खोलने से अन्दर का रेशमी कुर्त्ता देखकर नियाज अहमद बोले, "क्यों उस्ताद्! आज तो मार दिया दिल्ली वाले को ?"

'शून्य' जी—"नहीं, आपका अनुमान गलत है। कुर्त्ते रानी ने बनवाये हैं, प्रकाश बाबू ने नहीं।" और इस समय 'शून्य' जी के मुख पर मुस्क्यान की स्निग्ध रेखाएँ अंकित हो रही थीं, तथा रदों की पंक्ति मे सुन्दर मुस्क्यान-सुमन बिखर रहे थे।

"रानी भी एक पहेली है मिस केतकी!" प्रोफेसर सुधांश ने बहुत गम्भीर मुख-मुद्रा बना कर कहा। "नियाज भय्या!. आप सम्भवतः नहीं परख पाये हैं उस पहेली को। विचित्र बात यह है कि वह जीवन में हमारे कविवर 'शून्य' जी को धोखा देने के पश्चात भी धोखा नहीं दे पा रही है, स्वयं धोखा खा रही है।"

'इसका मतलब ?" सिर खुजलाते हुए नियाज अहमद ने पूछा।

"मतलब स्पष्ट है नियाज भय्या!" केतकी ने कहना आरम्भ किया। "व्यक्ति के आकर्षण के विषय कई हो सकते हैं। एक व्यक्ति विविध दिशाओं में भी आकर्षित हो सकता है। उदाहरण-स्वरूप यदि आप चाँदनी चौक-बाजार या कैनॉट-प्लेस-बाजार में से निकल जाँय तो आप कितनी ही वस्तुओं को उनके विविध गुणों के आधार पर पसंद करेंगे, परन्तु मानव ने अपनी सभ्यता के कुछ ऐसे व्यर्थ के बन्धन बना दिये हैं कि जिन्होंने व्यक्ति की स्वतंत्रता को बहुत सीमित कर दिया है।"

नियाज अहमद—"आज तो तुम फिलासफी की बातें कर रही हो केतकी बहिन! हम तो सच कहते हैं कि हमारे पल्ले बिलकुल कुछ नहीं पड़ा।"

"यह नहीं समझ पायँगे अभी मिस केतकी!" मुस्कराते हुए नियाज

अहमद को नितांत मूर्ख समझ कर 'शून्य' जी ने कहा। "इनका सम्बन्ध मस्तिष्क से नहीं रहा है और फिर यहाँ तो कल्पना, भावना और विचार-शक्ति का एक सूत्र में संगठन हुआ है। इसे समझना किसी मदिरा अथवा विदेशी कपड़े की दूकान पर धरना देना नहीं है।" और इतना कहकर उन्होंने गर्व के साथ अपना सीना ऊपर को तान दिया।

नियाज अहमद—"शून्य जी ने बिलकुल ठीक कहा है केतकी बहिन! हम लोग तो मोटी बातों को समझते है। एक से विवाह करना और दूसरे को प्रेम करने की क्षमता भी किसी नारी कहलाने वाली स्त्री में होती है, यह कल्पना तो हम केवल उसी समय कर सकते है जब हमारे साथ भी रेशमी कुर्त्ते सिलाने वाली किसी देवि का भेंट हो जाय।" और वह इतना कहकर गम्भीर हो गये।

नियाज अहमद का इतना कहना था कि 'शून्य' जी के तन बदन में ज्वाला प्रज्वलित हो उठी और उन्हों ने उसी समय अपनी सब जेबें टटोलीं परंतु किसी में भी न तो कोई कागज ही मिला और न पेंसिल ही निकली, नहीं तो इस समय वीर-रस का उदय हो चुका था और अवश्य ही एक रचना का जन्म हो जाता। वह अपने में ही झुंझला कर रह गये, केवल दाँतों को अन्दर-ही-अन्दर पीस कर अपने क्रोध को जप्त कर लिया।

मिस केतकी अपनी कोठरी में चली गईं और एक के पश्चात दूसरे रोगी को देखने लगीं तथा प्रोफेसर सुधांश और नियाज अहमद अपने कार्य में संलग्न हो गये। 'शून्य' जी अकेले चबूतरे पर घूम-घूम कर गाँव का दृश्य देखने लगे। थोड़ी ही देर में अचानक सिर खुजलाते हुए प्रोफेसर साहब के सम्मुख आकर बोले, "प्रोफेसर साहब! आपने तो जंगल में मंगल कर दिया। मकान कच्चा ही है, परंतु बहुत कलात्मक ढंग से बना हुआ है। यहाँ की स्वच्छता में जो कुछ भी गंदगी है वह सामने स्पष्ट दिखलाई दे जाती है। धनवानों की भाँति यहाँ मखमली

कालीनों के नीचे दबाकर वर्षो की गंदगी को नहीं रखा जाता।"

परंतु प्रोफेसर साहब यह सब प्रशंसा की बातें अनसुनी करके अपने काम में लगे रहे और बराबर उनकी लेखनी उनकी योजना पर चल रही थी। जो कुछ वह लिखते जा रहे थे नियाज अहमद साथ-साथ उसे टाइप करते जाते थे।

कविवर 'शून्य' जी की प्रशंसा पर जिस प्रकार प्रोफेसर साहब ने ध्यान नहीं दिया, उसी प्रकार 'शून्य' जी ने भी उनकी इस उदासीनता को कोई विशेष महत्व न देकर सीधे चौपाल की सीढ़ी पर पहुँचे और धीरे से नीचे उतर गये। गाँव के बच्चों को इस विचित्र प्रकार के अस्त-व्यस्त व्यक्ति को देखने में बहुत आनन्द आया और उनका जमाव कविवर के चारों ओर उसी प्रकार बढ़ता चला गया जिस प्रकार भालू या रीछ वाले अथवा जादूगर या मदारी के चारों ओर हो जाता है। जिस गली से भी वह निकले गाँव के बच्चों ने उनका स्वागत किया और आज इन प्राकृतिक बच्चों के बीच में चलते हुए उन्होंने ऐसा अनुभव किया कि मानो वास्तव में यदि आवरण-विहीन जीवन किसी को कहा जा सकता है तो उसकी यही दशा है, उसका यही रूप है।

यह पूरी की पूरी चर्मकारों की बस्ती थी और उन्ही के यह बच्चे थे। वस्त्रों के स्थान पर केवल दस प्रतिशत के पास गले में कुर्ता था और वह भी फटा हुआ। कच्छ अथवा नीकर किसी के पास नहीं था, हाँ कुछ आयु के बड़े बच्चों ने काली तगड़ी में किसी कपड़े की लँगोटी अवश्य लगाई हुई थी। लड़कियों के पास लड़कों से अधिक वस्त्र थे, परन्तु उनके भी सिरों पर ओढ़नियाँ बहुत कम थीं, हाँ सूतनें और कुर्ती सभी के पास थीं।

'शून्य' जी ने जब यह प्रकृति का जीता जागता स्वरूप देखा तो इस के सम्मुख उन्हें प्रकाश बाबू की प्रदर्शिनी हेय प्रतीत हुई और उनके वह कलात्मक चित्र जिन्हें उन्होंने बड़े-बड़े रियासती नवाबों के दाँत खट्टे

करके मोल लिया था, नगण्य दिखलाई देने लगे। कवि के हृदय की भावना साकार हो उठी और उसने तुरन्त सब बच्चों के बीच में बैठ कर कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी।

इसी बीच में जब मिस केतकी ने अपना रोगियों का कार्य समाप्त कर लिया तो प्रोफेसर साहब से पूछा—"कविवर 'शून्य' जी किधर प्रस्थान कर गये ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"'शून्य' जी ! अभी-अभी तो यहीं थे।"

नियाज अहमद—"गाँव की सैर कर रहे होंगे कहीं। शायर ही जो ठहरे। शायर लोगों की मत पूछिए केतकी बहिन ! इनका दिमाग भी नाचीज पर चल जाता है और चीज-चीज पर फिसल जाता है। यानी फिसलने की तो इनको बीमारी होती है। कम्बख्त जिन्दगी में कोई मजबूत इरादा बनाना तो यह जानते ही नहीं। और आखिर मैं कह ही डालूं कि औरत तो इनकी मौत है, मौत ?"

मिस केतकी—"परन्तु यह किस प्रकार ?"

नियाज अहमद—"किस प्रकार और क्या वजह—यह सब तो मैं कुछ नहीं जानता केतकी बहिन ! लेकिन जो कुछ इस नाचीज ने देखा है वह बयान जरूर कर सकता हूं। औरत को देखकर शायर की हिम्मत पस्त हो जाती है, औरत के बोलने पर वह घिघियाने लगता है और औरत के डाटने पर उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकलती है। बस यही है इनकी शायरी ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"ऐसा नहीं है भय्या नियाज ! तुमने अभी कवि का बाहिरी रूप ही देखा है। कवि की आत्मा को परखने का प्रयत्न नहीं किया। 'शून्य' जी प्रतिभा शाली व्यक्ति हैं और उनकी इस प्रतिभा को प्रकृति की वास्तविक विभूतियों के दर्शन करने के लिए मैंने उन्हें भेजा है।"

मिस केतकी—"आपने भेजा है ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"हाँ केतकी ! मैंने उनसे बातें करना बन्द कर

दिया। यदि मैं बातें करता रहता तो वह यहीं पर मुझसे गप्पें झाड़कर फिर शहर को लौट जाते। चलो अब तुम्हें मैं उनका कवि-रूप दिखलाता हूं।" और इतना कह कर प्रोफेसर सुधांशु खड़े हो गये।

तीनों व्यक्ति थोड़ी ही देर में वहाँ पहुँच गये जहाँ 'शून्य' जी एक वृक्ष की जड़ पर बैठे कुछ लिखने का प्रयास कर रहे थे और गाँव भर के बच्चे उनके चारों ओर एकत्रित हो गये थे।—"कविता कर रहे हो कवि।" प्रोफेसर सुधांशु ने तनिक मीठे और सधे हुए स्वर में कहा।

'शून्य' जी—"आप आ गये प्रोफेसर सुधांशु! मानव-जाति के बाल-काल की प्रथम किरणों से घिरा हुआ आज मैं यह अनुभव कर रहा हूं कि वास्तव में ष्टि के आदि में प्राणी की क्या दशा रही होगी। कितना भोलापन है इन बच्चों में प्रोफेसर साहब! मानो प्रकृति अपना सरल रूप धारण करके इनके अङ्ग-अङ्ग से लिपट गई है। आपने यह स्थान अपने कार्य-क्षेत्र के लिए चुनकर वास्तव में अपने भावुक हृदय और तीव्र-बुद्धि का परिचय दिया है।"

नियाज अहमद—"और आपने प्रकाश बाबू की कोठी के आउट-हाउस में अपना प्रकाशन-दफ्तर बनाकर किस दिलोदिमाग का परिचय दिया है कवि?"

'शून्य' जी ने नियाज की बात अनसुनी कर दी और फिर धीरे-धीरे अपने ही लिखे हुए कागज पर देख कर गुन-गुनाने लगे।

मिस केतकी—"क्या अब यहाँ से चलने का विचार नहीं है कविवर! मेरा समय समाप्त हो चुका। यहाँ देर हो जाने से मेरा संध्या का सब कार्य-क्रम नष्ट हो जायगा।"

"चलता हूं।" कहकर 'शून्य' जी खड़े हो गये और फिर चारों व्यक्ति पाठशाला के निकट आ गये। मिस केतकी और 'शून्य' जी ने कार में बैठकर विदा ली और प्रोफेसर सुधांशु तथा नियाज अहमद ग्राम के जूता बनाने वाले केन्द्रों को देखने चले गये।

[६]

आज कपड़ा-मिल का उद्घाटन हुआ और उद्घाटन भी बड़ा शानदार। कई हजार रुपया केवल उद्घाटन में व्यय हो गया। बड़े-बड़े लोगों में ह्विसकी का दौर चला और छोटे-छोटों ने केवल चाय की प्यालियों पर ही संतोष कर लिया। होटल इम्पीरियल, नई दिल्ली, में शानदार दावत का आयोजन किया गया। उद्घाटन स्वयं प्रधान मंत्री ने किया और उनका नाम सुनकर छोटे-मोटे चपरकनाती संसद के सदस्य तो यों ही लपकते हुए चले आये। दावत में किसी भी प्रतिष्ठित व्यक्ति अथवा हलाक की जा सकने वाली मुर्गी को छोड़ा नहीं गया था।

आये अनेकों और दावत भी उड़ाई, परन्तु रौब आज बैरिस्टर पुण्डरीकर तथा सरदार लुहारा सिंह का ही था। बैरिस्टर पुण्डरीकर ने लिमिटेड कम्पनी के काग़जात तय्यार किये थे। इस लम्बी-चौड़ी मिल के नींव के पत्थर उन्हीं के बनाये हुए मैमोरेन्डम पर आश्रित थे। सरदार लुहारा सिंह के कुशल-विज्ञापन ने प्रकाश बाबू की योग्यता का ढिंढोरा पीटा था। इस लिए शेयर बेचने का प्रधान श्रेय उन्हीं को पहुँचता था।

सरदार लुहारा सिंह—"मानते हो न! सेठ पोद्दार को वह चित्त लाया हूँ कि बच्चा जीवन भर याद रखेगा बैरिस्टर साहब!"

पुण्डरीकर—"और हमारे कानूनी पाइन्ट की सराहना नहीं करोगे कि जिसे एक बार मुँह में डाल देने के पश्चात वह मछली के प्राणों का ही ग्राहक ही बन जाता है।"

लुहारा सिंह—"सराहना क्यों नहीं करूंगा बैरिस्टर साहब! यह सब हथकंडे तो आपने ही सिखलाये हैं। मैं तो आपको गुरू मानता हूँ।"

पुण्डरीकर मुस्करा कर बोले—"यह हथकंडे वास्तव में सीखना बहुत कठिन है सरदार जी ! परन्तु सीखने के पश्चात् भी आप जैसे योग्य व्यक्ति ही इनका सही-सही प्रयोग कर सकते है। नादान बच्चों के हाथों में तलवार पड़ जाने से वह उल्टी अपनी ही हानि करते देखे गये हैं। एक आप हैं कि जिनका प्रत्येक वार सही और दूसरों पर ही होता है। मैं मुक्त कंठ से आपकी सराहना किये बिना नहीं रह सकता सरदार जी ! अभी कल ही तो प्रकाश बाबू से सुशीला रानी के सम्मुख आपके विषय में मेरी बातें हो रही थीं।"

सरदार लुहारा सिंह—"क्या बातें हो रही थीं ?"

पुण्डरीकर—"यही बातें हो रही थीं, और मैंने स्पष्ट कहदिया कि सरदार लुहारा सिंह जी की कार्य-कुशलता का लोहा आपको मानना ही होगा।"

लुहारा सिंह—"और प्रकाश बाबू ने क्या कहा ?"

पुण्डरीकर—"कहना क्या था ? लोहा मानना ही, पड़ा और रानी सुशीला ने भी आपकी बहुत प्रशंसा की।"

लुहारा सिंह—"सच !"

पुण्डरीकर—"सच नहीं तो क्या तुमसे झूठ बोलूंगा। तुमने तो आज कहा है कि तुम मुझे गुरू-तुल्य मानते हो और मैं एक लम्बे काल से तुम्हें शिष्य मान कर संसार में सफलता पूर्वक चलने के दाव पेंच सिखलाता चला आ रहा हूँ।" यह कह कर पुण्डरीकर ने बोतल की कार्क तोड़ कर मेज पर रखे हुए दोनों गिलासों को ऊपर तक लबालब भर दिया।

दौर पर दौर चलने लगा और मस्ती में झूम-झूम कर सरदार जी इस एकांत कमरे में पंजाबी गाना गाकर नाँच उठे। लाहौर से दिल्ली आने के पश्चात आज जी खोल कर ह्विस्की पीने को मिली थी लुहारा सिंह जी को। प्रकाश बाबू की दरियादिली की इस समय वह मन ही मन सराहना कर रहे थे।

पुण्डरीकर—"सेठ पोद्दार के साथ भी प्रकाश बाबू का वह एग्रीमेन्ट करा दिया है सरदार जी ! कि क्या मजाल जो बच्चा एक छदाम भी निकाल कर ले जा सके। कुछ दिन तो रुपये को बढ़ाता देख कर आत्म-संतोष की भावना से यों ही फूलता रहेगा परन्तु जब उसे अपनी वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान होगा तो कोई असम्भव नहीं कि विष खाकर प्राण त्याग कर दे।"

सरदार लुहारा सिंह—"मर भी जाने दो बैरिस्टर साहब ! सैंकड़ों कीड़े-मकौड़े रोज जीते और मरते हैं। हमने मरने वाले का साथ देना नहीं सीखा। हम तो जीना और जिलाना जानते हैं।"

पुण्डरीकर—"बहुत खूब, सरदार जी ! बहुत खूब ! हमारे और आपके विचारों में कितना एक्य है, मैं कभी-कभी यह देख कर आश्चार्य-चकित रह जाता हूं। ऐसा प्रतीत होता है, चाहे हम दोनों के शरीर विधाता ने दो अवश्य बनाये हैं, परन्तु उनमें विचार-शक्ति का संचार एक ही निर्धारित प्रणाली के अनुसार किया है।"

एक दौर फिर चल गया। मदिरा का खुमार धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा था और दोनों के मस्तिष्क रंगीनियों की ओर आकर्षित होते चले जा रहे थे। अपने जीवन की रंगीनियों का पहिले इतिहास खोल-खोल कर एक ने दूसरे के सानने रखा और फिर विषय रानी सुशीला और मिस केतकी पर जा टिका।

पुण्डरीकर—"प्रकाश बाबू ने भी जीवन की रंगीनियों को खूब परखा है सरदार साहब ! कुछ आकर्षण ही विशेष है उनमें। रुपया और स्त्री, यह दोनों तो उनकी ओर इस प्रकार खिंचे चले आते हैं कि जैसे मिष्टान पर चींटी।"

सरदार जी—"अरे ! मिष्टान-विष्टन नहीं, यह सब पैसे की करामात है बैरिस्टर साहब ! प्रकाश बाबू तो फिर भी कुछ अक्ल और शक्ल रखते हैं। हमने तो गधों पर हूर की परियों को लट्टू होते देखा है। पैसा इस संसार का दूसरा परमेश्वर है बैरिस्टर साहब ! उसके बल से

चाहें तो इन्द्र के अखाड़े की परियों को भी प्रकाश बाबू अपनी कोठी के बागीचे में नचा सकते हैं।"

पुण्डरीकर—"तुम तो गधे हो सरदार जी, गधे !"

सरदार जी—"क्या कहा ?" शराब का गिलास मेज पर रखते हुए, नेत्रों की पुतली लाल करके, सरदार जी बोले, "मुझे आपने गधा कहा, परन्तु मैं आपको गुरु मान चुका हूं। आप कह सकते हैं। खैर, आप कह सकते हैं।" और सरदार जी का क्रोध कुछ शांत हो गया।

पुण्डरीकर ने भी अपने को गुरू के आसन पर ही आरूढ़ करते हुए इस 'गधे' शब्द का प्रयोग सरदार जी के लिए कर दिया था; परन्तु यह रूप बदलता हुआ देखकर उनके होश उड़ने लगे थे। एक बार तो उनके मन में यहाँ तक आया कि भाग खड़े हों, परन्तु वह जानते थे कि सरदार जी से तेज नहीं भाग सकते, इसलिए उनकी इस दुर्बल-मनोवृत्ति ने भी काम नहीं दिया। अन्त में सरदार जी को इस प्रकार शांत होकर नशे में भी विचार-शक्ति को लौटाता हुआ देख कर उनके हृदय में तनिक शांति हुई।

"तुम्हारे साथ बातें करना भी खतरे से खाली नहीं है सरदार जी !" किसी प्रकार लम्बे श्वाँसों को सँभालते हुए बैरिस्टर साहब बोले।

सरदार जी—"जी ! एक तो आपका इतना बड़ा अपमान-सूचक शब्द 'गधा' मैंने सहन किया और उस पर भी आप कहते हैं कि मुझ से आपको खतरा है। बैरिस्टर साहब ! जीवन में पहिली बार झगड़ बैठने का निश्चय करके आज आप पर मैं शांत हुआ बैठा हूँ। नहीं तो अब तक……………।"

पुण्डरीकर—"बोतलें आपस में बजने लगतीं, पुलिस आ जाती और हम दोनों को हवालात में बन्द हो जाना पड़ता। प्रकाश बाबू हमें जमानत पर छुड़ा कर लाते—और इस सब के पश्चात जब अदालत के सम्मुख यह रहस्य उद्घाटित होता कि इस झगड़े के मूल में

था मेरा सरदार जी को 'गधा' कहना तो तुम निश्चित समझलो कि मैजिस्ट्रेट के रजिस्टर में तुम्हारा 'गधा पन' दर्ज हो जाता।"

इसी समय सामने से रानी सुशीला आती दिखलाई दे गईं। दोनों शराब की बोतलें छुपाने का प्रयत्न करने लगे, परन्तु उन्होंने सामने आकर मुस्कराते हुए कहा—"हमसे छुपाने का प्रयत्न न करो सरदार जी ! मैं जानती हूँ कि तुम जैसे वीर और साहसी कार्यकर्त्ता बिना मदिरा के नहीं रह सकते और पुण्डरीकर जैसे मस्तिष्क के जिन (राक्षस) भी मदिरा के सहयोग से ही अपनी गम्भीर तथा नीति-कुशल विचार धारा के प्रखर प्रवाह को संतुलित रखते हैं।"

यह कह कर सौंदर्य की प्रतिमा स्वरूप रानी उनके सम्मुख खड़ी होकर इतने आकर्षण के साथ मुस्कराई कि दोनों मन्त्र-मुग्ध हो गये। "आज जी खोल कर पीना मदिरा ! ऐसा दिवस जीवन में फिर-फिर नहीं आयगा। तुम लोगों के सहयोग से आज तुम्हारे प्रकाश बाबू ने जिस बेल को बो दिया है उसके अंगूरों से प्रार्थना करो कि इससे भी मादक मदिरा तय्यार हो और उसे पीकर न केवल तुम बल्कि सब भारत-वासी एक दिन आनन्द-विभोर हो उठें। तुम्हारा यह मिल जिसकी स्थापना आज की गई है, हमारा नहीं राष्ट्र का है, तुम्हारा है, और हम सब लोग उसके सेवक हैं। आप लोगों की ही भाँति हम भी इसके केवल कर्मचारी मात्र हैं।"

दोनों—"हम दोनों अपने जीवन की सब से मूल्यवान निधियों को प्रकाश बाबू के इस कार्य में जुटा देंगे। आप विश्वास रखें रानी ! कि आज से हमारे जीवन का लक्ष्य उचित और अनुचित का ज्ञान भुलाकर प्रकाश बाबू और आपकी सेवा करना होगा।"

रानी सुशीला—मुस्करा कर चलते हुए बोलीं—"तो बस, फिर मदिरा की सरिता बह निकलेगी तुम्हारे जीवन में।" यह कहकर एक इठलन के साथ वहाँ से चल दीं।

कविवर 'शून्य' जी का स्वागत आज विशेष रूप से किया गया था

और इनके स्वागत के लिए प्रकाश बाबू ने रानी सुशीला को ही नियुक्त किया था। आज का समारोह प्रारम्भ होने से पूर्व ही कवि ने मदिरा के दो पैग चढ़ा लिए थे। यही कारण था कि उनका गला और गले से निकलने वाले स्वर में एक मिठास और आकर्षण आगया था। कवि अपनी धुन में गुनगुना रहा था और आज उसके सामने जो काल्पनिक संसार बिछा हुआ था वह··········

रानी सुशीला—"यह प्लॉट प्रकाश बाबू ने आपके लिए ही तय्यार कराया है। इस पर 'शून्य'-शाला का निर्माण होगा और उस 'शून्य'-शाला में 'शून्य'-ट्रस्ट की स्थापना की जायगी। यह 'शून्य'-ट्रस्ट भारत भर में ही नहीं, वरन् विश्व भर में, कविराज 'शून्य' जी की कला-कृतियों का प्रचार करेगा।"

शून्य जी—"संसार स्वरमय हो उठेगा। मूक विश्व को मैं वाणी प्रदान करूंगा। प्रकाश जैसे गधे का नाम विश्व के कोने-कोने में पहुँचा दूंगा।"

रानी सुशीला—"फिर वही शब्द प्रयोग किया आपने प्रकाश बाबू के लिए। केवल कवि की शक्ति आज अधूरी है और पैसे में भी मैं सर्व शक्तियाँ सन्निहित नहीं मानती। प्रकाश बाबू अपने पैसे के बल के सम्मुख संसार को गधा समझते हैं। और आप······"

'शून्य'जी—"और आप····आप हम दोनों को गधा समझती हैं।" इतना कहकर 'शून्य' जी बड़े वेग के साथ खिलखिला कर हँस पड़े।

रानी सुशीला—"मैं दोनों को गधा नहीं समझती वरन् दोनों का दोनों के स्थान पर सम्मान करती हूँ। जब मैं आप लोगों की यह बातें सुनती हूं तो मुझे इस समस्त उन्नति में अवनति और पतन के खंडहर दृष्टिगोचर होने लगते हैं और प्रोफेसर सुधांशु के शब्द कानों में बड़े नाद साथ के गड़-गड़ करके बज उठते हैं।"

इसी समय सामने से प्रकाश बाबू के साथ प्रोफेसर सुधांशु आते हुए दिखलाई दिये और उन्हें देखकर दूर से ही 'शून्य' जी नमस्कार कर

हुए बोले—"प्रोफेसर साहब ! आपकी आयु बहुत बड़ी है । अभी-अभी रानी सुशीला आपका ही नाम ले रही थीं।"

प्रोफेसर सुधांशु—"मेरा नाम !"

'शून्य' जी—"हाँ हाँ ! आपका ही नाम। यह कहती हैं कि आपका स्थान इनकी दृष्टि में भगवान कृष्ण से भी अधिक है । भगवान कृष्ण ने महाभारत के समय गीता द्वारा कट मरने का आदेश दिया था और आपका आदेश सर्वथा इससे विपरीत शांति पूर्ण उपायों द्वारा संघर्ष को मिटा कर प्रगति की स्थापना करना है। अरे भाई लट्टू हैं यह आपके सिद्धांत पर; परन्तु हमारी समझ में तो आपका सिद्धांत कुछ आता जाता नहीं। हमारे विचार से तो प्रगति का मूल स्रोत संघर्ष है और संघर्ष ही उन्नति का पथ--प्रदर्शक है ।"

प्रोफेसर सुधांश—"आपके विचार प्रकाश बाबू के विचारों से मिलते हैं कवि ! इसलिये मेरी सानुरोध आप से प्रार्थना है कि आप प्रकाश बाबू के इस महान यज्ञ मे सहयोग दें। भारत-राष्ट्र के उत्थान में आप लोगों का यह महान प्रयास सफल हो यह मेरी हार्दिक कामना है। मेरा सैद्धांतिक मतभेद आप लोगों से रहने पर भी सहानुभूति आपके साथ है और यह सर्वदा इसी प्रकार बनी रहेगी ।"

'शून्य' जी—"हमें आपसे यही आशा थी ।"

प्रकाश बाबू—"परन्तु मेरा तो दिल तोड़ दिया आपने प्रोफेसर सुधांशु ! जब मैं अमेरिका से चला था तो मैंने वहाँ अपने एक मित्र से कहा था कि कार्य संचालन के लिए मेरे पास वहाँ मेरे एक मित्र हैं जिनका सहयोग प्राप्त करके मैं अपने लक्ष्य में सफल न हो सकूं यह असम्भव है। आज उस सहयोग-विहीन मैं अपने को पाकर एकाकी सा अनुभव कर रहा हूं। कितना अच्छा होता यदि अपनी समस्त शुभ कामनाओं के साथ आप मेरा कार्य-संचालन-भार सँभाल लेते और मेरे सिर पर केवल ऊपरी व्यवस्था अर्थात फाइनेन्स (पूंजी) की देख रेख का ही भार रह जाता ।"

प्रोफेसर सुधांशु—"अपनी असमर्थ्यता के लिए मैं हृदय से खेद प्रकट करता हूँ प्रकाश बाबू ! क्यों कि सैद्धांतिक एक्य न होने पर सही-सही कार्य-संचालन नहीं हो सकता। मेरी और तुम्हारी नीति में आकाश-पाताल का अन्तर है और यह मत-भेद कार्य के भविष्य पर बुरा प्रभाव भी डाल सकता है। क्यों कि एक ही कार्य यदि दो नीतियों को लेकर संचालित किया जाता है तो उसमें बनने की अपेक्षा बिगड़ने की अधिक संभावना रहती है। ऐसी परिस्थिति में आशा है कि आप मेरी शुभ कामनाएँ ही स्वीकार करेंगे।"

'शून्य' जी—"आज के इस शुभ समारोह में मिस केतकी की अनुपस्थिति बहुत खल रही है प्रकाश बाबू ! क्या उन्हें निमंत्रित न करके..."

प्रकाश बाबू—"उनका क्या है ? आ गया होगा कोई रोगी।" मुँह बनाकर प्रकाश बाबू बोले।

इसके पश्चात चारों व्यक्तियों ने एक ही स्थान पर बैठ कर चाय पी और चाय पर भी इधर-उधर की गप्पें चलती रहीं। प्रकाश बाबू ने अमेरिका में सीखे हुए अपने नये-नये सिस्टम बतलाने प्रारम्भ किये और समझाया कि किस प्रकार वहाँ पर अनेकों कामों का संचालन बिना व्यक्ति के छुए ही हो जाता है। पहिले जिन कामों को करने के लिए हजारों व्यक्तियों की आवश्यकता होती थी वह काम अब एक व्यक्ति द्वारा केवल एक बटन दबाने पर ही पूर्ण हो जाता है।

प्रकाश बाबू—"भोजन के पदार्थ बिना किसी के हाथ से छुए डिब्बों में बन्द हो जाते हैं। उनकी स्वच्छता का क्या कहना है प्रोफेसर साहब ! क्या मजाल जो कहीं पर भी किसी भी वस्तु के ऊपर कोई एक मक्खी या मच्छर बैठ जाय। इसके विपरीत यहाँ भारत में तो मक्खियों को बाकायदा जिमाया जाता है। उनके लिए थाल परस कर रख दिये जाते हैं और उन पर रूमाल ढकने की भी आवश्यकता नहीं समझी जाती।"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु यह दोष स्वास्थ्य-विज्ञान की अशिक्षा

का है, न कि मशीनरी-द्वारा भोजन बनाने अथवा हाथ से भोजन बनाने का। बन्द डिब्बे के भोजन को भी यदि थाल में परस कर बिना ढके रख दिया जाय तो क्या उस पर मक्खियाँ इस लिए बैठना छोड़ देंगी कि वह अमेरिका के सिस्टम द्वारा बिना हाथ से छुए तय्यार किया गया है ? मेरे विचार से समस्या भोजन को डिब्बे में बन्द करने या बटलोई में बना कर रसोई में तय्यार करने की न होकर अविद्या की है, अशिक्षा की है।"

'शून्य' जी कंठ ही कंठ में गुन-गुना रहे थे। प्रकाश बाबू और प्रोफेसर सुधांशु की बातों पर उन्होंने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। चाय समाप्त होने पर प्रकाश बाबू तथा प्रोफेसर साहब वहीं पर बैठे रह गये और रानी सुशीला तथा 'शून्य' जी कार में बैठ कर कोठी पर चले गये। प्रोफेसर साहब तथा प्रकाश बाबू में फिर बातें आरम्भ हुए अभी अधिक देर नहीं हुई थी कि सामने से मिस केतकी की कार आती हुई दिखलाई दी। कार आकर सामने रुक गई और उसमें से मिस केतकी तथा नियाज अहमद उतर पड़े।

प्रकाश बाबू—"कभी समय पर आना तो मिस केतकी ने सीखा ही नहीं प्रोफेसर साहब!" बातें प्रोफेसर साहब से कर रहे थे परन्तु व्यंग्य-बाणों के छूटने की दिशा और लक्ष्य मिस केतकी ही थीं।

प्रोफेसर सुधांशु—"यह कोरा रिमार्क तो मैं पास नहीं कर सकता क्यों कि मेरे अनुभव तो आपके अनुभवों के सर्वथा प्रतिकूल हैं, परन्तु हाँ इतना अवश्य है कि मिस केतकी में किसी भी अवसर, वचन और कार्य के महत्त्व को आँकने की अपनी स्वतंत्र-क्षमता है और उसे चेलेंज नहीं किया जा सकता।"

नियाज अहमद—"प्रोफेसर सुधांशु के कहने की मैं पूरी तरह ताईद करता हूँ।"

मिस केतकी—"परन्तु आप लोगों के कहने और ताईद करने का यह अर्थ नहीं कि प्रकाश बाबू जो कुछ कह रहे हैं वह असत्य है।

प्रकाश बाबू के कथन का मैं समर्थन करती हूँ।" इतना कहकर मिस केतकी धीरे से मुस्करा दीं।

प्रकाश बाबू—"परन्तु आपका कोरा समर्थन ही तो सब कुछ नहीं है मिस केतकी ! समय पर न आकर आपने उत्सव फीका कर दिया। रानी सुशीला और कविवर 'शून्य' जी अभी-अभी आपकी राह देखते हुए गए हैं। बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारा सिंह के नेत्र दुख गए आपकी राह देखते-देखते। और इनके अतिरिक्त भी न जाने कितने आगंतुकों ने आपके आने की प्रतीक्षा की और फिर अन्त में बेचारे दुखी हृदय तथा प्यासे नेत्र लेकर ही यहाँ से विदा हुए।"

मिस केतकी—"मुझे वास्तव में खेद है समय पर न आने का परन्तु अकस्मात मार्ग में ज्यों ही मैं रेलवे-लाइन का फाटक पार करने को थी कि चपरासी ने फाटक बन्द कर दिया। मुझे कार रोकनी पड़ी। कार फाटक के पास तक आने भी न पाई थी कि एक एक्सीडेन्ट (हादसा) हो गया। बेचारा एक ग्वाला अपनी गाय को बचाता हुआ रेलगाड़ी की चपेट में आ गया। भगवान का लाख-लाख धन्यवाद है कि उसके प्राण बच गये। उसे गतचेत अवस्था में उठा कर इर्विन हस्पताल लेजाना पड़ा। बस इसी में यह सब देर हो गई। मैं समझती हूँ कि अब कारण जानकर आपके हृदय का रोष कुछ हलका हो गया होगा।"

प्रकाश बाबू—"इसमें हलका होने का क्या कारण आपने प्रस्तुत किया ? भारत की जन-संख्या प्रति वर्ष बढ़ती जा रही है। एक ग्वाले के मर जाने से कौन कमी आने वाली थी भारत की जन-संख्या में ? मैं इस प्रकार की बातों को केवल बहाना मात्र गिनता हूं, और कुछ नहीं।" मुँह बनाकर प्रकाश बाबू ने कहा।

मिस केतकी ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। प्रोफेसर साहब ने उसे अनसुनी करके टाल दिया परन्तु नियाज, अहमद के हृदय में एक जलन सी पैदा हो गई और प्रकाश बाबू के इस अमानु-

पिक विचार के प्रति घोर घृणा का संचार होने लगा। नियाज बोले कुछ नहीं परन्तु वहाँ बैठना भी उनके लिए असम्भव हो गया। इसलिए खड़े होकर बोले—"अच्छा प्रकाश बाबू ! अब चले। आपकी हाजरी देनी थी, सो दे चले।"

सुधांशु—"जा रहे हो नियाज ! चलो मुझे भी चलना है। अच्छा प्रकाश बाबू ! मुझे भी आज्ञा दीजिए। चल रहा हूँ इस समय। फिर किसी दिन भेंट होगी। ईश्वर करे आप अपनी योजनाओं में फलीभूत हों। मेरी शुभ कामनाएँ सर्वदा आपके साथ रहेंगी।"

प्रकाश बाबू—"जा रहे हैं आप भी ! जाइए, परन्तु कोरी शुभ-कामनाएँ ही देकर आप इस प्रकार भाग नहीं सकते।"

सुधांशु—"भागने वाली बात नहीं है प्रकाश बाबू ! यदि मेरा सैद्धान्तिक मतभेद न होता तो मैं सहर्ष तुम्हारे काम में हाथ बँटाता, परन्तु तुम जानते ही हो कि मैं सिद्धान्तों का बलिदान करने से पहिले अपने प्राणों का बलिदान करना उचित समझता हूं।"

यह दोनों चले गये। प्रकाश बाबू और मिस केतकी में न जाने कब तक इधर-उधर की बातें चलती रहीं और फिर प्रकाश बाबू ने उन्हें अपना समस्त प्लान तथा नक्शे इत्यादि दिखला कर प्लाटों की सीमाएँ दिखलाईं। मिस केतकी को यह सब देख कर बहुत प्रसन्नता हुई। प्रकाश बाबू की योग्यता और कार्य-व्यवस्था को देख कर उसके हृदय में एक उमंग भरी आशा की लहर दौड़ गई। इस वीरान पड़े मैदान में, उसने कल्पना के आकाश में देखा, कि एक जगमाती हुई दुनियाँ नजर आ रही थी। एक स्वप्न का संसार उसके नेत्रों में उतर आया। उसने देखा कि बड़े-बड़े बाजार हैं, सिनेमा घर हैं, बालरूम है, होटल हैं, रेस्टोरेन्ट हैं," डांसिंग रूम हैं, क्लब हैं, पार्क हैं, जीवन का स्वच्छंद-विहार है, नर-नारियों के आनन्द-मग्न जोड़े इधर-उधर इठला-इठला कर बल खाते हुए घूम रहे हैं—यह स्वर्ग है। परन्तु अभी यह सब वीरान मैदान था।

[१०]

प्रोफेसर सुधांशु नियाज अहमद को साथ लेकर सड़क के दूसरी ओर उस ग्राम में जा पहुँचे जहाँ उनकी सम्मिलित योजनाएँ प्रसारित हो रही थीं। इस ग्राम का नाम भी प्रोफेसर साहब ने टाँडा खेड़ी से बदल कर बनस्थली रख दिया था और यह नया नाम उस ग्राम वासियों को बहुत पसंद आया था।

प्रोफेसर सुधांशु—"नियाज भय्या ! परमात्मा की असीम अनुकम्पा से हमारी 'बनस्थली-शू-कॉपरेटिव-सोसाइटी' बहुत सुन्दर कार्य कर रही है। हमारे यहाँ के माल की खपत अब केवल देहली में ही नहीं है, वरन् बाहर के नगरों में भी हो रही है। कुछ व्यापारी हमारे माल की एजेन्सी लेना चाहते हैं। अभी कल ही बल्लीमारान का एक बड़ा व्यापारी मेरे पास इसी प्रयोजन से आया था।"

नियाज अहमद—"मैं तो इसमें कोई हानि नहीं समझता। उक्त व्यापारी यदि कुछ रुपया एडवांस कर सके तो हमें यह अवश्य कर लेना चाहिए। एक मुश्त रुपया हाथ में आजाने से हम फेक्ट्री की कुछ खास-खास जरूरी चीजें खरीद सकते हैं और सिलाई की मशीनें भी बढ़ाकर अपने माल की तय्यारी में बढ़ोतरी कर सकते हैं। साथ ही कच्चा माल जो हमें रोजाना जाकर लाना होता है उस तवालत से भी हम बच जाँयगे और हमारा बहुत सा समय जो इन व्यवस्थाओं को जुटाने में नष्ट हो जाता है, वह हम किसी अन्य योजना पर लगा सकेंगे।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तुम्हारा विचार मेरे विचार से मिलता है। इसी लिए सोसाइटी की एक अंतरङ्ग-सभा बुलाकर उसके सम्मुख यह प्रस्ताव रख दो। मैंने एक डेयरी फार्मिंग की योजना तय्यार की है

'जिसके द्वारा हम दिल्ली-नगर-वासियों को विशुद्ध मक्खन, घी और दूध सप्लाई (बाँटना) कर सकेंगे।"

नियाज अहमद—"योजना तो जरूरत के मुताबिक है, परन्तु इसके लिए पूंजी कहाँ से पायेंगे। भैंसें खरीदने के लिए कुछ रुपये की जरूरत होगी। फिर मक्खन तय्यार करने के लिए साधारण मशीनों की भी हमें जरूरत होगी।"

प्रोफेसर सुधांशु—"रुपया वास्तव में एक समस्या है परन्तु इस समस्या का हल मैंने खोज निकाला है। प्रथम तो हम 'बनस्थली-कॉप-रेटिव-डेयरी-फार्मिंग' को स्थापित करके उसके कुछ शेयर बेच डालेंगे और यदि उन शेयरों के रुपये से पूरा न हुआ तो 'बनस्थली-शू-कॉप-रेटिव-सोसाइटी' से कुछ ऋण लेने की व्यवस्था करेंगे और यदि तब भी काम न चला तो हमें शहर के कुछ बड़े-बड़े दूध के दूकानदारों को अपनी सोसाइटी का सदस्य बनाकर उन्हें संगठन में लाना होगा। यह सब व्यवस्था मौखिक रूप से मैं पूरी कर चुका हूं। अब केवल सोसाइटी के कागजात तय्यार करके उसका रजिस्ट्रेशन करना बाकी है।"

नियाज अहमद आनन्द में झूम उठा और उसने आनंद-विभोर होकर प्रोफेसर सुधांशु को कौली में भरकर ऊपर उठा लिया। "भय्या! तुम्हारा दिमाग भी वह काम करता है कि जिसे............"

सुधांशु—"बस रहने दो अधिक प्रशंसा करने को। तुम पहिली ही बस से कागजात लेकर लौट जाओ और किसी प्रकार आज अथवा कल तक इसे रजिस्टर्ड करालो। फिर देखना मैं एक ही दिन में तुम्हें क्या चमत्कार दिखलाता हूं।"

दोनों सज्जन इस प्रकार बातें करते हुए बनस्थली में पहुँच गये और वहाँ स्कूल, जिसे हमने पहिले चौपाल कहकर पुकारा है, में जाकर प्रोफेसर साहब ने कुछ सोसाइटी के आवश्यक कागज नियाज साहब को सौंप दिये और नियाज अहमद उन्हें लेकर उल्टे ही पाँव बस-स्टैंड (जहाँ बस खड़ी होती है) की ओर चल दिये।

इस स्कूल में अब एक सौ पचास बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे थे और उन सभी के पहिनने के वस्त्र भी साफ तथा एक जैसे थे। बच्चों के बैठने के लिए पृथ्वी पर ही चटाईयाँ बिछी हुई थीं। अध्यापकों के बैठने के लिए मूढ़ों का प्रबन्ध हो गया था। इस समय चार प्रथक-प्रथक श्रेणियों के लिए चार कमरे थे और चारों में चार अध्यापक। प्रोफेसर सुधांशु ने बहुत शीघ्र दौड़ धूप करके इस विद्यालय को सरकारी सहायता दिला दी थी और इसकी शेष आवश्यकताओं को पूरी करने का भार, 'बनस्थली-शू-कॉपरेटिव-सोसाइटी' ने अपने ऊपर ले लिया था। स्कूल के बच्चों को पुस्तकें भी बिना मूल्य के सोसाइटी द्वारा ही देने की व्यवस्था की गई थी।

दोपहर को छुट्टी में बच्चों को नाश्ता दिया जाता था और संध्या को उनके खेलने के लिए चार सुन्दर मैदानों की व्यवस्था की गई थी। फुटबाल तथा जमनास्टिक का वहाँ पर सुन्दर प्रबन्ध था। एक ओर कबड्डी खेलने का मैदान था और दूसरी ओर मल्ह-युद्ध की शिक्षा देने के लिए तीन अखाड़े खोदे गये थे।

बनस्थली के रहने वालों को अपनी आय में एक स्थिरता दिखलाई देने लगी थी और उनके जीवन का स्तर भी कुछ ऊँचा होता जा रहा था। जिस विद्यालय में दिन के अन्दर बच्चों को शिक्षा दी जाती थी वहीं पर संध्या को प्रौढ व्यक्तियों के लिए समाज-शिक्षा का प्रबन्ध किया गया था। संध्या के समय यहाँ पर दोसौ से कम व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करने के लिए एकत्रित नहीं होते थे। साधारण हिन्दी का ज्ञान उन्हें हो गया था और वह नागरिक-शिक्षा, स्वास्थ तथा इतिहास सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करते जा रहे थे। नित्य प्रति के दैनिक समाचारों में भी उन्हें रुचि होने लगी थी और उन्हें जानने की एक भूख सी उनकी आत्मा में घर करती जा रही थी।

अब प्रोफ़ेसर साहब के सम्मुख बनस्थली के खान-पान का प्रश्न था। यहाँ के पौढ तथा बच्चों के स्वास्थ्य के लिए अच्छा घी-दूध मिलना

आवश्यक था और उसकी उचित व्यवस्था के लिए ही प्रोफेसर साहब ने डेयरी की योजना तय्यार की थी। उन्हें पूर्ण विश्वास था कि 'बनस्थली-डेयरी-फार्मिङ्ग-सोसाइटी' का कार्य संचालित होने पर निश्चित रूप से उनके स्वप्न साकार हो उठेंगे। कोई कारण नहीं था कि हाथ के सुयोग्य कारीगरों की यह बस्ती धन-धान्य से पूरित होकर एक दिन स्वर्ग नहीं बन जायगी।

दोपहर बारह बजे का समय हो गया और मिस केतकी की कार सामने से आती दिखलाई दी। मिस केतकी का यह निश्चित कार्य-क्रम था कि वह अपने चिकित्सालय में जाने से पूर्व पाँच मिनट के लिए प्रोफेसर सुधांशु के तख्त के पास मूढ़ा डालकर बैठ जाती थीं। मूढ़ा डालकर बैठते हुए मिस केतकी बोलीं—"आपने अवश्य आज सराहना की होगी प्रकाश बाबू की योजनाओं की प्रोफेसर साहब! कमाल का प्लानिंग (रूप रेखा) है। जिस दिन यह विशाल योजना फलीभूत होकर कार्य-रूप में परिणित होगी तो वास्तव में यहाँ का रूप ही बदल जायगा। आपकी योजनाएँ तो उसके सामने बचकानी सी प्रतीत होंगी।" और इतना कहकर बाँये हाथ की दो उँगलियों से मुख-कमल पर मँडराने वाली लटों को उठा कर मुस्कराते हुए कान पर डाल लिया।

प्रोफेसर सुधांशु एक पुस्तक पढ़ रहे थे। ध्यान पूर्वक पुस्तक पर ही दृष्टि गड़ाये मुस्कराते हुए बोले, "केतकी! कवि ने कितना सुन्दर लिखा है— "Child is Father of the man" अर्थात बच्चे में प्रौढ के सभी गुण वर्त्तमान रहते हैं। यह बच्चा जब स्वयं एक दिन अपनी शक्तियों को संगठित करके प्रौढ बनेगा तो तभी इसमें वास्तविक शक्ति का संचार होगा। यदि यों ही एक दिन में हाड़ मांस का पुतला बना कर तय्यार कर दिया जाय तो क्या.........."

मिस केतकी मुस्कराती हुई चिकित्सालय की ओर चल दीं और

प्रोफेसर साहब की बात बीच में ही रह गई। मिस केतकी ने औषधालय की ओर दो चार पग ही रखे थे कि प्रोफेसर साहब बोले—"तुम्हें मेरी बात पसन्द नहीं आई मिस केतकी ! परन्तु यह जो कुछ भी मैंने कहा इसमें मेरा कुछ नहीं है। यह देखो न, इस पुस्तक में कविता की व्याख्या ही इस प्रकार की गई है।"

मिस केतकी—"अब व्याख्या लौटते समय सुनूंगी। मेरे रोगी मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं।" और मिस केतकी औषधालय में चली गईं।

इस ग्राम की स्त्रियों को जो सबसे बड़ी बीमारी थी और जिसकी रोक थाम में यहाँ के नर-नारी एक युग से परेशान थे वह था स्त्रियों के सिर पर भूत का चढ़ जाना। जिस समय किसी स्त्री को यह भूत चढ़ जाता था तो वह स्त्री नाँचने और गाने लगती थी, कभी दाँत किट-किटाती थी और कभी अचेत हो जाती थी, कभी हँसती मुस्कराती थी और कभी रोने लगती थी। गांव से दो मील दूरी पर एक मंदिर था जिसके अन्दर एक सयाना भगत रहता था। इन्हीं भगत महाशय को उस समय बुलाया जाता था और यह मस्तक पर लम्बा टीका लगा कर गले में जूतियों की माला पहिन कर उछलते कूदते हुए, भूत से युद्ध करते हुए, उस स्त्री के केश पकड़ कर झँझोड़ते थे और इस प्रकार युद्ध में भूत को परास्त करके उसे भगाने का प्रयत्न करते थे। जोर-जोर से थालियाँ बजाई जाती थीं और भगत महाशय मदिरा का पान करके मस्ती में उस स्त्री पर भूत के बहाने करारी मार लगाते थे।

आज एक ऐसी ही रोगिणी की सूचना मिस केतकी को मिली। नई बहू के सिर भूत आया हुआ था। सास और ससुर का विचार सयाने भगत को बुला कर भूत उतरवाने का था परन्तु पति इस चीज के लिए सहमत न हुआ और वह सीधा मिस केतकी के पास आया। मिस केतकी ने रोगिणी को जाकर देखा तो उसे हिस्टीरिया का दौरा पड़ रहा था।

मिस केतकी—"देखिए ! यह भूत-इत्यादि कुछ नहीं है, एक बीमारी है। स्त्रियों को साधारणतः यह हो जाती है । आप मेरे साथ चलकर औषधालय से औषधि ले आइए, यह सचेत हो जायगी।"

और वास्तव में वह स्त्री बहुत शीघ्र सचेत हो गई। इस बहू के ठीक हो जाने से मिस केतकी की ख्याति आस-पास में बिजली की भाँति फैल गई और बहुत से लोगों को विश्वास हो गया कि यह इस प्रकार की कुछ बीमारियाँ ही होती हैं जिन्हें भूत परेत कह कर कुछ ढोंगी लोग सीधी-सादी जनता को धोखा देते हैं।

मिस केतकी अपना औषधालय का कार्य-क्रम समाप्त करके जब फिर प्रोफेसर सुधांशु के पास आईं तो प्रोफेसर साहब बोले—"हाँ मिस केतकी ! तो क्या उस पुतले में जीवन के दर्शन तुम कर सकोगी ? वह अन्दर से खोखला है केतकी ! और जो वस्तु अन्दर से खोखली है उसमें बल तो नहीं होगा, केवल ऊपर की टीप-टाप मात्र रहेगी । मैं पूछता हूं क्या तुम वास्तव में सिद्धान्त रूप से मेरे मत से सहमत नहीं हो ?"

मिस केतकी—"आपके मत से सहमत न होती तो आप की योजना में सक्रिय सहयोग किस प्रकार दे पाती ? इधर कुछ दिन से तो मेरा विचार यह हो रहा है कि मैं अपना चिकित्सालय यहीं पर कोई प्लाट लेकर उसमें बना लूं और देहली में प्रेक्टिस करना बिल्कुल ही बन्द कर दूं।"

प्रोफेसर सुधांशु—"सच ! क्या वास्तव में सच कह रही हो केतकी ? तुमने मेरे मुख की बात छीन ली। सच जानो, तुमने मेरे हृदय की भावना को परख लिया। मैं कह नहीं सकता मुझे कितनी प्रसन्नता हुई है इस समय तुम्हारी यह बात सुनकर।"

मिस केतकी—"मैं कई दिन से विचार कर रही हूं कि देहली जैसे विशाल नगर में तो डाक्टरी-सहायता मिलने के अन्य भी न जाने कितने साधन हैं, परन्तु यहाँ देहात में यदि कोई अवसर आ पड़े, तो इन बेचारों का क्या बनता होगा ? किसी व्यक्ति का केवल इस लिए मर जाना

कि समय पर डाक्टरी सहायता न मिल सकी, कितना दुखद है ? और उसके अतिरिक्त फिर मुझे कुछ ऐसा आनन्द आने लगा है यहाँ के वातावरण में कि दिल्ली की भीड़-भाड़ और व्यस्त-जीवन कुछ अप्रिय-सा प्रतीत हो चला है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"वह जीवन अशांत है केतकी ! और यहाँ चारों ओर प्रकृति का सुन्दर, सुखद, शीतल और आशा-प्रद वायु-मंडल फैला हुआ है। जीवन की शृंखलाएँ जो वहाँ जकड़ी हुई हैं, यहाँ उनमें स्वतन्त्रता है, लड़ियाँ खुली पड़ी हैं, बन्धन-विमुक्त। मानव के विकास का कार्य-क्रम यहाँ स्वच्छन्दता प्राप्त करता है और वहाँ का मानव संघर्ष की दुनियाँ का एक कल-पुर्जा बनकर रह जाता है, वहाँ उसकी विचार-शक्ति का धीरे-धीरे ह्रास हो रहा है और जीवन में हृदय-हीनता जन्म लेती जा रही है।

प्रकाश बाबू की योजनाओं का लक्ष्य यही है, जिससे ऊब कर तुम्हारे मन में यहाँ आने की उत्कंठा उत्पन्न हुई। वहाँ मानव-समाज का विकास नहीं वरन् मानव-समाज का वर्गीकरण करके उसकी शक्तियों का अपव्यय पारस्परिक संघर्षों द्वारा होना प्रारम्भ हो जाता है। यह योजना की रूप-रेखा दूषित है और उसमें जो महत्वाकांक्षाएँ पल रही हैं उनके फलीभूत करने में जिन साधनों का जिन-जिन रूपों में प्रयोग किया जाता है और किया जायगा वह राष्ट्र के उत्थान में बाधक होंगे, सहायक नहीं। मैं इसे निर्माण की योजना नहीं मानता। फिर भारत की समस्याओं का हल भी मुझे इसमें नहीं दिखलाई देता। यह योजनाएँ भारत में बेकारी और बेरोजगारी को जन्म देंगी, जिसका प्रभाव भारतीय समाज, राष्ट्र और देश तीनों पर ही समान रूप से बुरा पड़ेगा।"

मिस केतकी चुपचाप यह सब सुनती जा रही थीं और वास्तव में अनुभव कर रही थीं कि प्रोफेसर सुधांशु जो कुछ कह रहे हैं उसमें एक सैद्धान्तिक सत्य की महान रूपरेखा है, राष्ट्र-संचालन की एक निश्चित योजना है। यह योजना सब की भलाई में अपनी भलाई और

अपने सुख की कल्पना करती है, सबके सहयोग में अपने सहयोग की आहुति देती है, सबकी उमंगों और आकांक्षाओं के नर्त्तन में अपने भविष्य के सुख-स्वप्नों की आशा करती है—भारत की प्राचीन परम्परा का यह निखरा हुआ रूप है। परन्तु इसके ठीक विपरीत प्रकाश बाबू की योजना एकतन्त्रात्मक सत्ता का वह लघु-रूप है, जो अपने में उन विशाल योजनाओं की कल्पना कर रही है, जिनके मुख में मानव इस प्रकार निगला जा सके जैसे सरिता की गहरी धारा अपने सौन्दर्य पर रिझाकर स्नान करने वाले यात्री को अपनी लहरों में समेट कर गहन गर्त्त में ले जाती है। रूप सुन्दर होने पर भी इस योजना का हृदय कलुषित है। सब के विनाश और पतन में यह अपने उत्थान की रूप-रेखा बनाती है, युवकों के शव पर चलकर अपने शिशु का पालन करने चलती है। इस योजना के हृदय में विद्वेष की ज्वाला दहक रही है और यह अनुभव करके मिस केतकी के मस्तिष्क में ऐसी विकलता हुई कि वह छटपटाने लगीं और धीरे-धीरे अपने शब्दों को संधानते हुए बोलीं—"प्रोफेसर साहब ! कुछ समझ काम नहीं देती। आप लोगों की इन योजनाओं का सम्बन्ध राजनीति की गहरी और कुटिल चालों से है। मानव के हितों को सामने रखकर उनके अन्तर में क्या छुपा हुआ है इसका सही-सही अनुमान लगाना मेरे लिए नितान्त असम्भव है। कभी-कभी सोचती हूं कि व्यर्थ के इन झमेलों में न फँसकर मैं अपना कार्य करूं। मेरे काम में, मैं जानती हूँ, मानव-समाज की सेवा निहित है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"निःस्सन्देह मिस केतकी ! निःस्सन्देह ! आप यदि चाहें तो मानव-सेवा का वह ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत कर सकती है कि जिसके सम्मुख बड़ी-बड़ी योजनाएँ फीकी पड़ जाँयगी। तुम्हारी यह योजना मेरी विशाल-योजना का एक अभिन्न अंग बन जायगा, और उसके बल पर मैं बहुत-सी छोटी-छोटी उप-योजनाएँ प्रस्तुत करके यहाँ के ग्रामीण-जीवन का स्तर ऊँचा ले जा सकूंगा। मैं

चाहता हूं कि इन आस-पास की बस्तियों का कायाकल्प हो जाय और इनका नव-निर्माण सहयोग तथा प्रेम की भावना को लेकर हो। एक के उत्थान में दूसरा सहायक हो और दूसरे की उन्नति में पहिले के समस्त साधन जुट जाँय। क्या दे सकोगी तुम सहयोग मेरी इस योजना में ?"

मिस केतकी—"निश्चित रूप से।" गम्भीरता पूर्वक कहा।

सुधांशु—"तो चलो मैं तुम्हें वह स्थान दिखाता हूं जो मैंने तुम्हारे रहने और हस्पताल स्थापित करने के लिए अपने विचार से निर्धारित किया है।" और प्रसन्नता पूर्वक मिस केतकी प्रोफेसर सुधांशु के साथ उठ कर चल दीं।

मिस केतकी के पग एक विशेष उमङ्ग के साथ उस दिशा में अग्रसर हो रहे थे। वह धीरे-धीरे मुस्करा कर बोलीं—"तब क्या आपने पहिले ही अपने मन में धारणा बनाली थी कि मैं आपके प्रस्ताव को मान लूंगी ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु आज तो वह प्रस्ताव मेरा न होकर आपका अपना ही प्रस्ताव है।" कहते हुए केतकी के मादक मुस्कान भरे नेत्रों पर एक बार प्रोफेसर साहब ने घूम कर देखा।

मिस केतकी—"हाँ, मेरा ही है। मेरा मन वास्तव में कुछ ऊब-सा आता है कभी-कभी प्रोफेसर साहब ! और जब मन ऊबता है तो वह सीधा बनस्थली की तरफ ही दौड़ता है। इस लिए कल मैंने विचार किया कि मैं बनस्थली में ही जाकर क्यों न रहने लगूं ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"तुमने बहुत सुन्दर विचार किया केतकी ! तुम्हारे यहाँ आ जाने से यहाँ की स्त्रियों में जाग्रति का संचार होगा और मेरे विचारों का एक सही दृष्टिकोण उनके पास तक पहुँचाने का मुझे माध्यम मिल जायगा।"

जो स्थान प्रोफेसर साहब ने मिस केतकी के लिए चुना था वह उन्हें बहुत पसन्द आया। स्थान वास्तव में बहुत ही रमणीक था। मकान कच्चा अवश्य था, परन्तु बहुत स्वच्छ तथा सुथरा और विशेष

रूप से खुला हुआ बनवाया गया था। उसकी दीवारों की लिपाई चिकनी मिट्टी से करा कर उस पर कलई तथा डिसटैम्पर हो जाने के पश्चात वह सीमेन्ट की प्लास्टर की हुई कोठी सा प्रतीत होता था।

मिस केतकी—"अरे! यह तो आपने बँगला बनवा डाला मेरे लिए।"

सुधांशु—"और नहीं तो क्या? प्रकाश बाबू यदि महल बना सकते हैं तो क्या हम एक साधारण-सा कच्चा मकान बनाने से भी गये? परन्तु जो कुछ भी है यह सो वह यह है। मकान कच्चा अवश्य है परन्तु गाँव के लोगों ने मिलकर यह बनाया खूब है।"

मिस केतकी—"कच्चा! क्या वास्तव में यह कच्चा मकान है? तब तो खूब ही बनाया है। बनस्थली के वह लोग बधाई के पात्र हैं जिन्होंने मेरी आँखों को धोखा दिया।"

प्रोफेसर सुधांशु—"और मैं उनकी ओर से बधाई आपको देता हूं मिस केतकी! कि आपने उनके इस तुच्छ प्रेमोपहार को इतने सम्मान के साथ स्वीकार कर लिया।"

केतकी लजा कर कुम्हलाई-सी मन-ही-मन प्रसन्न परन्तु कुछ बोली नहीं। बड़े उत्साह तथा हर्ष के साथ उस मकान का कोना-कोना घूम कर देखा। उसने देखा, उसके सामने का बागीचा, जिसमें सुन्दर फुलबाड़ी वहाँ के बच्चों ने लगाई थी, बहुत ही सुन्दर था।

[११]

रानी सुशीला के नाम प्रकाश बाबू ने अपने क्लॉथ-मिल के दस लाख रुपये के शेयर कर दिये और इसके अतिरिक्त दो लाख रुपया नकद भी उसके हाथ लगा। रानी सुशीला के मन में अधिकाधिक धन प्राप्त करने की प्रबल महत्त्वकांक्षा थी और इसी लिए उसने एक समय भारत के कुछ क्रांतिकारियों से भी अपना सम्बन्ध स्थापित किया था; गुप्त रूप से उन सरकारी और गैर सरकारी डकैतियों में भी सहयोग दिया था कि जिन से अतुल धन-राशि उपलब्ध होने की आशा थी, परन्तु रानी का वह दाव खाली ही गया। इसके पश्चात कुछ दिन प्रोफेसर सधांशु की टोली में रहकर कांग्रेसी बाना धारण कर, नाम, पद और धन की प्रतीक्षा में भी समय व्यतीत किया परन्तु जब कांग्रेस-हाई-कमाण्ड द्वारा प्रस्तावित मंत्री-पद को भी सुधांशु ने अस्वीकार कर दिया और अन्त में अपनी बची-कुची प्रोफेसरी त्याग दी, तो उस ओर से भी रानी को निराश होकर किसी अन्य दिशा में अपनी महत्त्वा-कांक्षाओं के पर फैलाने पड़े। कला और कला द्वारा पिस-पिस कर गरीबी में केवल छिछली साधारण सी ख्यति के आश्रय पर श्री 'शून्य' जी द्वारा अपने जीवन को संचालित होता हुआ भी वह नहीं देख सकती थी।

परन्तु रानी सुशीला एक अमूल्य रत्न थी, इस सत्य से इन्कार न तो क्रांतिकारी नेता, न प्रोफेसर सधांशु और न कविवर 'शून्य' जी ही कर सके थे। रत्न के पारखी प्रकाश बाबू तो रत्न-संचय करने वाला अपने को भारत का एकाकी व्यापारी मानते थे और अब तो इस सत्य को मानने में रानी सुशीला को भी कुछ संदेह नहीं था, भ्रम नहीं था, आनाकनी नहीं थी। देवी देवता वाली परिपाटी को सुशीला ने प्रचीन

तथा रूढ़िवादी समझ कर जीवन में कोई विशेष महत्व नहीं दिया और इस महत्व न देने के मार्ग में आपत्ति प्रस्तुत करने का अवकाश प्रकाश बाबू के पास भी नहीं था।

'शून्य' जी—"रानी तुमने सुना ! कल प्रकाश बाबू को जब मैंने तुम्हारी कविता सुनाई, तो सच जानो कि वह आनंद-विभोर हो उठे और उन्होंने कहा 'शून्य' जी तुरन्त इस रचना को प्रकापित करने और भारत के कोने-कोने में पहुँचाने के लिए एक मासिक-पत्रिका प्रकाशित करो।"

रानी सुशीला—"सच !"

'शून्य' जी—"सच नहीं तो क्या झूठ ! उन्होंने कहा है कि यदि इस पत्रिका को प्रकाशित करने के लिए विलायत से भी कोई मशीन मँगानी पड़े तो तुरन्त आर्डर दो, परन्तु पत्रिका भारत में अपने प्रकार की अकेली ही होनी चाहिए।"

रानी सुशीला—"फिर आपने क्या कहा ?"

'शून्य' जी—"मैंने क्या कहा ? तुम नहीं समझ सकतीं रानी ! कि मैंने क्या कहा होगा। बस मैंने जो कुछ भी कहा, वह ठीक ही कहा होगा। मुझे इस समय स्वयँ स्मरण नहीं हो रहा है कि मैंने क्या कहा होगा। मैं कल्पना के संसार में खो गया और स्वप्न का वह सुनहला चित्र मेरे नेत्रों के सम्मुख उतर आया कि जिसमें तुम वीणा लिए मेरी भावना के तारों पर अपनी कोमल ऊँगलियों को धीरे-धीरे फेर रही थीं। वह चित्र रानी ! छप कर जब उस पत्रिका में प्रकाशित हुआ तो संसार ने कविता का चित्र देखा और कवि की आत्मा ने उसके अन्दर से झाँक कर अपनी सफलता को चुमकारा। मैं अपने में नहीं था उस समज रानी ! मैं क्या उत्तर देता ?"

'शून्य' जी के लिए एकांत स्थान उपलब्ध था और उस में जिस क़िस्म की भी मदिरा वह पीना पसंद करते थे, प्रस्तुत की जाती थी। 'शून्य' जी को मदिरा पिलाने में अथवा किसी भी कलाकार, नेता

या क्रांतिकारी को मदिरा पिलाने में रानी सुशीला को संकोच नहीं होता था। वह जानती थी कि इन लोगों की विशेष योजना और अनुभूति को जाग्रत करने के लिए मदिरा का पान करना नितान्त आवश्यक है। विजया किसी समय में भारत में पी जाती थी और सोम-रस का भी पान होता था परन्तु आज का युग उन गत-युगों से बहुत प्रगतिशील हो चुका है। विजया में प्रगति नहीं, आलस्य है, शिथिलता है, विचार हैं पर उत्साह नहीं। धर्म-ग्रन्थ लिखने का युग समाप्त हो चुका और दर्शन तथा रोमांस के बल पर वर्त्तमान-प्रगति के युग का निर्माण नहीं हो सकता।

बातों का विषय बदल कर पत्रिका के विषय और प्रगति से होती हुई विचार-धारा मदिरा और विजया पर ही आ टिकी। प्रकाश बाबू के कवि लोगों को विजया पीने वाले सुझाव का समर्थन कविवर 'शून्य' जी से प्राप्त न हो सका और उन्होंने कड़क कर कह दिया—"महाशय! जीवन की स्फूर्ति के लिए विजया जैसी वस्तु का पान नहीं किया जा सकता। मैं देख रहा हूँ कि इधर कुछ दिन से आपकी प्रवृत्ति धर्म की ओर होती जा रही है, परन्तु मेरी तो आपके भगवान-वगवान में कोई आस्था नहीं। मैं तो मनुष्य को ही भगवान् मानकर उसी से डर सकता हूँ। तुम जानती हो रानी! कि प्रकाश बाबू ने मदिरा के स्थान पर विजया पीने का सुझाव क्यों प्रस्तुत किया?"

रानी सुशीला—"हाँ क्यों प्रस्तुत किया आपके विचार से?"

'शून्य' जी—"मेरे विचार को जाने दो रानी! और बस अब जाने ही दो इस विषय को। आओ मैं तुम्हें आज प्रोफेसर सुधांशु की योजना दिखला कर लाता हूँ। तुम भी मान जाओगी उस व्यक्ति के व्यक्तित्व को।"

रानी सुशीला—"मानती यदि नहीं तो क्या यों ही दो वर्ष उनके सम्पर्क में व्यतीत करती, परन्तु यह मैं मान नहीं सकती कि बिना धन के कोई भी कार्य हो सकता है। मानव-जीवन के प्रत्येक अङ्ग को पुष्ट

करने के लिए धन की आवश्यकता होती है।"

कविवर 'शून्य' जी ने रानी सुशीला की इस बात को अनसुनी करते हुए कहा—"प्रोफेसर साहब राष्ट्र-निर्माण का जो ढाँचा प्रस्तुत कर रहे हैं वह ढाँचा मानव-जीवन की असमानताओं को नष्ट करके उसे उस स्तर पर लाने का प्रयत्न करेगा जिसमें व्यक्ति का हृदय दर्पण के समान स्वच्छ हो और वह एक दूसरे को अपना शत्रु न समझ कर साथी समझे। परन्तु चलो न ! देर हो रही है।"

रानी सुशीला—"देर !"

'शून्य' जी—"हाँ देर रानी ! आज प्रोफेसर साहब अपनी नई योजना का उद्घाटन कर रहे हैं। प्रकाश बाबू और तुम्हें निमंत्रित किया है। प्रकाश बाबू नहीं जा सकेंगे। वह मुझे कह गये है कि..."

रानी सुशीला—"परन्तु प्रोफेसर साहब को मेरे पास स्वतंत्र निमंत्रण भेजना चाहिए था।" आँखें घुमा कर कहा।

'शून्य' जी मुस्करा कर बोले—"यह वास्तव में भूल हुई प्रोफेसर साहब से। भविष्य में उन्हें ऐसा ही करने का आदेश दिया जायगा।"

रानी सुशीला मुस्कराती हुई अपने कमरे में चली गई और बहुत शीघ्र ठाट-बाट के साथ बन-ठन कर होठों पर लिप-स्टिक इत्यादि लगा कर कमर पर बल खाती हुई दो चोटियाँ, जिनमें दो गुलाब के नकली फूल लगे थे, लटकाये हुए, नंगे सिर बाहर निकल आई। घंटी बजा कर चपरासी को बुलाया और उसे ड्राइवर को पोर्टिगो में कार लाने का आदेश दिया। पाँच मिनट पश्चात बाहर कार का हार्न बजा और 'शून्य' जी के साथ रानी सुशीला कार में जाकर बैठ गईं।

कार जिस समय बनस्थली में पहुँची तो वहाँ का रूप-रङ्ग ही बदला हुआ था। बनस्थली अब एक ग्राम न रहकर साधारण सा कसबा बनता जा रही थी। यहाँ के रहने वालों की सभी आवश्यकताओं के अनुसार कॉपरेटिव स्टोर्स खुल जाने से एक छोटा सुन्दर सा बाजार बन गया था और मकान कच्चे अवश्य थे परन्तु सफाई में पक्कों के कान काट

रहे थे। आज यहाँ पर विशेष रूप से चहल-पहल थी और नगर के सभी रहने वाले साफ कपड़े पहिने इधर-उधर घूम रहे थे। नगर के सब कारोबारों में आज आधे दिन की छुट्टी थी।

कविवर 'शून्य' जी तथा रानी सुशीला का नियाज अहमद ने आगे बढ़ कर स्वागत किया और उन्हें आदर के साथ मञ्च पर ले गये। प्रोफेसर सुधांशु और केतकी भी वहाँ पर बैठे हुए थे तथा दिल्ली शहर के अन्य कई सम्मानित व्यक्ति मञ्च की शोभा बढ़ा रहे थे। रानी सुशीला के पहुँचते ही मञ्च पर काना-फूंसी होनी आरम्भ हो गई। एक ने कहा—"यही हैं भाई! वह रानी सुशीला जिन्होंने विवाह तो प्रकाश बाबू के साथ किया है परन्तु हर समय रहती इन्हीं महाशय 'शून्य' जी के साथ हैं।"

दूसरा—"यह 'शून्य' जी क्या बला हैं जी?"

पहिला—"यह कवि हैं, कलाकार हैं, एक अलमस्त प्राणी हैं, पहिले फटे हाल, बाल बिखराये, चप्पल घसीटते हुए दिल्ली की गलियों में चक्कर लगाया करते थे, परन्तु आज कल इनकी न पूछो। सुना है, मदिरा का खुमार चौबीस घण्टे टूटता ही नहीं। खुमार पर मदिरा और मदिरा पर खुमार हर समय सवार रहते हैं।"

तीसरा—"सुना है अब तो कार से उतर कर पैदल चलना यह अपनी मान-हानि समझते हैं।"

चौथा—"नहीं यार! व्यर्थ की उड़ाने से क्या मिलता है? बेचारा भावुक कवि है। इसे शान की चिंता है न मोटर की, न कोठी की चिंता है और न प्रकाश बाबू की धन सम्पत्ति की, यह तो कला का पुजारी है और रानी सुशीला इसकी कला की अनुभूति है। यों ही संसार में सभी को दोषी ठहराने से किसी का कुछ भला नहीं होता और अनर्गल बकवास करने से भी कुछ लाभ नहीं......"

पहिला—"बकवास! हमारा कथन बकवास है और आपका सिद्धांत, न्याय, दर्शन? मैं पूछता हूँ कहाँ लिखा है कि प्रकाश बाबू के

साथ विवाह कर लेने के पश्चात भी रानी सुशीला को इन महाशय 'शून्य' जी की 'अनुभूति'-पात्री बना रहना चाहिए ? क्या इसे आप न्याय-संगत समझते हैं ? क्या इस प्रकार की कार्यवाहियों को आप समाज के लिए विष-तुल्य नहीं गिनते ? हम घृणा करते हैं इस प्रकार के व्यक्तियों से। रुपया इनके पास भले ही कितना क्यों न हो परन्तु हम इसे मान की दृष्टि से नहीं देख सकते।"

तीसरा—"परंतु आपकी दृष्टि ही तो संसार-संचालन का सूत्र नहीं बन सकती महाशय ! विश्व प्रगति की ओर बढ़ रहा है। आप कौन खेत की मूली हैं जो इस प्रगति के मार्ग में बाधा उपस्थित कर सकें ? महाशय ! यह तूफान है, तूफान; ववण्डर है, ववण्डर। प्रबल प्रगति के थपेड़े तुम्हारा मुँह तिरछा कर देंगे और तुम्हें होश भुला देंगे। यदि तुम सामने आने का प्रयत्न करोगे तो कुचल दिये जाओगे। संसार को अभी बहुत आगे बढ़ना है और उस बढ़ती हुई गति में तुम्हारी रूढ़ियाँ उपहासस्पद ही सिद्ध होंगी।"

पहिले महाशय फिर कुछ कहने वाले थे कि इतने में प्रोफेसर सुधांशु पास आकर धीरे से बोले, "प्रकाश बाबू नहीं आये ?"

"वह तो हवाई जहाज से कलकत्ता गये हैं। कोई बड़ा सौदा करना था और आज की ही उसकी अन्तिम तिथि थी। बयाना पहिले ही दिया जा चुका था....."रानी कहती जा रही थी कि यकायक प्रोफेसर साहेब बोले, "अच्छा ठीक है। आप आगईं तो उनका स्थान रिक्त कहाँ रहा ?"

रानी सुशीला—"परन्तु आपने आज मेरे लिए 'आप' शब्द का प्रयोग क्यों किया, यह मैं समझ नहीं पा रही हूँ। रिक्त स्थान मैंने भर दिया, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु यह शब्द आपने व्यंग्य-स्वर में उच्चारण किया है या साधारण स्वर में, यह मैं नहीं समझ पा रही हूँ। इसे अपमान-सूचक समझने की धृष्टता तो मैं कर ही नहीं सकती।"

प्रोफेसर सुधांशु—"आप शब्द का प्रयोग मैंने बहु वचन में इस समय

तुम्हें प्रकाश बाबू और रानी सुशीला मान कर किया है ।" इतना कहकर प्रोफेसर साहब मुस्करा दिये और मुस्कान रानी सुशीला के मुख-मण्डल पर भी नृत्य किये बिना न रह सकी ।

'शून्य' जी—"वाक-चातुर्य की पटुता का सुन्दर उदाहरण आपने प्रस्तुत किया है प्रोफेसर साहब ! कमाल कर दिया आपने । देखी रानी तुमने प्रोफेसर साहब की कलाकारिता । यही तो मैं कल कह रहा था तुमसे संध्या-समय ।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तो यों कहिए कि आप लोग पीठ पीछे भी मेरी बुराइयाँ करते रहते हैं ।" कहकर मुस्कराते हुए मिस केतकी की ओर मुँह करके बोले, "सुना आपने केतकी ! प्रकाश बाबू नहीं आ रहे हैं । मैं जानता हूँ कि वह क्यों नही आये हैं, परंतु इस समय काम चलाने और साधारण संतोष के लिए हम रानी सुशीला की ही बात का विश्वास कर लेते है ।"

रानी सुशीला ने अभी-अभी जो झूठ बोला था वह उसके मन-ही-मन चुभ उठा और उसे दुःख हुआ कि उसने व्यर्थ के लिए प्रोफेसर साहब के सम्मुख झूठ बोल कर अपने को हलका किया । प्रोफेसर साहब यहाँ शहर से दूर ग्रामीण जन-समुदायक के बीच बनस्थली में अवश्य रहने लगे हैं परंतु उनकी विचार-शक्ति कुण्ठित नहीं हो गई है । किसी के मनोभावों को पढ़ लेने का उनका गुण लुप्त नहीं हो गया है । वह लज्जित होकर मौन हो गई और अपने निश्चय-विहीन नेत्र आकाश पर फैला दिये ।

सभा का कार्य-क्रम प्रारम्भ हुआ; प्रोफेसर सुधांशु के व्याख्यान से; और इस व्याख्यान में उन्होंने अपनी योजना पर प्रकाश डालते हुए यह बतलाया—"हमारा लक्ष्य एक स्वावलम्बी केन्द्र (Self sufficient unit) स्थापित करना है । हमारा निश्चय है कि यदि इसी प्रकार के स्वावलम्बी केन्द्रों में भारत को विभाजित कर दिया जाय तो कोई कारण नहीं है कि राष्ट्र अपनी आवश्यकताओं को पूरी तरह अपने आप

पूर्ण न कर सके। समाज और राष्ट्र के जीवन में जब तक विषमता स्थान पाती रहेगी तब तक साधारण जीवन की आवश्यकताएँ अपूर्णता की ओर ही अग्रसर होंगी। प्रकाश बाबू की नियत पर संदेह करना हमारा लक्ष्य नहीं, परन्तु जिस नीति का प्रयोग वह अपने कार्य-संचालन के लिए कर रहे हैं वह राष्ट्र-हित के लिए घातक है। भारत में बड़े और छोटे उद्योग साथ-साथ चल कर राष्ट्र के रिक्त कोष को भरने में सहायक हो सकते हैं और उन्हें होना चाहिए, परन्तु सहयोग की भावना का नितांत लोप होना और एक दूसरे वर्ग का बरावर उसके अधिकारों पर कुठाराघात करना न्याय-संगत नहीं ठहरता। इसका परिणाम होगा बाद में आने वाली सुसंगठित-क्रांति, जिसे फिर रोका नहीं जा सकेगा और संघर्ष में राष्ट्र की प्रगति एक दम रुक जायगी।

इस लिए हमें पहिले ही बुद्धिमत्ता से काम लेना चाहिए और संघर्ष की भावना को पहिले से ही कार्य-क्षेत्र में नहीं आने देना चाहिए।"

सभी श्रोताओं ने आनंद-निमग्न होकर करतल-ध्वनि की। इसके पश्चात नियाज अहमद ने दो शब्द कहे और अन्त में जब 'शून्य' जी से न रहा गया तो वह भी स्वयं ही आकर मंच पर खड़े हो गये। कवि अपनी कल्पनाओं और भावनाओं में बह निकला। एक ओजस्वी भाषण फटकारने के पश्चात दृढ़ संकल्प के साथ बोला, "समय आ गया है जब संसार को एक राष्ट्र बनना होगा और संसार भर के कर्मचारियों को संगठित होकर एक स्वर से एक मन और एक तन होकर पूंजीवाद के विपरीत विद्रोह करना होगा।"

प्रोफेसर सुधांशु ने प्रधान-पद से कविवर 'शून्य' जी को भाषण बन्द कर देने की आज्ञा दी और फिर सुमधुर शब्दों में बोले, "हम लोग सब इसी संसार के रहने वाले व्यक्ति हैं परन्तु अभी-अभी जो आपने भाषण सुना वह उस व्यक्ति का भाषण था कि जिस का इस संसार से कुछ सम्बन्ध नहीं। वह कवि है, कलाकार है और है भावनाओं तथा कल्पनाओं का पुजारी। उसके सामने जीवन का महत्त्व सौंदर्य

और कला की उपासना है और जो कुछ उसने कहा है वह क्षणिक उफान है। इस लिए हमें अपने किसी भी कार्य-क्रम में उफान लाने वाली परिस्थिति को नहीं लाना है।"

मिस केतकी मुस्कराती हुई अन्त में बोलीं, "व्याख्यान आप लोग लम्बे-लम्बे और विचारपूर्ण सुन चुके हैं। मै व्याख्यान देना नहीं जानती। मेरे जीवन की आज तक जो साधना रही है वह मानव-मात्र की सेवा है। उसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैंने यहाँ पर अपना चिकित्सालय खोलने का निश्चय किया है। इसमें आपका दृष्टिकोण गौण है और जो आय होगी वह भी आपके ग्राम की पंचायत के हाथों में रहेगी। मैं आशा करती हूँ कि आप सभी सज्जन वृन्द इस शुभ-कार्य में सहयोग देंगे।"

इसके पश्चात डेयरी का उद्घाटन हुआ और यह उद्घाटन भारत भर में अपने ढंग का विचित्र उद्घाटन था। इस समारोह की मान-प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए न तो किसी धनपति को ही निमंत्रित किया था और न किसी मिनिस्टर या अन्य प्रमुख व्यक्ति को ही। डेयरी का उद्घाटन एक वृद्ध ग्वाले ने किया था और हस्पताल का उद्घाटन एक बूढ़ी नर्स ने।

समारोह के शुभ अवसर पर रानी सुशीला ने भी ग्रामीण जनता के साथ सहानुभूति दिखलाते हुए इस हस्पताल के लिए दस हजार रुपया दान देना चाहा परन्तु प्रोफेसर सुधांशु ने उसे लेने से स्पष्ट इन्कार कर दिया, और मुस्कराते हुए धीरे से कहा, 'मन भारी करने की बात नहीं। तुम्हारी सहानुभूति और सदयता का मैं आभारी हूँ, परन्तु सिद्धान्त-रूप से हमारा यह केन्द्र केवल अपनी ही मजदूरी से प्राप्त धन का प्रयोग कर सकता है। दान-स्वरूप धन प्राप्त करना यह अपने लिए घृणास्पद समझता है और ऋण लेने की यह अभी आवश्य-कता अनुभव नहीं कर रहा। यदि कोई आवश्यकता कभी हुई तो रानी अब सेठानी है—यह मेरे मस्तिष्क में रहेगा।"

रानी ने लजा कर पलकें नीची करलीं।

[१२]

प्रकाश बाबू—"आपकी कार्य-कुशलता की मैं प्रशंसा नहीं कर सकता सरदार लुहारा सिंह जी ! यह चार दिन के सरकारी अफसर लोग हमें मूर्ख बनाना चाहते हैं। यह समझते हैं कि इन्होंने हमें चित्त कर दिया और हम कहते हैं कि चलो इन्हें ऐसा ही समझ लेने दो। हमारा लक्ष्य तो लाभ पर केन्द्रित रहता है।"

लुहारा सिंह जी—"प्रकाश बाबू ! लोहा मान गये हैं आपका अच्छे-अच्छे व्यपारी और उद्योगपति। यह तो सभी स्वीकार करते हैं कि इतने शीघ्र इतनी उन्नति आज तक किसी उद्योग-पति ने नहीं की। जिस बाजार से भी निकल जाओ प्रकाश बाबू का प्रोडक्शन (बनाया हुआ माल) आँखों के सम्मुख हर दूकान पर दिखलाई देगा। जिस दिशा में भी निकल जाइए, आपका रौब मार्केट (बाजार) पर छाया हुआ मिलेगा।"

प्रकाश बाबू—"यह सब आप जैसे अनथक कर्मचारियों के ही परिश्रम का परिणाम है लुहारा सिंह जी ! यदि आपका सहयोग प्राप्त न होता तो मैं अकेला क्या कर सकता था ? वैरिस्टर पुण्रीकर का हमारे कार्य के उत्थान में विशेष सहयोग है। सेठ पोद्दार, सेठ बिनानी, सेठ जाकड़ वाला, सेठ गुलजारी लाल, सेठ भूखड़ नाथ इत्यादि का रुपया मिस्टर पुण्डरीकर का कानूनी मस्तिष्क इस प्रकार चाट गया कि मानो वह रुपया कभी उनके पास था ही नहीं। मानो वह बपौती के रूप में हमें मिला था। कानून ने उन वेचारों के ऐसे पर काट दिये हैं कि सामने पड़ने पर भी खिसर-खिसर ही कर पाते हैं। एक भी शब्द सामने आकर बोल जाँय, यह उनकी सामर्थ्य नहीं।"

लुहारा सिंह—"अरे ! चमत्कार कर दिया मिस्टर पुण्डरीकर ने

तो। क्या दिमाग पाया है प्रकाश बाबू पुण्डरीकर ने भी। बड़े-बड़े तीसमारखाँ दिमागदारों को मक्खी मच्छर की तरह कुचल डालता है। मैं कहता हूं थर्राते हैं बड़े-बड़े लोग उनके सामने जाते हुए। बात-बात में ऐसी खुरपेंच लगाता है मेरा यार, कि बस सुनने वाले दङ्ग रह जाते हैं। रुपया जिसे वह न देना चाहे तो क्या मजाल जो रुपया पाने का एक भी कारण निकल आय।"

यह बातें चल ही रही थीं सामने से खोपड़ी पर हाथ फेरते हुए बैरिस्टर पुण्डरीकर आगये और चिक उठा कर सीधे कमरे में प्रवेश किया दो मिनट तो उसी मुद्रा में मस्तक पर सिलवटों के बल उतारते और चढ़ाते तथा उस्तरा फिरी चाँद पर हाथ फेरते हुए खड़े रहे और फिर मौन मुद्रा में ही एक किनारे पर पड़ी कुर्सी पर विराजमान हो गये। बैरिस्टर पुण्डरीकर अँगरेजी वेशभूषा में रहते थे, परन्तु सिर पर उस्तरा फिरवाते थे, क्योंकि उसे ताजा रखने के लिए उन्हें सुबह और संध्या को उस पर असली मक्खन की मालिश करानी होती थी। उनका कहना था कि पृथ्वी को उपजाऊ बनाने के लिए जिस प्रकार खाद और पानी की आवश्यकता होती है उसी प्रकार बुद्धि और खोपड़ी में नये-नये विचारों और समस्याओं को जन्म देने तथा पनपाने के लिए उसे मक्खन और कभी-कभी बादाम-रोगन पिलाना नितान्त आवश्यक है। मिस्टर पुण्डरीकर का सिर सर्वदा खुला हुआ रहता था परन्तु कोट गर्मी में भी बन्द गले का ही पहिनते थे। प्रकाश बाबू ने एक बार कहा भी था—"मिस्टर पुण्डरीकर! यदि आपको बन्द गले का ही कोट प्रिय है तो कम से कम गर्मियों में गर्म कोट तो पहिनना छोड़ दीजिए।"

प्रकाश बाबू के इस वाक्य पर मिस्टर पुण्डरीकर को बहुत हँसी आई और वह किसी प्रकार अपने को सँभाल कर बोले, "प्रकाश बाबू तुम अभी बच्चे हो। तुम नहीं जानते कि मनुष्य की भावना मनुष्य के विचार, मनुष्य की कल्पना—इन सभी के कीटाणु होते हैं।

बस इसी लिए मुझे गर्म कोट पहिनना पड़ता है। तुम नहीं समझ सकते कि यदि मैं बारह महीने बन्द गले का गर्म कोट न पहिनता तो मस्तिष्क की रक्षा करने में कभी भी सफल न होता और जो-जो मस्तिष्क के चमत्कार तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ इन्हें शताब्दियों पूर्व हृदय के कीटाणु चाट गये होते। तुम नहीं जानते भय्या! कि यह हृदय के कीटाणु किस प्रकार मस्तिष्क को घुन की तरह खा कर चट्ट कर जाते हैं।" इतना कह कर मिस्टर पुण्डरीकर बहुत गम्भीर हो गये थे और प्रकाश बाबू केवल मुस्करा कर रह गये।

मिस्टर पुण्डरीकर की पेन्ट बारह महीने ठंडी ही रहती थी, और वह भी बहुत चुस्त किस्म की, जिसे साधारण देखने वाला सम्भवतः अलीगढ़ फैशन का पायजामा भी समझ सकता था। पहिले यह लट्ठे की रहती थी, परन्तु इधर कुछ दिन से प्रकाश बाबू के अनुरोध पर आपने यह सिल्क की सिलवा ली थीं। इस सब के अतिरिक्त मिस्टर पुण्डरीकर पैरों में जूता कभी नहीं पहिनते थे और नंगे पैर रहने में ही वह मस्तिष्क की सुरक्षा मानते थे। उनके विचार से मस्तिष्क एक अन्धकार पूर्ण शान्त तहखाना है जिस में बुद्धि निवास करती है। इस बुद्धि को श्वाँस लेने के लिए परमात्मा ने जो खिड़की का आयोजन किया है वह मनुष्य के पैरों के तलवों में होता है। जूते पहिनने से वह खिड़की बन्द हो जाती है। वास्तव में मिस्टर पूण्डरीकर के कुछ जीवन के अटल सिद्धान्त थे, जिन में टस से मस हो जाना उन्होंने नहीं सीखा था। सर्दी हो या गर्मी, और चाहे बरसात हो, परन्तु उन के बाने में कभी अन्तर नहीं आता था। विलायत जाना हो अथवा घर से चार पग की दूरी पर, परन्तु पूरा सूट पहिने बिना वह कभी घर से बाहर नहीं निकलते थे।

बैरिस्टर पुण्डरीकर की एक और लच्छेदार बात यह थी कि वह भारत में बनी कोई चीज नहीं खाते थे। केवल मशीन द्वारा पैक किये हुए विलायती बिस्कुट ही उनका आहार था, और वह भी चाय के साथ

जिसे वह स्टोव पर स्वयं बनाते थे। दूध के स्थान पर दूध-पाउडर का प्रयोग उन्हें प्रिय था। उन के मस्तिष्क में एक भय था कि संसार में न जाने कितने व्यक्ति ऐसे हैं जो उन की प्रखर बुद्धि से चिढ़ कर उन्हें विष पिलाने पर उतारू हो गये हैं और इसी लिए जो कोई व्यक्ति भी उन्हें कुछ खिलाने की बात करता था तो वह तुरन्त उसे अपना शत्रु समझ कर घूरने लगते थे।

प्रकाश बाबू—"कहिए बैरिस्टर साहब ! क्या कोई नवीन समाचार है ?"

पुण्डरीकर—"बैरिस्टर पुण्डरीकर का सम्बन्ध पुरानी विचार-धारा से नहीं है। उसके मस्तिष्क में जो कुछ भी है वह सब नवीन है।"

प्रकाश बाबू—"परन्तु आपने उस ऋण वाली समस्या का क्या सुझाव सोचा ? आठ करोड़ रुपया कहां से पेमेंट (देना) किया जाय बैंक को ?"

पुण्डरीकर—"आप चिंता न करें प्रकाश बाबू ! मैंने उस का भी उपाय खोज निकाला है। हमारी सरकार यदि डाल-डाल है तो हमें पात-पात समझिए। हमारी गहराईयों को सरकारी कर्मचारी कहाँ पहुँच सकते हैं। जब तक वह नियम बनाते हैं तब तक हम लोग कार्य सम्पूर्ण कर डालते हैं।

दूसरे ही दिन सुना गया कि प्रकाश बाबू ने अपना बैंक एक दूसरे बैंक में मिला दिया। बात वास्तव में यह थी कि एक सरकारी नियम के आधीन किसी भी डाइरेक्टर को अपने बैंक से रुपया उधार लेना सरकार ने अनियमित ठहरा दिया। प्रकाश बाबू ने अपने बैंक की स्थापना बैंक के लिए न करके उन्होंने अन्य व्यापारों में जनता का रुपया फँसाने के लिए की थी। इस समय उन्होंने अपने बैंक से पन्द्रह करोड़ रुपया उधार लिया हुआ था। कई दिन से रुपये का प्रबन्ध न होने के कारण प्रकाश बाबू का चित्त परेशान था, परन्तु आज उनके सम्मुख उनकी विजय

खेल रही थी। कॉमर्शियल बैंक ऑफ इन्डिया के मैनेजिंग डाइरेक्टर को ऐसा चित्त लाये कि बेचारा जीवन भर पानी नहीं मांगेगा। प्रकाश बाबू ने अपना बैंक कॉमर्शियल बैंक ऑफ इन्डिया में क्या मिलाया कि मानो कॉमर्शियल बैंक ऑफ इन्डियां को ही खरीद लिया। इस समय इस बैंक में साठ प्रतिशत शेयर प्रकाश बाबू के थे।

पुण्डरीकर—"कहिए प्रकाश बाबू ! कैसा रहा हमारा वार ? सरकारी रुपया भी पेमेंट हो गया और एक बना बनाया बैंक भी हाथ लग गया। अब तो बिना हल्दी और फटकरी के ही रङ्ग निखार खा रहा है ?"

प्रकाश बाबू—"क्यों नहीं बैरिस्टर साहब ! जिसके कानूनी परामर्शदाता आप जैसे योग्य, चतुर तथा अनुभवी व्यक्ति होंगे क्या वह भी जीवन में कहीं मार खा सकता है ?"

'शून्य' जी—"खा सकता है।" शून्य जी ने धीरे से अपने बालों को सँवारते हुए कहा। 'शून्य' जी यहाँ कब और किस ओर से आकर विराजमान हो गये इसका ज्ञान इन तीनों व्यक्तियों को उस समय हुआ जब 'शून्य' जी ने यह शब्द उच्चारण किये।

पुण्डरीकर—"नहीं खा सकता।" कड़क कर मिस्टर पुण्डरीकर बोले। "हमारी अनुभव-कुशलता और कानून-शास्त्रों की सीमा को उलंघन कर जाना बच्चों का खिलवाड़ नहीं है 'शून्य' जी ! इसे आप कविता न समझें। इस का सम्बन्ध कौटिल्य की गम्भीर चालों से है। यह महामुनि बाल्मीकि की रामायण नहीं और न ही विद्यापति की पदावली-रचना है। यह तो दूसरे के मुँह में अपने मुँह का निवाला देकर उसे साबुत को ही अपने अन्दर निगल जाना है महाशय !"

'शून्य' जी—"साबुत तो निगल जाना ! लेकिन वह सब तो इश्क में होता है, और हमारी कल्पना-शक्ति के लिए तो यह साधारण सा खिलवाड़ मात्र है बैरिस्टर साहब ! जिसे आप गम्भीर विचार-शक्ति का आधार भूत परिणाम मान कर मन ही मन अपनी योग्यता के

पुल बाँध रहे हैं वह तो काव्य में हमारे साधारण से साधारण शिष्य भी कर सकते हैं।"

सरदार लुहारासिंह जी दाढ़ी को सँवारते हुए बोले—"आप दोनों ही अपने-अपने ख़याल से ठीक कह रहे हैं; परन्तु 'शून्य' जी ! यह संसार कल्पना के पैरों पर नहीं चल सकता। इसे चलाने के लिए बैरिस्टर पुण्डरीकर जैसे योग्य व्यक्तियों की आवश्यकता है।"

इस पर 'शून्य' जी गम्भीर घन गर्जन के समान मुस्करा कर खड़े होते हुए उनके सामने दो तीन बार टहल कर और फिर खड़े हो कर बोले—"आपने संसार को चलाने का भगवान से ठेका ले लिया है ? क्यों लुहरा सिंह जी ! कहीं भेंट हो गई थी क्या भगवान से मार्ग में........? बैरिस्टर पुण्डरीकर ने कहा कि प्रकाश बाबू उनके रहते धोखा नहीं खा सकते और मैं कहता हूँ कि खा सकते है। इसका दुनियाँ के चलने और न चलने से क्या सम्बन्ध ? दुनियाँ चलती रहेगी तो हम भी चलते रहेगें और दुनियाँ बैठ जायगी तो हम लेट जाँयगे।"

रानी सुशीला, जो कि बराबर के कमरे में बैठी यह सब सुन रही थी, चिक उठा कर अन्दर प्रवेश करती हुई बोली,—"वैरिस्टर साहब ! धोखा खा ही नहीं सकते, बल्कि खा रहे हैं। इन्होंने आज तक जीवन में धोखा ही खाया है। इसके अतिरिक्त यह और कुछ खा ही नहीं सकते।"

"खा रहे है।" आश्चर्य प्रकट करते हुए बैरिस्टर पुण्डीकर तथा सरदार लुहारा सिंह जी बोले—"यह हम लौग मानने को तय्यार नहीं। इसमें हमारी मान-हानि होती है।

'शून्य' जी—"अपनी भूलें मान लेने वाले संसार में व्यक्ति कहलाते हैं। महात्मा गाँधीं ने अपनी आत्म-कथा में क्या कुछ नहीं लिखा और डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने तो अपनी पत्नी के साथ की गई चुहल बाजियों का भी चित्राङ्कन बहुत लच्छेदार रूप में किया है। आप लोगों का न मानना तो स्वाभाविक ही है। यदि आप अपनी भूलें मानने लगें

तो आपकी प्रगति विकास की ओर होनी आरम्भ हो जाय। अब आप की दृष्टि किसी भी वस्तु के नीचे के ही भाग पर पड़कर उसके दोषों का निरीक्षण कर पाती है; परन्तु यदि आप अपनी भूलों को भी अनुभव करने लगो तो निश्चित रूप से आपकी दृष्टि किसी भी वस्तु के उपरी भाग पर पड़ने लगेगी।"

रानी सुशीला—"ठीक कह रहे हैं कविवर 'शून्य' जी और प्रकाश बाबू का मिस केतकी के साथ घुल-मिल कर उठना-बैठना, खाना-पीना, घूमने जाना इत्यादि यह सब क्या है ? क्या इसे आप मार खाना नहीं कहेंगे। क्या यह इनके जीवन की पराजय नहीं है ?"

पुण्डरीकर—"सरकार ! मेरा अभिप्राय पैसे की मार से था नयनों की मार से नहीं। मैं वास्तव में लज्जित हूँ कि आप के विचारों की गहराई तक नहीं पहुँच सका। भविष्य में ऐसी भूल नहीं होगी। प्रेम शास्त्र का अध्ययन न होते हुए भी प्रकाश बाबू की नौकरी करने के लिए मुझे करना होगा।"

'शून्य' जी—"नहीं पहुँच सके, नहीं, पुण्डरीकर जी ! आप पहुँच ही नहीं सकते थे। आप ने हृदय के उद्गारों को विशुद्ध वायु-मण्डल में श्वाँस लेने के लिए कभी अवसर ही नहीं दिया। आप के इस बन्द गले के गर्मकोट ने दाब-दाब कर हृदय के उपर वाली खाल के भी छिद्र बन्द कर दिये हैं। हमें देखिए कि बारह महीने बारीक रेशमी शेरवानी पहिनते हैं और उसके भी बटन कभी नहीं लगाते। अन्दर मलमल का कुर्त्ता है तो उस में भी कालर और कालर की पट्टियाँ जालीदार हैं। परन्तु आप हृदय का मूल्य जान भी क्या सकते है ? बारह महीने नंगे पैर घूमते घूमते आपका..........."

रानी सुशीला—"यह सब कुछ नहीं..............

रानी सुशीला कुछ कहना चाहती थी कि प्रकाश बाबू ने गम्भीर स्वर में कहा—"रानी ! तुम यहाँ से जाओ और कवि वर ! इस समय आप भी जा सकते हैं। सरदार जी ! आप को अभी-अभी सेक्री-

टेरियट जाना है। वह कार्य आज हो ही जाना चाहिए। और देखिए दक्ष्यता इस बात में है कि मंत्री महोदय हाथ मलते रहें और कार्य ऊपर ही ऊपर सिद्ध हो जाय। रुपये की कोई चिंता नहीं।"

रानी सुशीला और 'शून्य' जी वहाँ से उठ कर चले गये और सरदार लुहारा सिंह जी भी इन वचनों के साथ बिदा हुए—"मैं पचास हजार का ऑफर दे चुका हूं; इसे चाहे वह सब के सब आपस में बाँट लें या जैसा चाहें करें, अपना तो कार्य सिद्ध होना चाहिए। कूड़े का रुपया खड़ा करना है प्रकाश बाबू! इसी लिए जरा घबराते हैं बेचारे। ऊपर का चेकिंग भी अब पहिले की अपेक्षा कड़ा हो गया है। कुछ नये-नये छोकरे देश भक्ति और राष्ट्रीयता का दम भर कर सरकारी महकमों में ऐसे घुस गये हैं कि हरामजादे नाक में दम किये हैं। उनके सामने पैसे का नाम लेना अपने हाथों अपनी मृत्यु को निमंत्रण देना है। गत महायुद्ध के अवसर पर माल सप्लाई करते समय हवालात में बन्द मुझे दो दिन के लिए पहिले भी हो जाना पड़ा था, परन्तु उन दिनों की बात ही कुछ और थी। अपनी करनी में तो हम बाज आने वाले हैं नहीं प्रकाश बाबू! आगे भगवान मालिक।"

सब के चले जाने पर प्रकाश बाबू ने मिस्टर पुण्डरीकर से उनके पास वाली कुर्सी पर बैठ कर कहा—"फँस गया बेचारा सेठ।"

पुण्डरीकर—"अजी! बेचारा इस में क्या है। यह तो चालें हैं शतरंज की। जो जितना अच्छा खेलना जानेगा बस वही शै दे डालेगा। अब देखिए न! कि इस समय मेरे विचार से आप की और मिस केतकी की भी चालें ही तो चली जा रही हैं। आप उन के रूप पर लट्टू हैं तो वह आपकी योग्यता पर प्राण देती हैं परन्तु बीच में अटकी हुई है एक ग्रह।"

प्रकाश बाबू—"आप सब कुछ बतलाते हैं बैरिस्टर साहब!" परन्तु इस समस्या का सुझाव आपने भी आज तक प्रस्तुत नहीं किया।

पुण्डरीकर—"क्या करता? कुछ अर्थ-व्यवस्था से सम्बन्ध रखने

वाली समस्या होती तो चुटकियों में हल खोज निकालता, परन्तु यह हृदय की बीमारी है, नेत्रों का उथलापन है। परन्तु आप तो इसे गहरा पन मानते होंगे; फिर मैं ही भला उथलापन क्यों कहूँ ?"

यह बातें चल रही थीं कि सामने से मिस केतकी आ गईं। वह पर्दा हटा कर ज्यों ही अन्दर आईं तो प्रकाश बाबू ने खड़े हो कर उन का स्वागत किया। बैरिस्टर पुण्डरीकर उसी प्रकार गम्भीर मुख-मुद्रा बनाए अपने स्थान पर ही बैठे-बैठे बोले—"बहुत बड़ी आयु है मिस केतकी आपकी ?"

केतकी—"यह आपने किस प्रकार जाना ?"

पुण्डरीकर—"हम क्या नहीं जानते मिस केतकी ! यह पूछिए !"

केतकी—"उस दिन आपने ही तो कहा था कि हम मस्तिष्क से सम्बन्ध रखने वाली बात के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते।"

पुण्डरीकर—"मस्तिष्क ही ज्ञान का उद्गम-स्थान है मिस केतकी ! यह भूलना नहीं चाहिए तुम्हें। जब हम यह कहते हैं कि हम कुछ नहीं जानते, तो समझना चाहिए कि हम सब कुछ जानते हैं और जब हम ....नहीं-नहीं, आप को यही समझना चाहिए कि हम सर्वव्यापक हैं। कभी-कभी तो कुछ रहस्य की बातें ऐसी भी होती हैं कि जिन्हें हम समझते हैं और सम्भवतः भगवान् नहीं समझता।" यह बात बैरिस्टर पुण्डरीकर ने बहुत ही गम्भीरता पूर्वक कही परन्तु मिस केतकी ने इसे उपहास मान कर मनोविनोद की सामग्री समझा और मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू के पास जाकर बैठ गईं।

मिस्टर पुण्डरीकर ने जब यह देखा कि यहाँ अब प्रेम-नाट्य हो सकता है, और हो सकता है कि यह कमरा प्रेम-कीटाणुओं की क्रीड़ा-स्थली बन जाय, तो आपने अपने मस्तिष्क की सुरक्षा के लिए वहाँ से प्रस्थान कर जाना ही उचित समझा और चलने के लिए उठ कर खड़े हो गये।

केतकी—"आप के बैरिस्टर साहब कितने योग्य व्यक्ति हैं, इसका

अनुमान में नहीं लगा सकती, परन्तु कितने सनकी हैं इसका ज्ञान मुझे कुछ-कुछ होता जा रहा है।"

प्रकाश बाबू—"कुछ न कुछ सनक प्रत्येक बड़े आदमी में होती है। और जितने भी विशेष-योग्यता वाले व्यक्ति तुम्हें संसार में मिलेंगे उनमें तो न जाने कितने-कितने प्रकार की सनक आपको देखने को मिलेगी मिस केतकी !" और इतना कह कर प्रकाश बाबू ने एक सनकियों की गाथाओं का प्रकरण ही छेड़ दिया। आपने भारत के सनकियों और अमेरिका के सनकियों का एक तुलनात्मक दृष्टिकोण मिस केतकी के सम्मुख प्रस्तुत किया और गर्व के साथ मिस केतकी के मुख पर देखते हुए अपने हृदय में अनुभव किया कि इन के इस सूक्ष्म-विवेचन का हो नहीं सकता कि मिस केतकी पर प्रभाव न पड़ रहा हो।

केतकी—"तब तो फिर आप में भी किसी न किसी सनक का होना नितान्त आवश्यक है।"

प्रकाश बाबू—"तो आप मुझे बड़ा आदमी कब से समझने लगी हैं मिस केतकी !"

केतकी—"जब से आपने बड़े-बड़े काम किये। पहिले जब आप व्यर्थ की बातों पर रूठ जाया करते थे तो मैं आप में आकर्षण देखते हुए भी बचपना अधिक पाती थी।" केतकी के मुख-मण्डल पर इस समय मुग्ध सौंदर्य खेल रहा था और उनकी घुँघराली लटें सामने से आने वाली पंखे की हवा के वेग में उड़ाने भर रही थीं। प्रकाश बाबू की दृष्टि केतकी के मुख पर पड़ी तो माथे की बिंदिया आज अपने विशेष आकर्षण के साथ दमक रही थी। प्रकाश बाबू ने देखा कि केतकी का यौवन इठलाता हुआ अपना संदेश उसके नेत्रों में भर चुका है और उनकी दृष्टि की प्रत्येक कृपा-कोर जीवनामृत की वर्षा करती हुई हृदय में घर कर जाती थी। प्रकाश बाबू के नेत्र जड़ हो गये केतकी के मुख-मण्डल पर।"

केतकी—"क्या कुछ विशेष बात दिखलाई दे रही है आज आप

को मेरे मुख पर ?"

प्रकाश बाबू—"यदि उपहास न करो तो कह डालूँ कि आज के दिन विधाता का समस्त सौंदर्य संचित होकर तुम्हारे मुख-मण्डल पर उतर आया है केतकी !"

केतकी कुछ लजाई सी तनिक सिटपिटा कर अपने को सँभालती हुई स्टैटिस्कोप मेज पर रख कर उसी प्रकार प्रकाश बाबू के मुख पर एक टक देखती हुई बोली—"समझ नहीं पा रही हूँ प्रकाश बाबू ! आपके कथन में कहाँ तक सत्य है, परन्तु कभी-कभी नेत्रों की रङ्गीनी से भी संसार रङ्गीन दिखलाई देने लगता है।"

प्रकाश बाबू—"यह बात नहीं है केतकी ! और आपके विषय में तो यह हो ही नहीं सकता। मै आपको हृदय की रानी बनाना चाहता हूँ, और आप मुझसे घृणा करती......"

केतकी—"भावुकता में बह कर हल्का होने की आवश्यकता नहीं है प्रकाश बाबू ! यदि मैं आप से घृणा करती तो क्यों इस प्रकार आप से मिलने के लिए उतावली हो उठती ? परन्तु घृणा, प्रेम और आकर्षण का अर्थ सर्वदा विवाह नहीं होता।" और इतना कहते-कहते केतकी की मुख-मुद्रा कुछ गम्भीर सी हो उठी।

प्रकाश बाबू ने इस का कुछ भी उत्तर नहीं दिया और फिर अन्य विषयों पर-घुल मिल कर मीठी-मीठी सरस बातें होने लगीं।

[१३]

मिस केतकी—"आप को डेयरी-फार्मिङ्ग-योजना की सफलता पर मैं आप को बधाई देती हूँ प्रोफेसर साहब ! आपकी योजना और नियाज अहमद भय्या के अनर्थक परिश्रम ने बनस्थली को स्वर्ग बना दिया है।"

सुधांशु—"हम लोगों के परिश्रम के साथ आपने बनस्थली-निवासियों के सहयोग को भुला ही दिया केतकी ! उनकी ही तो आधार-शिला पर मैं अपने संकल्पों का मकान बनाने का स्वप्न देख रहा हूँ। हमारी सब योजनाएँ और हमारा सारा परिश्रम व्यर्थ हो जाय यदि बनस्थली-निवासियों का सहयोग हमें प्राप्त न हो । यहाँ के निवासियों ने भूखे और प्यासे रह कर हमारी योजनाओं के भार को अपने कंधों पर संभाला है। पेटों से पट्टियाँ बाँध कर परिश्रम किया है और आज उसी का यह परिणाम है कि यह बस्ती उन्नति के उच्चतम शिखर पर पहुंचती जा रही है।"

मिस केतकी—"यह मैं मानती हूँ प्रोफेसर साहब ! परन्तु बनस्थली आपके यहां आने से पूर्व एक मस्तिष्क-विहीन शरीर था। आपने यहाँ के जीवन में बुद्धि का सञ्चार किया । यहाँ के बच्चे-बच्चे को आपका कृतज्ञ होना चाहिए।.........."

प्रोफेसर सुधांशु—"ऐसा मत कहो मिस केतकी ! मैंने जो कुछ भी किया है, वह अपना कर्तव्य समझ कर किया है, किसी को कृतज्ञ बनाने के अभिप्राय से नहीं। मैंने संगठन की योजनाएँ प्रस्तुत की हैं और उन योजनाओं के संचालन से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि संगठन ही हमारी पूँजी है जिसके आधार पर हम बड़ी से बड़ी योजनाओं को संचालित करके पूर्ण कर सकते हैं।"

मिस केतकी—"तो आपके विचार से पूंजी का कोई महत्त्व नहीं ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"यह तो मैंने नहीं कहा केतकी ! परन्तु पूंजी का एकत्रीकरण और संचय भी मजदूरी और मस्तिष्क के संगठन से ही हुआ है। प्राकृतिक शक्तियों के मस्तिष्क और मेहनत द्वारा प्रयोगों से ही तो पूंजी का जन्म हुआ है और आज वह पूंजी अपने जन्म-दाताओं का सौदा करने चली है। यह हम सहन नहीं कर सकते। प्रकृति की अन्य देनों के समान ही पूंजी भी राष्ट्र की सम्पत्ति होनी चाहिए और उस का उपयोग राष्ट्र के उत्थान में होना आवश्यक है। पूंजी को व्यक्तिगत लाभ और हित के लिए संगठित करके समाज को उसके उपयोग से वंचित रखना एक महान पाप है। राष्ट्र की उत्तरदायी सरकार को चाहिए कि वह इस प्रकार के पापियों को दण्ड दे।"

यह बात प्रोफेसर साहब ने सरल स्वाभाविक ढङ्ग से सिद्धान्त रूप में कही थी परन्तु उन के इन शब्दों में केतकी ने एक जलन का अनुभव किया और सहसा उसके मुख का रङ्ग बदलने लगा। प्रोफेसर साहब किसी भी व्यक्ति के मुख को देख कर उस के हृदय के भावों को पढ़ना जानते थे। वह तुरन्त मुस्करा कर बोले—"यह जो कुछ भी मैंने कहा है केतकी ! सिद्धान्त रूप से कहा है। तुम्हारे हृदय को ठेस पहुँची, इसका मुझे दुःख है, परन्तु तुमने आज आते ही प्रकरण यह क्यों छेड़ दिया ? आओ मैं तुम्हें अब डेयरी दिखलाकर लाता हूँ, जिस की व्यवस्था का भार बनस्थली के नारी-समुदाय ने अपने कंधों पर सँभाला है।"

मिस केतकी—"नारी-समुदाय ने !"

प्रोफेसर सुधांशु—"हाँ हाँ, नारी-समुदाय ने। आपकी बहिन सुभद्रा ने यह भार अपने सिर पर लिया है। सुभद्रा का कहना है कि पालन-पोषण चाहे, व्यक्तियों का हो अथवा जानवरों का, नारी ही अधिक कुशलता पूर्वक कर सकती हैं।"

मिस केतकी—"यह सच है। पालन-पोषण करना नारी का जन्म-सिद्ध अधिकार है। आप के इसी सिद्धान्त के मूलाधार को समझते हुए मैंने डाक्ट्री की परीक्षा पास की थी। किसी के हृदय की गुप्त भावनाओं तक पहुँच जाना जितना नारी के लिए सुलभ है उतना पुरुष के लिए नहीं।"

प्रोफेसर सुधांशु—"और विशेष रूप से एक सुन्दर कोमलाङ्गी के लिए तो यह और भी सुलभ हो उठता है मिस केतकी?"

मिस केतकी—"आपका यह कटाक्ष सम्भवतः मेरी ओर है।" मुस्कराते हुए खड़े हो कर केतकी ने कहा।

प्रोफेसर सुधांशु भी खड़े हो गये, परन्तु वह यह न समझ सके कि उन्होंने मिस केतकी पर क्या कटाक्ष कर दिया। सरल स्वभाव से बोले—"मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ, सिद्धान्त रूप से कह रहा हूँ केतकी! और जहाँ तक कटाक्ष का सम्बन्ध है वह आपके प्रति क्या, मैं कभी किसी अन्य व्यक्ति के प्रति करने का भी साहस अपने में नहीं रखता।"

इसी प्रकार बातें करते हुए दोनों डेयरी-फार्म की दिशा में चल दिये। डेयरी की चहारदीवारी पक्की अवश्य थी, परन्तु उसके अन्दर का शेष सब प्रबन्ध कच्चा ही था। कच्चा होने पर भी वह इतना सुन्दर था कि पक्कों से प्रतियोगिता में किसी प्रकार कम नहीं था। गाय भैंसों के लवारों के लिए छोटी-छोटी कम ऊँची खोरें बनी हुई थीं और उनके पास में छोटी-छोटी खूंटियाँ गड़ी थीं। भैंसों के लिए एक ओर लम्बी-लम्बी खोरें थीं और गायों के लिए दूसरी ओर। खोरों के ऊपर लम्बे-लम्बे छप्पर डले हुए थे और खोरों के चारों ओर पृथ्वी पर बालू रेत बिछा था। इस समय गायें और भैंसें ढोरी में खुल चुकी थीं और बहिन सुभद्रा ने उन के बैठने के स्थानों से गीली मिट्टी उठवा कर वहाँ पर सूखा और साफ बालू रेत बिछवा दिया था। खोरों पर बँधे हुए लवारों के गलों में कठले और टालें

बँधी हुई थीं और साथ ही मोर-पेंच की बनी हुई सुन्दर पठियाँ भी बँधी थीं। सुफ़ेद रङ्ग के गायों के लवारे मेंहदी से रँग कर सुभद्रा बहिन ने और भी सुन्दर बना दिये थे।

डेयरी की यह रूप-रेखा देख कर केतकी का हृदय गद्-गद् हो उठा और उसने सुभद्रा की योज्ञता की मन ही मन सराहना की। सुभद्रा पहिली स्त्री थी जो इस ग्राम में आने पर मिस केतकी के सम्पर्क में आई और जिस के स्वाभाविक आकर्षण ने केतकी को उसका उपचार करने के लिए बाध्य कर दिया। सुभद्रा बाल-विधवा थी और जन्म से ही इसी ग्राम में पैदा हुई, पली और रही थी। माता पिता ने भी अधिक दिन साथ नहीं दिया और भाई बन्धु कोई था नहीं। उसके आचरण का बल अन्य किसी पुरुष की सहायता प्राप्त करने के मार्ग में बाधक रहा। कुछ पास पड़ौसियों ने कई बार सुभद्रा पर किसी के घर में बैठ रहने का संकेत ही नहीं बलतक किया परन्तु सुभद्रा ने उसे अस्वीकार कर दिया। जंगल से जाकर घास खोद लाती थी और उसे सड़क पर बैठ कर किसी आने जाने वाले ताँगे के कोचवान के हाथ बेच कर अपना जीवन-निर्वाह करती थी। इसी प्रकार जीवन किसी तरह चल रहा था कि अकस्मात वह एक दिन ज्वर से पीड़ित हो गई और ज्वर ने यहाँ तक दबाया कि खटिया पर पड़े-पड़े महीनों व्यतीत हो गए और ज्वर ने साथ न छोड़ा। एक दिन इसी दशा में किसी प्रकार वह घिसट कर अपने पड़ौस के एक बच्चे के साथ मिस केतकी के औषधालय में चली आई और मिस केतकी ने उसे अपने औषधालय में ही एक चारपाई देदी........।

आज सुभद्रा डेयरी की संचालिका थी। पीछे से इठलाती हुई, अपना घाघरा हिलाती हुई, अपनी स्वाभाविक मटकन के साथ नेत्रों की दृष्टि को तरेर कर बोली—"क्यों रानी! यह आपकी ही तो सिखलाई हुई स्वच्छताका पाठ है। भला याद किया है न मैंने?" और मुस्करा कर सामने खड़ी हो गई।

केतकी ने मुस्करा कर सुभद्रा के दोनों कंधे पकड़ लिए और नेत्रों में नेत्र डाल कर बोली—"सुभद्रा ! तुम वास्तव में धन्य हो। यदि तुम्हारी ही तरह पाठ पढ़ कर जीवन में घटाने की क्षमता भारत के नारी-समाज में आ जाय तो भारत स्वर्ग बन सकता है। मैं आज प्रत्यक्ष रूप से देख रही हूँ कि कच्चे मकानों में स्वच्छता और सौंदर्य का वह उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है कि जिस में सुख और बल का सामंजस्य हो, शांति और प्रगति की रूप रेखा हो, जीवन का वह विकास हो कि जिस में बनावट और झूठे आकर्षण के स्थान पर स्वस्थ्य उन्नति की योजना हो।"

प्रोफेसर सुधांशु—"सुभद्रा ! तुम्हें मैं ग्राम की माता के रूप में देखता हूँ। बनस्थली-निवासियों के दूध और घी की व्यवस्था करने में तुमने जो सहयोग दिया है उस के लिए बस्ती का प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारा कृतज्ञ रहेगा।"

सुभद्रा—"देखिये प्रोफेसर साहब। और सब बातें तो मैं आपकी मानने को उद्यत हूँ, परन्तु मैं बस्ती की माता हूँ यह बात मैं नहीं मान सकती। इस भार को सँभालने की क्षमता तो केवल केतकी बहिन ही में है।" सुभद्रा ने मुस्कराते हुए प्रोफेसर साहब के मुख पर देखा।

प्रोफेसर साहब ने अपनी धुन में सुना ही नहीं कि सुभद्रा क्या कह रही है और वह आगे बढ़ कर गाय के बछड़ों की खिलवाड़ें देखने लगे।

सुभद्रा—"इनमें एक-एक छौना एक-एक हजार का होगा।"

केतकी—"यह बनस्थली के लाल हैं सुभद्रा ! तुम्हारी सुरक्षा में पल कर यह जहाँ भी जायेंगे बनस्थली का यश फैलायेंगे। भारत के भोजन का उत्पादन करने वाली यह प्रधान शक्ति है जिस का संगठन करने का यश सुभद्रा बहिन को प्राप्त होगा। मैं विश्वास करती हूँ कि भारत के कोने-कोने में होने वाली बैलों की प्रतियोगताओं में तुम्हारे हाथ का पाला हुआ बछड़ा सर्वदा प्रथम पुरस्कार प्राप्त करेगा।"

प्रोफेसर सुधांशु—"यह तो तुमने आशीर्वाद दिया है अपनी बहिन

को केतकी और तुम्हारा आशीर्वाद एक दिन अवश्य फलीभूत होगा। वनस्थली का प्रत्येक व्यक्ति जिस प्रकार कर्त्तव्य-परायण होकर आज मानव-जीवन का निस्वार्थ उदाहरण भारतीय राष्ट्र के सम्मुख उपस्थित करने जा रहा है उसी प्रकार यहाँ का पैदा होने वाला प्रत्येक जानवर भी भारत में उदाहरण स्वरूप स्वीकार किया जायगा।"

इसी समय सामने से एक नया मोटर-ट्रक आता दिखलाई दिया और ज्यों ही वह उनके सामने आकर रुका तो मिस केतकी ने देखा कि उसमें ड्राइवर के स्थान पर नियाज अहमद भय्या बैठे हुए थे। नियाज अहमद ने मोटर से नीचे उतर कर बाकायदा सैल्यूट झुकाया और मुस्कराते हुए बोले—"प्रोफेसर साहब! ट्रक तय्यार है।"

सुभद्रा—"मेरी डेयरी की के लिए?"

नियाज—"जी!"

बहिन सुभद्रा आनंद से परिपूर्ण हो कर एक दम झूम उठी। उस का हृदय तरङ्गित हो रहा था और नेत्रों के सम्मुख डेयरी के उज्ज्वल भविष्य के रङ्गीन चित्र बन-बन कर चल चित्र में आने वाली दृश्यावलियों की भाँति बदलते जा रहे थे। सुभद्रा के नेत्र एक पल के लिए मुँद गये और उसने देखा कि कई लम्बी पंक्तियों में ग्राम की रङ्गीन से रङ्गीन नारियाँ ग्राम्य-गीत गा-गाकर दूध निकाल रही हैं और सभी ने अपनी-अपनी दूध की दुहावनियाँ अपने घुटनों पर सँभाली हुई हैं। एक क्षण में सब की दुहावनियाँ दूध से भर गईं और उन में ऊपर तक झाग उभर आये। वह दुहावनियाँ फिर बड़े-बड़े पीपों में उडेल दी गईं और नियाज अहमद के सकेत पर बहिन सुभद्रा के नेत्र खुल गये।

ट्रक सामने खड़ा था और वह मुस्करा रही थीं।

प्रोफेसर सुधांशु—"इस डेयरी के सुचारु रूप से संचालित होने पर हमारी बस्ती के रहने वालों को दूध, दही और मक्खन की कमी नहीं रहेगी और इसके अतिरिक्त आर्थिक आय भी होगी।"

नियाज अपने दोनों पट्ठों पर राथ मारते हुए मूंछों पर

ताव देकर बोले—"बस हमारी मर्जी का तो एक यह काम हुआ है बहिन केतकी ! अब कम से कम कोटोजम से तो जान छुटेगी । तुम सच समझ लो केतकी ! कि खून का पानी बना दिया है इस कम्बख्त कोटोजम ने। मिठाई खाओ तब कोटोजम, पूड़ियाँ खाओ तब कोटोजम, पराठे खाओ तब कोटोजम और अब तो घी खाने वालों ने भी कम से कम मेहमानों को तो कोटोजम में ही पागना आरम्भ कर दिया है।"

केतकी—"मुझे आप की यह योजना बहुत पसन्द आई। इससे हमारी बनस्थली-निवासियों के स्वास्थ्य अवश्य ठीक हो जाँयगे। व्यक्ति के जीवन की स्वास्थ्य प्रथम आवश्यकता है।"

नियाज—"आपने बिलकुल ठीक कहा केतकी बहिन !" सीना तान कर तनिक गर्व के साथ बोले।

इसके पश्चात मिस केतकी अपने औषधालय की ओर चली गईं और प्रोफेसर सुधांशु चौपाल की ओर। नियाज सुभद्रा से बातें करता हुआ डेयरी के अन्दर चला गया।

नियाज—"भाई वाह ! तुमने तो सुभद्रा देवी जी ! इस डेयरी की कच्ची छप्परों से ढकी हुई चहारदीवारी को एक चमन बना दिया है। क्या सफाई कराई है तुमने ?"

सुभद्रा—"कराई है या की है सरकार ! यह सब रेता तो पलिया भर-भर कर मैंने अपने हाथ से डाला है।"

नियाज—"और वह गीली मिट्टी कौन फेंक कर आया था ?"

सुभद्रा—"आज यह भी मुझे ही करना पड़ा। जानते हो क्यों ?"

नियाज—"क्यों ?" सुभद्रा के मुख पर नेत्र गड़ा कर नियाज ने पूछा।

सुभद्रा—"आज हमारे भङ्गी की बहू जी बीमार होगईं। मैं उसे बुलाने गई तो उल्टा दवा लाने का काम और सिर पड़ गया।"

नियाज—"तुम कितनी अच्छी हो सुभद्रा ! काश कोई इसे जान पाता।" नेत्रों में नेत्र डाल कर नियाज ने खोर पर बैठते हुए एक

छोटी सी बछिया के मुख को प्यार से हाथों में लेकर कहा।

सुभद्रा—"क्या आप भी इसे नहीं जानते ?" कह कर प्रश्नवाचक दृष्टि से सुभद्रा ने देखा।

नियाज—"जानता हूं।"

सुभद्रा—"फिर ?"

इसी समय ढोरी डेयरी के द्वार पर आ गई और गायों तथा भैंसों के गले में बँधी हुई टल्लियों की मीठी ध्वनि में नियाज और सुभद्रा की हृतंत्रियों से झंकृत हो कर मुक्त हो उठने वाले सुमधुर स्वर विलीन हो गये। दोनों व्यक्ति गायों तथा भैंसों के गलों में घुण्डे डालने में व्यस्त हो गये।

[१४]

बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह बार-रूम में बैठे बैरे को एक बोतल ह्विस्की और चार बोतल बीयर की लाने का आर्डर देकर बिजली के पंखे के नीचे सुघर कर बैठ गये। सरदार लुहारासिंह जी ने अपने कोट की आस्तीन से ही गले से चूता हुआ पसीना पोंछ लिया और बैरिस्टर साहब ने तो पसीने की ओर ध्यान ही नहीं दिया। उन का यह मत था कि किसी भी स्वतन्त्र प्रगति में बाधा उपस्थित न करते हुए अपने मार्ग पर व्यक्ति को प्रगति शील रहना चाहिए। बैरे ने बोतलें मेज पर टिकाते हुए केबिन का पर्दा खींच दिया और फिर थोड़ी ही देर में बर्फ़ के दो जार लाकर बोतलों के बीच में रखते हुए बोला "सरकार कुछ खाने के लिए आर्डर कीजिए।"

"मटन चाप।" सरदार लुहारासिंह जी ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा।

"बिस्किट।" बैरिस्टर पुण्डरीकर जी बोले और बैरा सब कुछ समझ कर चला गया। नित्य के ग्राहकों से तो साँकेतिक रूप में ही पूछना होता है। बैरा सब जानता था कि यह दोनों व्यक्ति किस चीज के शौकीन हैं?

सरदार लुहारा सिंह जी ने जार में ह्विस्की और बीयर को मिला कर काकटेल तय्यार करली और फिर दोनों ने लबालब भरे गिलास हाथों में लेते हुए एक दूसरे से टकरा कर शपथ लीं। यह दोनों मित्र बन चुके थे, जीवन का प्रत्येक रहस्य एक दूसरे पर प्रकट कर देने के लिए। नित्य बार-रूम में एक दूसरे के स्वास्थ्य की शपथ खाई जाती थीं और फिर दोनों कार्य-क्षेत्र में अवतीर्ण होते थे।

सरदार लुहारासिंह — "प्रकाश बाबू का सितारा आज कल बुलन्दी

पर है बैरिस्टर पुण्डरीकर जी !"

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"केवल बुलन्दी ही कहोगे सरदार जी ! आप के प्रकाश बाबू को इस खोपड़ी ने पारस बना दिया है ।" इतना कह कर अभिमान के साथ उन्हों ने अपनी घुटी हुई चाँद पर हाथ फेरा ।

सरदार लुहारासिंह—"क्यों नहीं, क्यों नहीं ? सब आप का ही तो जहूरा है बैरिस्टर साहब ! आपके दिमाग ने तो मिट्टी को भी सोना बना दिया है । प्रकाश बाबू भी आप का लोहा मानते हैं ।"

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"ऐसा मत कहो सरदार जी ! ऐसा मत कहो ! मेरे मस्तिष्क की प्रगति आप की कार्य-कुशलता पर आधारित है । यदि सच पूछो तो मैं इन सब योजनाओं की सफलता में आप का महत्त्व प्रकाश बाबू से कहीं अधिक समझता हूँ । उत्पादन व्यर्थ है, यदि माल की निकासी न हो, और माल की निकासी में जो दक्षता आप को प्राप्त है वह अन्य व्यक्ति में नहीं हो सकती ।"

सरदार लुहारासिंह जी अपनी प्रशंसा सुनते-सुनते पूरा गिलास का गिलास चढ़ा गये और नेत्रों में सुनहली बाँकी रेखाएँ लेकर मूँछों को पोंछते हुए दीनता पूर्वक बोले—"बच्चा हूँ आपका, बैरिस्टर साहब ! आपका हाथ सिर पर रहे तो हवा में सौदे कर सकता हूँ ।"

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"क्यों नहीं, क्यों नहीं, आप सब कुछ कर सकते हैं ।" बातें इसी प्रकार मान सम्मान के साथ प्रारम्भ होती थीं और अन्त में कमीशन के बँटवारे पर जा कर समाप्त हो जाती थीं । कभी-कभी यह बँटवारा गर्मागर्म भी हो उठता था परन्तु साधारणतया शांति के साथ ही हो जाता था । सरदार जी मार-मारी करना नहीं जानते थे परन्तु फिर भी अपनी विशेष-योग्यता की कटौती वह मेज पर उपस्थित की जाने वाली रकम में से पहिले ही सुरक्षित रख लेते थे । नेत्रों में मदिरा का सरूर छा जाने के पश्चात जब सरदार लुहारासिंह जी अपनी दिन भर की आय को जेबें खाली करके, कोट की जेबें रिक्त करके बैरिस्टर पुण्डरीकर के सम्मुख डाल देते थे, तो बैरिस्टर पुण्डरीकर

भी उस पूंजी को आधों आध करके एक हरा पत्ता सरदार लुहारासिंह जी को शिष्य घोषित करते हुए अपने हिस्से में से थमा देते थे और सरदार जी प्रसन्नता पूर्वक अपने को शिष्य मान कर इसे ग्रहण करते हुए इसी में से गुरु-दक्षिणा स्वरूप बार का बिल चुका देते थे।

इस बार की स्थापना स्वयँ प्रकाश बाबू ने अपने हाथ से की थी और उन का यह मत था कि यदि दिन भर परिश्रम करने के पश्चात कोई व्यक्ति अपना संध्या-समय बार में व्यतीत करता है, तो कोई हानि की बात नहीं। इस से दिन भर की थकान स्वयँ काफूर हो जाती है और व्यक्ति दूसरे दिन फिर नई ताजगी के साथ कार्य पर जुट जाने के लिए तय्यार हो जाता है। कभी-कभी प्रकाश बाबू स्वयँ भी बार में आते थे और उनका बैठने का स्थान कुछ ऐसे ढङ्ग का बना हुआ था कि वह वहाँ से पूरे बार को देख सकते थे। प्रकाश बाबू बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार कर्मसिंह जी का यह रुपये का बटबारा होता हुआ कई बार देख चुके थे परन्तु आज तक कभी उन्होंने इस ओर संकेत मात्र भी नहीं किया था। आज अचानक मिस कामिनी को साथ में लिए वह बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी के पास आ खड़े हुए और उन्हें इस प्रकार रुपयों में खेलता हुए देख कर बोले—"बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी! आज मेरी कल्पना साकार हो उठी। आप लोगों को इस प्रकार धन के संसार में क्रीड़ा-निमग्न देखकर मेरा हृदय गद्-गद् हो उठा है। आप लोगों ने मेरी योजनाओं में जो सहयोग दिया है उसके बल पर निर्माण का जो कार्य मैं प्रस्तुत कर सका हूँ वह आप की ख्याति को अमरत्व प्रदान करेगा।"

इतना कह कर प्रकाश बाबू मिस कामिनी को साथ लेकर बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी के सामने वाली दोनों कुर्सियों पर बैठ गये। कुछ देर दोनों व्यक्ति सन्न से रहे परन्तु जब फिर प्रकाश बाबू ने बोलना प्रारम्भ कर दिया तो उन में भी स्फूर्ति का संचार हुआ।—"मिस कामिनी! यही हैं वह दोनों व्यक्ति जिन के बल पर मैं

अपने स्वप्नों के दुर्ग बना रहा हूँ। यहाँ पर उत्पादन का जो केन्द्र मैं स्थापित करने जा रहा हूँ वह भारत में अपने ढंग का एक ही केन्द्र होगा। चारों ओर बड़े-बड़े मिल होंगे और उनके बीच में मेरा यह विशाल महल बनेगा जिसमें तुम रानी बन कर विराजमान होगी।" बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी के सामने ही देखते-देखते इतना कह कर प्रकाश बाबू ने दो ऊँगलियाँ मिस कामिनी की चिबुक से लगा कर मुख तनिक ऊपर उठाते हुए नेत्रों में नेत्र डाल दिये और मिस कामिनी चित्र-लिखित-पुतलिका के समान अपने बड़े-बड़े नेत्रों में प्रकाश बाबू के यौवन की मादकता को पी गई।

यौवन फूटा पड़ रहा था। सुशीला और मिस केतकी इसके सम्मुख मानो यौवन की छाया मात्र थीं। मिस कामिनी के सौंदर्य को देख कर कविवर निराला का शूर्पनखा-वर्णन नेत्रों के सम्मुख नाच उठा और कल्पना प्रत्यक्ष रूप धारण किये प्रकाश बाबू के अर्ध बाहु-पाश में बँधी मौन मुग्धा सी बार के केबिन में बैठी रही—

देव दानवों ने मिल
मथ कर समन्दर को निकाले थे चौदह रत्न
सुनती हूँ—
रम्भा और रमा ये दो नारियाँ भी निकाली थीं,
कहते लोग, सुन्दरी हैं;
किन्तु मुझे जान पड़ता,—
सृष्टि भर की सुन्दर प्रकृति का सौंदर्य-भाग
खींचकर विधाता ने भरा है इस अङ्ग में, —
प्यार से—
....
कवियों की कल्पना तो
देखती ये भौंएँ बलिका सी खड़ी—
छूटते हैं जिन से आदि-रस के सम्मोहन-सर

वशीकरण मारण-उच्चाटन भी कभी-कभी।
हारे हैं सारे नेत्र नेत्रों को हेर-हेर,—
विश्व भर को मदोन्मत्त करने की मादकता
भरी है विधाता ने इन्हीं दोनों नेत्रों में।
....

देख यह कपोत-कण्ठ
बाहु-वल्ली कर-सरोज
उन्नत उरोज पीन-क्षीण कटि—
नितम्ब-भार-चरण सुकुमार—
गति मन्द-मन्द,
छूट जाता धर्य ऋषि मुनियों का;
देवों—भोगियों की तो बात ही निराली है।

सरदार लुहारासिंह जी की दृष्टि मिस कामिनी के सौन्दर्य पर अटक गई; परन्तु प्रकाश बाबू के साथ उसे देख कर इस समय उन का समस्त बदन पसीना-पसीना हुआ जा रहा था। बैरिस्टर पुण्डरीकर की भी दशा मिस कामिनी को सामने देख कर तनिक खराब होती जा रही थी और उन्होंने बहुत ही सावधानी से साथ अपने बन्द गले के कोट के बटन गले तक कस कर लगा लिए। साथ ही किसी प्रकार झुक कर उन्होंने जूतों के भी फीते कस लिए और इस प्रकार अपने को पूरी तरह से प्रेम-कीटाणुओं से युद्ध करने के लिए लैस कर के सीना सपर हो गये। एक बार उन्होंने अभिमान के साथ खोपड़ी पर हाथ फेरा और फिर रौब-दौब के साथ आँखों पर चश्मा चढ़ाते हुए गर्व के साथ बोले—"सेठ प्रकाश बाबू! आज हमने जो मौहरा चला है, उसने भारत की नाक कहलाने वाले पूंजीपतियों के भी छक्के छुड़ा दिये हैं।"

"मानता हूँ बैरिस्टर साहब!" गर्व से प्रकाश बाबू कामिनी की ओर को सिमटते हुए बोले। "मिस कामिनी! आज बैरिस्टर साहब ने एक करोड़ बाईस लाख का शिकार चित्त किया है।"

"एक करोड़ बाईस लाख !" नेत्रों के बाण संधानते हुए स्वाभाविक मुस्कान-छवि चारों ओर बखेर कर मिस कामिनी ने कहा।

"आप बचपना कर बैठे प्रकाश बाबू ! अन्यथा खा जाता मैं सेठ को।" बैरिस्टर पुण्डरीकर गर्व के साथ बोले।

सरदार लुहारासिंह—"डस जाते, बैरिस्टर साहब ! डस जाते ! आप का काठा पानी नहीं माँग सकता।"

"मानता हूँ।" प्रकाश बाबू ने मुस्कराते हुए कहा—"मैं किसी को मारने की अपेक्षा सिसकता देखने में अधिक आनन्द-लाभ करता हूँ।"

मिस कामिनी जो अभी तक लग-भग मौन ही बैठी थीं, एक दम फुदक कर प्रकाश बाबू से तनिक दूर हटती हुई बोलीं—"एक्सीलेन्ट ! प्रकाश बाबू ! एक्सीलेन्ट ! मार देना क्या बड़ी बात है ? बात तो वह है कि मारे भी और मरने भी न दे।" और इतना कह कर वह फिर प्रकाश बाबू से सट कर बैठ गई।

बात साधारण सी थी परन्तु बैरिस्टर पुण्डरीकर ने दाँत चबाने प्रारम्भ कर दिये और उन के नेत्रों की लाली क्रोध की ज्वाला से दैदीप्यमाक हो उठी। उन्होंने वहाँ पर और अधिक बैठना अपना अपमान समझा। यह कल की नादान छोकरी बैरिस्टर पुण्डरीकर की बातों के बीच में बोलने का साहस किस प्रकार कर सकी, और वह उठ कर बिना एक शब्द भी मुख से बोले चल दिये। सरदार लुहारा सिंह भी और अधिक वहाँ न बैठ सके, क्योंकि उनकी दृष्टि मिस कामिनी के मुँह पर नहीं ठहर पाती थी।

ज्यों ही सरदार जी उठ कर चलने को हुए तो मिस कामिनी ने मुस्कराते हुए पूछा—"क्या आप मुझे नहीं पहिचानते ?"

"पहिचानता हूँ···लेकिन अब नहीं पहिचानता।" कुछ झुँझला कर सिर हिलाते हुए लुहारा सिंह जी बोले।

"आपने मुझे प्रकाश बाबू के साथ इस प्रकार देख कर खिन्न होने

का मैं कोई कारण नहीं समझती। प्रकाश बाबू इस रहस्य से भली प्रकार परिचित हैं कि आप ही लाहौर से मुझे बचा कर लाए थे, परन्तु वहाँ से बचा कर लाने के पश्चात ...."

"मैं कुछ नहीं सुनना चाहता।" क्रोध में भर कर खड़े होते हुए सरदार लुहारा सिंह जी ने कहा और वह शीघ्रता के साथ केबिन से निकल कर बार से बाहर होते हुए बैरिस्टर पुण्डरीकर जी के पीछे-पीछे लपक लिए।

इन दोनों के चले जाने के पश्चात मिस कामिनी को साथ लेकर प्रकाश बाबू मुस्कराते हुए बार से अपनी कोठी की तरफ चल दिए और वहाँ जा कर उन्होंने देखा कि कविवर 'शून्य' जी की कविता का पाठ हो रहा था और मिस केतकी तथा रानी सुशीला ध्यान पूर्वक बैठी सुन रही थीं। प्रकाश बाबू सब के बीच मिस कामिनी को लिए हुए पहुँच गये और उन के पहुँचने से 'शून्य' जी की कविता-पाठ का तारतम्य टूट गया। वह प्रकाश बाबू पर उबल पड़ने वाले ही थे कि उन की दृष्टि ऊपर उठ कर मिस कामिनी के मुख पर अटक गई और एक क्षण मौन रहने के पश्चात वह खड़े होते हुए मिस कामिनी के सम्मुख जा कर धीर से बोले—"मेरी कविता की साकार प्रतिमा! परन्तु तुम प्रकाश बाबू के पास किस प्रकार पहुँच गईं। तुम्हें तो यहाँ आना चाहिए था कविते!"

"भूल के लिए क्षमा चाहती हूँ कवि! परन्तु अब तो आ चुकी हूं आपके पास। कविता प्रारम्भ करो।" और इतना कहते हुए प्रकाश बाबू तथा मिस कामिनी दो कुर्सियों पर बैठ गए। कविवर 'शून्य' जी का स्वर और भी सरस हो उठा और उन्होंने कविता सुनानी प्रारम्भ की परन्तु रानी सुशीला वहाँ से उठ कर अन्दर चली गईं। इस कविता-पाठ में वह रसास्वादन न कर सकीं। 'शून्य' जी की कविता समाप्त होने पर प्रकाश बाबू ने मुस्कराते हुए कहा—"सौंदर्य में स्वर साधने की शक्ति है, इसका भान मुझे आज हुआ 'शून्य' जी!"

"परन्तु अवधि समाप्त होने से पूर्व ही हो गया, इस का मुझे हर्ष है।" कटाक्ष के साथ व्यंग्य-पूर्ण स्वर में मिस केतकी बोलीं।

कविवर 'शून्य' जी खिल खिला कर हँस पड़े—मानो सब कुछ समझ गये, परन्तु उनके नेत्र कामिनी के सौंदर्य में भटक रहे थे। मिस कामिनी ने भी एक बार भेद-पूर्ण दृष्टि से कविवर 'शून्य' जी के प्यासे नेत्रों में अपने कृपा-सौंदर्य की बूँदें चुआने का प्रयास किया। प्रकाश बाबू मिस केतकी की बात का कोई उत्तर न देकर 'शून्य' जी से बोले,—"कवि! कामिनी को हमारे कला-निकेतन की सैर करा लाओ।"

'शून्य' जी—"अभी लीजिए।" कहते हुए शून्य जी प्रकाश बाबू की आज्ञा-पालन के लिए कर-बद्ध उद्यत हो गये। प्रकाश बाबू के पास रहते हुए और उन्हीं के पैसे पर आश्रित रहने पर भी यह कवि प्रकाश बाबू की आज्ञा-पालन के लिए कभी इतना उतावला नहीं हुआ जितना वह आज था। मिस कामिनी को साथ लेकर ज्यों ही वह कला-निकेतन की ओर चला त्यों ही उसके मार्ग में रानी सुशीला घूमती हुई आ निकली। वह मौन थी, बोली नहीं। कविवर 'शून्य' जी स्वाभाविक सरलता से बोले—"रानी! देख नहीं रही हो मैं इन्हें प्रकाश-बाबू के कला-निकेतन की सैर कराने लेजा रहा हूँ। आओ तुम भी साथ चलो!"

रानी ने कोई उत्तर नहीं दिया और वह शीघ्रता से कोठी के दाँई ओर से आगे बढ़ कर पर्दा उठाती हुई अन्दर चली गई। 'शून्य' जी ने समझा कि मानो उन्होंने सुना ही नहीं, परन्तु मिस कामिनी हाथ की चुटकी बजाती हुई मुस्करा कर बोलीं—"आप चलते चलिए, कविवर! वह नहीं आँयगी। आप कवि अवश्य हैं, परन्तु नारी को समझने की क्षमता अभी आप में नहीं।"

"नारी को समझने की क्षमता मुझ में नहीं?" चलते-चलते कविवर 'शून्य' जी के पैर रुक गए। "यह तुमने क्या कहा कविते!

मैंने तुम्हारे सौंदर्य का मान भर किया है, अपनी आलोचना करने का अधिकार मैंने तुम्हें नहीं दिया। तुम जहाँ चाहो, जा सकती हो और प्रकाश बाबू से कहो कि वह अपना कला-निकेतन दिखलाने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को आपके साथ करें। मैं जाता हूँ।" इतना कह-कर 'शून्य' जी तीव्र गति के साथ उसी ओर बढ़ गये जिधर रानी सुशीला गई थी और मिस कामिनी अवाक सी वहीं पर खड़ी रह गईं।

इधर 'शून्य' जी और कामिनी के वहाँ से चले जाने पर प्रकाश बाबू तथा मिस केतकी अकेले रह गए, परन्तु मिस केतकी का औषधालय पहुँचने का समय हो चुका था और वह और अधिक अब यहाँ पर नहीं ठहर सकती थीं। खड़ी होती हुई बोलीं—"अब मुझे चलना ही होगा, परन्तु आप मेरा औषधालय देखने के लिए आज तक नहीं आये। चलिए आज मेरे साथ चलिए।"

'आपके साथ !" कुछ विचार कर प्रकाश बाबू ने कहा।

"हाँ-हाँ मेरे साथ। क्या कुछ संकोच होता है मेरे साथ चलने में ?" मिस केतकी ने पूछा।

"आज सच बात कह डालूं मिस केतकी ! परन्तु नहीं, मैं कुछ नहीं कहूंगा। चलिए चलता हूँ, आपके साथ।" और प्रकाश बाबू चलने के लिए खड़े हो गये।

कार चल पड़ी और बहुत शीघ्र ही यह दोनों बनस्थली पहुँच गए। कार सीधी जा कर औषधालय के द्वार पर रुकी। प्रकाश बाबू ने घूम फिर कर समस्त औषधालय देखा, देख कर ऊपरी प्रकार से उस की सरहना भी की, परन्तु हृदय में एक कसक पैदा हो गई। बनस्थली का बदला हुआ रूप देख कर प्रकाश बाबू के मन में जलन सी होने लगी और मिस केतकी के विशेष आग्रह करने पर भी वह प्रोफेसर सुधांशु के आने तक वहाँ ठहरने के लिए उद्यत न हो सके।

मिस केतकी प्रकाश बाबू के मन की उथल-पुथल को भाँप चुकी थीं, इस लिए मुस्करा कर बोलीं—"प्रोफेसर सुधांशु आप को बहुत स्नेह करते हैं। जब-जब मैं उन से आप की सफलताओं के विषय में कहती हूँ तो उन का हृदय खिल उठता है और वह आप की प्रशंसा और योग्यता के पुल बाँध देते है, परन्तु आज देख रही हूँ कि आप मेरे औषधालय को देख कर भी आनंद-लाभ न कर सके।"

"कर क्यों नही सका मिस केतकी ? परन्तु कहाँ यह घुड़साजों जैसे कोठरे और कहाँ आप जैसी योग्य डाक्टरनी ? आपके लिए मै इतना बड़ा औषधालय खोल सकता हूँ कि जो भारत भर में ख्याति प्राप्त कर सके और देश के कोने-कोने में आप के नाम की धूम मच जाय। देश देशातरों मे लोग तुम्हारी योग्यता और व्यवहार-कुशलता के गुण गाते हुए पाये जॉय। हमारे प्रकाशन-विभाग द्वारा कविवर 'शून्य' जी की लेखनी से आप की योग्यता की विज्ञप्ति हो और देश के कोने-कोने में एक बार आप का नाम गूंज उठे।" बहुत गम्भीरता पूर्वक प्रकाश बाबू ने कहा।

प्रकाश बाबू के यह शब्द सुन कर मिस केतकी का हृदय द्रवित हो उठा और कोमल भावनाएँ मौम के समान पिघलने लगीं। प्रकाश बाबू ने जो कुछ भी कहा, वह सब कुछ कर सकते हैं, यह सब कुछ उनकी शक्ति में है। वह मौन हो गईं, परन्तु इसी समय प्रोफेसर सुधांशु तथा नियाज अहमद खेल के मैदान से एक बच्चे को लिए हुए वहाँ आ पहूँचे। बच्चे को हॉकी खेलते हुए सिर में गहरी चोट आई थी। मिस केतकी सब कुछ भूलकर बच्चे की डाक्ट्री करने में व्यस्त हो गईं और इसी बीच में कब और किधर को प्रकाश बाबू वहाँ से निकल कर चले गये यह तभी पता चला जब बच्चे के सिर पर टाँके लग कर पट्टी बँध गई और उस ने सचेत हो कर अपने नेत्र खोल दिये।

[१५]

आज की बातों का प्रभाव मिस केतकी के मस्तिष्क पर विभिन्न रूप से पड़ रहा था। प्रकाश बाबू के साथ जो नई स्त्री आज उस ने देखी उसके सौंदर्य-चमत्कार के सम्मुख मिस केतकी की सौम्यता खीज उठी थी और उसके मुग्ध-यौवन की छाया में उन का उभरता हुआ आशा-विटप कुम्हला गया था। रानी सुशीला की बात और थी पर इस नवागंतुक ने तो मिस केतकी के विचारों का दृष्टिकोण ही बदल दिया। नारी के प्रति प्रकाश बाबू का आकर्षण उसी प्रकार था जिस प्रकार माली का किसी बाटिका से कुसुम बीनना। माली पुष्पों की माला बनाते समय सुगंधि और सौंदर्य दोनों ही दृष्टिकोण से माला बनाता है। प्रकाश बाबू भी नारी के दोनों ही गुणों पर रीझते थे। आज मिस कामिनी के साथ प्रकाश बाबू से भेंट हुई तो कल मिस मालती उन के साथ थीं, जिन में सुन्दर कहने के लिए कुछ था ही नहीं। न वेशभूषा किसी काम की थी, और न नख-शिख का आकार प्रकार और रूप-रङ्ग ही, हाँ उस का कण्ठ-माधुर्य अद्वितीय था। मालती का जीवन संगीतमय था और उसी सरस-रस की धारा को गले से लिपटाए कल प्रकाश बाबू उसी प्रकार मुग्ध थे जिस प्रकार आज इस फूल से यौवन की प्रतिमा के साथ मुस्करा रहे थे।

मिस केतकी ने आज प्रथम बार विचार कर देखा कि प्रकाश बाबू के सम्पर्क से किसी भी व्यक्ति का एकाङ्गी विकास सम्भव हो सकता है, सर्वाङ्गी नहीं। जीवन के विभिन्न पहलुओं पर झाँकने का उनके पास अवकाश नहीं और जिस पहलू पर वह झाँकते भी हैं, उस पर भी एक आर्थिक नाप तौल के साथ विचार करते हैं और उसके पश्चात समझ लेते हैं कि बस अब अमुक व्यक्ति को उनका दासत्व स्वीकार

कर ही लेना चाहिए।

आज प्रकाश बाबू मिस केतकी से कुछ कहते-कहते रुक गये। वह क्या कहना चाहते थे यह केतकी न समझ सकी, परन्तु उन के कहते-कहते रुक जाने में उन की असफलता का आभास मिलता था। इसी समय प्रोफेसर सुधांशु उस चोट लगे हुए बच्चे को उस के घर पर पहुँचा कर सीधे यहीं पर लौट आये और मिस केतकी के सामने वाले मूढ़े पर बैठते हुए बोले—"आज प्रकाश बाबू को इस ओर तुम कैसे घसीट लाईं मिस केतकी ?"

"कई बार आग्रह करने के पश्चात आज न जाने किस प्रकार उन का मन मेरे साथ यहाँ आने का हो आया, परन्तु मैंने देखा कि यहाँ आकर उन्हें प्रसन्नता नहीं हुई। उन्हें यह देख कर दुःख हुआ कि मैं अपनी डाक्ट्री की विशेष-योग्यता को यहाँ जंगल में देहाती लोगों के बीच पड़ी हुई व्यर्थ नष्ट कर रही हूँ। उन्होंने मेरे सम्मुख एक प्रस्ताव रखा है प्रोफेसर साहब !" बहुत ही गम्भीर मुख-मुद्रा बना कर मिस केतकी ने कहा।

सुधांशु—"क्या सुन सकता हूँ मैं उनका प्रस्ताव ?"

मिस केतकी—"अवश्य ! वह कहते हैं कि वह मेरे लिए एक बहुत बड़ा औषधालय (हस्पताल) खोलने को तैयार हैं, जिस की ख्याति भारत के कोने-कोने में उन के विज्ञापन-विभाग द्वारा की जायगी और इस प्रकार वह मुझे भारत की सर्व-प्रसिद्ध डाक्टरनी घोषित कर के मेरे नाम का डंका दिगदिगन्त से पिटवा देंगे।"

सुधांशु—"प्रस्ताव तो सुन्दर है।"

मिस केतकी—"तब क्या आप मुझे अपने इस औषधालय से मुक्त कर सकेंगे ?"

सुधांशु—"यदि मुक्ति पाने वाला व्यक्ति मुक्ति चाहेगा तो मेरे हाथों में उसे बाँधने की शक्ति नहीं। जो व्यक्ति स्वयँ नहीं बँध सकता उसे संसार की कोई शक्ति नहीं बाँध सकती।"

मिस केतकी—"आज प्रकाश बाबू मुझ से कुछ कहना चाहते थे परंतु कहते-कहते रुक गये। क्या आप बतला सकते हैं कि वह क्या कहना चाहते थे ?"

सुधांशु—"बतला सकता हूं।" घन-गर्जन के समान गम्भीर ध्वनि में प्रोफेसर सुधांशु बोले, "परन्तु यदि मुझ से पूछने ही चली हो तो तुम्हें अभी जाकर प्रकाश बाबू से यह बात पूछनी होगी और न पूछने की दशा में मेरी बात का विश्वास करना होगा।"

मिस केतकी—"परन्तु विश्वास न करने की धारणा आज आपके मन में क्यों उत्पन्न हुई प्रोफेसर साहब ?"

सुधांशु—"क्यों कि तुम्हारे मन में मृग-तृष्णा ने जन्म ले लिया—बस केवल इस लिए।"

मिस केतकी—"मैं क्षमा-याचना करती हूँ प्रोफेसर साहब !" और मिस केतकी के नेत्र डब-डबा आये। प्रोफेसर साहब ने संध्या के धूमिल प्रकाश में खड़े होकर अपनी जेब से निकाले हुए रूमाल में मिस केतकी के अश्रुओं को सँभाल लिया और फिर मूढ़े के पीछे खड़े हो कर घुँघराले बालों की गुलझटों में उँगलियाँ डाल कर सहलाते हुए धीरे से गम्भीरता-पूर्वक बोले—"दूसरों की सफलता पर हृदय में जलन पैदा कर लेने वाले व्यक्ति के पास असंख्य धन-राशि होने पर भी उस का दृष्टिकोण व्यापक नहीं हो सकता केतकी ! वह जब कभी भी विचार करता है तो व्यक्ति के रूप में ही करता है, राष्ट्र अथवा मानव-मात्र के रूप में नहीं कर सकता। प्राकृतिक शक्तियों का मूल्याङ्कन करना कभी सम्भव नहीं हो सकता, परन्तु वह तो नारी के जीवन का मूल्य चुकता कर देना चाहता है। तुम्हारा वह मूल्याङ्कन नहीं कर सका, इस को वह अपनी पराजय गिनता है। प्रकाश के जीवन में जय और पराजय का संघर्ष बहुत प्रखर रूप धारण करता चला जा रहा है। वह संसार को विजय करने का स्वप्न देख रहा है अपने आर्थिक अस्त्रों के प्रयोगों से और इसी अर्थ-व्यवस्था के माया जाल में फाँसकर वह विश्व को अपना दास बना

लेना चाहता है। तुम यदि भूल से इसे अपनी मुक्ति मान बैठी हो तो मैं इसे भ्रम ही कहूँगा, परन्तु अपने आदर्शों को मानने के लिए बाध्य मैंने आज तक किसी को नहीं किया।" कहते-कहते प्रोफेसर सुधांश का स्वर भर आया और वह वाणी में कुछ दीनता लेकर बोले—"जो राष्ट्रीय-जीवन की व्यवस्था का मॉडल मैं प्रस्तुत कर रहा हूं उस में सुख है, शान्ति है, कर्मण्यता है, सहानुभूति है, सहयोग है, प्रगति है, उत्थान है, स्वस्थ्यता है और अन्त में सभी के जीवन का समान रूप से सामाजिक, मानसिक, आर्थिक तथा राजनैतिक विकास है। इसके ठीक विपरीत प्रकाश बाबू ने जो व्यवस्था प्रस्तुत की है, उसमें समानता का अभाव है, छल है, धोखा है, चालबाजी और सौदे बाजी है। झूठ है, मिलावट है, दीनता और दासता है, फूट और संघर्ष है, कर्त्तव्य के प्रति उदासीनता है, ऊँच-नीच के भेद-भाव के साथ रईसी और निर्धनता का पारस्परिक द्वेष है। यह प्रगति परिश्रम के बल पर न हो कर चालाकियों पर आश्रित है और जिस जीवन में यह दाव घातें चलती रहेंगी वहाँ कभी शांति स्थापित नहीं हो सकती।" इतना कहते-कहते आज प्रथम बार प्रोफेसर सुधांशु के दोनों हाथ बालों की उलझन से मुक्त हो कर केतकी के कपलोलों पर उतर गये।

इसी समय पीछे से किसी के आने का शब्द हुआ और प्रोफेसर सुधांशु ने घूम कर देखा। आगन्तुक बहिन सुभद्रा थी, जो अपनी मस्ती में झूमती हुई आकर दोनों के बीच में खड़ी हो गई और मुस्कराती हुई बोली—"सुना है डाक्टरनी जी! तारों भरी रात में ही प्रेमांकुर विशेष सुविधा के साथ फूटता है। हम तो जन्म की विधवा ठहरीं—कभी जाना ही नहीं कि प्रेम किसे कहते हैं?"

मिस केतकी—"तू बड़ी मक्कार होती जा रही है सुभद्रा! तनिक आगे बढ़ कर बत्ती तो जला दे। मैं अब सोच ही रही थी कि तू आने वाली होगी। और हाँ! दूध का ट्रक शहर चला गया।"

सुभद्रा—"कभी का चला गया डाक्टरनी जी! अब तो नियाज

बाबू आने वाले होंगे।"

सुधांशु—"सुभद्रा ! तुम्हारा कार्य विशेष रूप से सराहनीय है। जब तुम्हारे कार्य की संलग्नता पर दृष्टि डालता हूं तो श्रद्धा से भारतीय नारी की कर्तव्य-परायणता के सम्मुख मस्तक झुक जाता है।"

बहिन सुभद्रा का हृदय प्रोफेसर सुधांशु के यह शब्द सुन कर अन्दर-ही-अन्दर आनंद के हिंडोले पर झूल उठा और उस ने इठलाते हुए आगे बढ़ कर बत्ती जला दी।

प्रोफेसर साहब का प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में जाने का समय हो गया था। विदा होते समय बोले—"अच्छा केतकी ! अब मुझे प्रौढ़-शिक्षा केन्द्र में जाना है। तुम्हें यह जान कर प्रसन्नता होगी कि अब हमारे इस केन्द्र में आस-पास के पांच गांवों के प्रौढ़-शिक्षा प्राप्त करने के लिए आने लगे हैं, और उन सभी ने प्रण किया है कि वह सब लोग मिल कर अपने-अपने गांवों में वही सुधार करने के प्रयत्न करेंगे जो हमने बनस्थली में लागू किये हैं।"

मिस केतकी—"आज मैं भी आप के साथ चलूंगी प्रोफेसर साहब ! न जाने क्यों आज मन में एक उथल-पुथल सी हो रही है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"हां-हां चलो। मैं तो स्वयं कहने वाला था तुमसे। संकोच वश अभी तक नहीं कह पाया कि कहीं तुम चलना उचित ही न समझो। मैं तो तुम्हारे विषय पर अनधिकार चेष्टा करके किसी प्रकार प्रौढ़-विद्यार्थियों को बड़ी कठिनाई से स्वास्थ्य तथा स्वच्छता सम्बन्धी शिक्षा दे पाता हूं !"

आज मिस केतकी ने प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में स्वास्थ्य और स्वच्छता की आवश्यकता पर एक घंटा भाषण दिया। स्वयं प्रोफेसर सुधांशु ने भी उस भाषण से बहुत कुछ ज्ञातव्य बातों का ज्ञान प्राप्त किया और विद्यार्थी तो भाषण को सुनकर मन्त्र-मुग्ध हो गये।

केतकी के भाषण का इतना प्रभाव पड़ा कि दूसरे दिन से प्रौढ़-शिक्षा-केन्द्र में पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियों ने भी भाग लेना प्रारम्भ

कर दिया और दिन प्रति दिन उन की संख्या बढ़नी प्रारम्भ हो गई। मिस केतकी ने अब प्रोफेसर सुधांशु के कार्य-क्रमों के विभिन्न पहलुओं पर सक्रिय सहयोग देना प्रारम्भ कर दिया और उस के फल स्वरूप प्रोफेसर साहब का कार्य विद्युत की गति से प्रगति के पथ पर अग्रस हो उठा। जो पाँच गाँव बनस्थली के चारों ओर स्थित थे उन में से एक गाँव में लुहारों का प्राधान्य था तो दूसरे में अधिकतर तिरखान (बढ़ई) थे, तीसरी जुलाहों की बस्ती थी, चौथे में गड़रिये तथा ग्वाले रहते थे और पाँचवें में सभी जातियों के मिले जुले व्यक्ति रहते थे।

प्रोफेसर सुधांशु ने जिस प्रकार बनस्थली में जूतों की फेक्ट्री सहयोगी सोसाइटी (कॉपरेटिव) बनाकर स्थापित की थी उसी प्रकार उन गाँवों में लोहे का कारखाना, लकड़ी के सामान की वर्कशाप, हाथ से चलने वाली आधुनिकतम खड्डियों से चालित एक कपड़े का कारखाना और इसी प्रकार की अन्य सोसाइटियाँ इस ढङ्ग से स्थापित कीं कि उन ग्रामों का एक केन्द्र बनस्थली में स्थापित हो गया और वहीं से माल देश के प्रत्येक कोने में भेजा जाने लगा। पाँचों गाँवों ने मिल कर अपना एक संघ बना लिया और उन सभी के उत्पादन का निरीक्षण एक पाँचों गाँवों की चुनी हुई पंचायत के द्वारा किया जाने लगा।

प्रोफेसर सुधांशु—"केतकी ! तुम्हारे जीवन की तपस्या ने मेरा स्वप्न साकार कर दिया। अब हमारा यह संघ सब प्रकार से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति में सफल हो चुका हैं। संघ के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में काम आने वाली हर सामग्री का उत्पादन अब हमारे यहाँ होता है, इस लिए हमें अपनी आवश्यकताओं के लिए किसी पर आधारित रह कर उस का मुँह ताकने की आवश्यकता नहीं।"

मिस केतकी—"हमारा संघ न केवल अपनी ही आवश्यकताओं की पूर्ति में फली भूत हुआ है प्रोफेसर साहब ! बल्कि देहली जैसे विशाल

नगर की भी आवश्यकताओं पर दृष्टि रखते हुए सहयोग की भावना से अपना हाथ बढ़ाता है। देहली के जिस भाग को बनस्थली-डेयरी दूध, घी और मक्खन पहुँचाती है उस के भाग्य पर नगर के अन्य भागों को डाह होने लगी है।"

सुधांशु—"सच केतकी!" प्रोफेसर साहब के नेत्र चमक उठे और उन का हृदय गर्व के साथ फूल कर चार इंच ऊपर को उभर गया।

मिस केतकी—"कल जब मैं बहिन सुभद्रा के साथ शहर में बन-स्थली-स्टाल का निरीक्षण करने गई तो उस की व्यवस्था देख कर मैं नियाज अहमद की कार्य-कुशलता की सराहना किये बिना न रह सकी। हमारे माल की स्वच्छता और शुद्धता के कारण एक-एक सप्ताह के अगाऊ आर्डर हर समय रजिस्टर में दर्ज रहते हैं और उन का अगाऊ रुपया भी पहिले ही जमा हो जाता है।"

यह बातें चल ही रही थीं कि नियाज अहमद ने सामने ट्रक ला कर खड़ा करते हुए उतर कर सूचना दी—"प्रकाश बाबू का कपड़ा मिल बन्द हो गया।"

मिस केतकी—"यह क्यों ?" आश्चर्य प्रकट करते हुए तनिक दुःख के साथ मिस केतकी ने पूछा।

नियाज अहमद—"आप पूछती हैं यह क्यों ? यह इस लिए कि पहिले तो माल काले बाजार में बेचने के लिए गोदामों में सरकारी अफसरों को घूस दे-दे कर जमा कर लिया और आज जब कि विश्व-युद्ध के बादलों के उड़जाने की सम्भावना प्रतीत होने लगी है तो मन्दी का चमत्कार पूर्ण प्रवाह क्षेत्र में आ जाने से काला बाजार करने वालों की योजना डाँवाडोल हो उठी है। अब देखनी है बैरिस्टर पुण्डरीकर की वह विशेष योजना की केन्द्र खोपड़ी और सरदार लुहारासिंह जी की मिट्टी को भी सोना कर के बेचने वाली कार्यकुशलता कहाँ तक अपना चमत्कार दिखलाती है।" इतना कह कर नियाज ने रौब के

साथ मूछों पर ताव दिया और छाती फुला कर सामने पड़े हुए मूढ़े पर कमर लगा कर बैठ गया।

प्रोफेसर सुधांशु—"भूली नहीं होगी केतकी गत वर्ष की शीत-काल की उन भयंकर रात्रियों को जब अपने ही मिल के कर्मचारियों को भी नियमित मूल्य पर प्रकाश बाबू ने कपड़ा देना स्वीकार नहीं किया था और हमें रात दिन अपनी खड्डियों पर एक करके वह गाढ़ा तय्यार करना पड़ा था और जो तीन हजार लिहाफ़ तय्यार करके केवल लागत मात्र पर मिल मजदूरों को बाँटे गये थे। उस समय भी यह कपड़ा गोदामों में तालों के अन्दर बन्द पड़ा हुआ गल सड़ रहा था।"

नियाज अहमद— "सात रुपये की धोती सत्ताईस रुपये को बिकी। आज चले हैं सरकार को चुनौती देने, कि यदि इसी प्रकार कपड़े का भाव गिरता गया और सरकार ने उसे न उठाया तो हम लोग मिल बन्द कर देंगे। मजदूर बेरोजगार हो जायँगे। देश में अशांति फैल जायगी। परन्तु क्यों? यह सब क्यों होगा? सरकार मिल स्वयं चला सकती है। मोटी-मोटी रकमें जो मैनेजिंग एजेन्ट खा जाते हैं और जिन्होंने जनता के रुपये को खा-खा कर जनता का विश्वास ही एक प्रकार से सामूहिक योजनाओं से उठा दिया हो, अब इन परेशानियों से मुक्त कर दिये जायँगे। नखरा करने से काम नहीं चलेगा मिस केतकी! अब तो वही जीवित रहने का अधिकारी होगा जो जीने और जीने देने के सिद्धान्त का अनुसरण करेगा।" इतना कहकर गर्व के साथ नियाज वहाँ से उठ कर डेयरी की ओर चल दिया।

एक क्षण प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी चुप चाप बैठे रहे और दूसरे ही क्षण दोनों ने प्रकाश बाबू के पास जाकर उन की इस हानि के प्रति सहानुभूति प्रकट करने का निश्चय किया। मिस केतकी और प्रोफेसर सुधांशु जब प्रकाश बाबू की कोठी पर पहुँचे तो वहाँ पर एक दावत का आयोजन हो रहा था। दावत में प्रकाश बाबू के कुछ प्रमुख व्यापारी मित्र, कुछ भारतीय संसद के प्रमुख सदस्य, कुछ विभिन्न

राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि तथा कुछ यूनियनों के पदाधिकारी उपस्थित थे।

प्रोफेसर सुधांशु यह दावत का आयोजन दूर से ही देख कर लौटने लगे, परन्तु कविवर 'शून्य' जी की दृष्टि उन पर किसी प्रकार पड़ गई और वह उसी प्रकार नंगे पैर उन के पीछे दौड़ पड़े। पीछे से चिल्ला कर बोले—"प्रोफेसर साहेब ! आप आये और पूरे-पूरे आये बिना ही चल भी दिये ! आइए, आपका आना तो ऐसे शुभ अवसर पर नितांत आवश्यक है। देखिये न ! यह सभी दलों के प्रतिनिधि मिल कर सरकार की नीति का विरोध करने के लिए एकत्रित हुए हैं। सरकार की जिस नीति के फल-स्वरूप उत्पादन बन्द हो जाय और कर्मचारी बेकाम हो जाय उस की आप अवश्य निंदा करेंगे। आज की इस दावत में केवल उन्हीं व्यक्तियों को निमंत्रित किया गया है कि जो सरकार की इस नीति की निंदा करें।" एक साँस में 'शून्ज' जी वक्तव्य देते चले गये।

'शून्य' जी की बातें सुन कर प्रोफेसर सुधांशु मुस्करा कर बोले—"कवि ! तुमने इतने दिन प्रकाश बाबू के सम्पर्क में रह कर भी अपना सम्बन्ध बुद्धि से स्थापित नहीं किया। प्रकाश बाबू का अनुमान सत्य है कि मैं उनके प्रस्तावों का समर्थन नहीं कर सकूँगा, इसी लिए उन्होंने मुझे इस सभा में निमंत्रित नहीं किया। और फिर मेरा सम्बन्ध तो न इस प्रकार की सभाओं से है और न उस प्रकार की सभाओं से। मैं ठोस कार्य-क्रम का पक्षपाती हूं और उसी कार्य की पूर्ति के लिए मैंने अपने जीवन को संचालित करने का प्रण किया है। इस प्रकार की व्यर्थ बातों में समय नष्ट करना मैं मूर्खता समझता हूं।"

कविवर 'शून्य' जी चुप हो गये। प्रोफेसर साहब की बात का क्या उत्तर दें, यह उनकी समझ में न आया। अन्त में केवल इतना ही कह कर उन्होंने संतोष किया—"चलिए ठीक ही है, जो आपने कहा, परन्तु आपने आज इतने दिन पश्चात भी मुझे मूर्ख समझना नहीं छोड़ा, यह जान कर मुझे खेद हुआ। सम्भवतः आपने मेरे सम्पादित पत्रों पर कभी

दृष्टि डालने का कष्ट नहीं किया। यदि आपने उन्हें देखा और पढ़ा होता तो आप प्रकाश बाबू से मेरे मस्तिष्क की तुलना न कर बैठते।"

केतकी—"यह तो वास्तव में बहुत बुरी बात की प्रोफेसर साहब आपने; कविवर 'शून्य' जी के सम्पादित पत्र मैंने देखे और पढे हैं इस लिए मैं 'शून्य' जी के मत से पूर्णतया सहमत हूँ।" और इतना कह कर वह कनखियों से मुस्कराते हुए खड़े होकर बोलीं—"अरे आप तो नंगे ही पैर चले आ रहे हैं।" अपने पैरों की चप्पलें निकाल कर उनके सामने करते हुए बोलीं—"लीजिए इन्हें पहिन लीजिए; यदि पैर में कोई काँटा चुभ गया तो बेचारी रानी सुशीला के सम्मुख हम मुँह दिखलाने योग्य भी न रहेंगे।"

इसके पश्चात मिस केतकी और प्रोफेसर साहब ने खड़े होकर 'शून्य' जी को वापिस लौट कर दावत में भाग लेने की अनुमति दी और उनके लौट पड़ने पर दोनों व्यक्ति बनस्थली की ओर धीरे-धीरे घूमते हुए चल दिये। संध्या का डूबता हुआ सूर्य इस समय उनकी पीठ के पीछे था और उनकी लम्बी लम्बी छाया कई-कई सौ गज लम्बी उनके सामने सामने चलती दिखलाई दे रही थीं। दोनों इसी प्रकार मौन मुद्रा में एक दूसरे का हाथ हाथ में लिए बनस्थली तक चले गये। प्रोफेसर सुधांशु ने आज की इस प्रकाश बाबू की दावत में मानव-जीवन की विडम्बना का वह रूप देखा जिस में व्यक्ति हृदय में रोता हुआ भी मुस्कराता है, अन्दर से सूख कर भी ऊपर की शाखाओं में कागज की बनावटी कोंपलें तथा पुष्प खिलाता है, अस्थियों के पिंजर मात्र पर सुन्दर शाल दुशालों का आवरण डाल कर ढकने का प्रयत्न करता है—परन्तु जो अन्दर से निर्जीव हो चुका, उस की सुरक्षा बाहरी आवरण नहीं कर सकते।

सुधांशु—"जीवन की विडम्बना का निखरा हुआ रूप तुमने देखा केतकी।" आज यकायक आप से तुम पर उतर आये सुधांशु।

केतकी—"देखा।" मधुरता पूर्वक केतकी ने कहा।

सुधांशु—"विडम्बना जीवन की समस्याओं का हल नहीं हो सकती और यही कारण है कि भारतीय राष्ट्र की जनता के सम्मुख आज जो जीवन की कठिनतम परिस्थितियाँ उपस्थित हो गई हैं उन का हल पत्तेबाजी से निकालना कभी भी सम्भव नहीं हो सकता। समस्याओं को खिलवाड़ न मान कर समस्या जानने से ही काम चलेगा। किसी भी व्यक्ति के जीवन से खिलवाड़ करने का हमें कोई अधिकार नहीं। हमारी योजनाओं की व्यवस्था द्वारा मानव की उपयोगिता को बढ़ाने का प्रयत्न किया गया है और प्रकाश बाबू ने दूसरों के जीवन की उपयोगिता पर अपना अंकुश टिका कर उनके भाग्य को कुछ चरित्र हीन व्यक्तियों की स्वार्थ-सिद्धि का साधन मात्र बना दिया है। जानती हो इसका परिणाम क्या होगा?"

मिस केतकी—"कलह, अशांति, भूख, संघर्ष, विद्वेष, अप्रगति और अन्त में विनाश।"

[१६]

सोने का बाजार बन्द हो गया, चाँदी का सट्टा बन्द हो गया, कपड़े वाले दूकानदारों ने राशन के कोटे उठाने बन्द कर दिये, गुड़ का बाजार तो पानी की तरह बह गया, चीनी मन्दी हो गई—मतलब यह है कि जिस बाजार में भी निकल जाइए, मन्दी का साम्राज्य था। ग्राहक ने माल पर हाथ रखना बन्द कर दिया। आज से कल और कल से परसों अधिकाधिक दाम गिर जाने का स्वप्न हर व्यापारी देखने लगा। अनेकों के दीवाले निकल गये।

माल के दाम गिर जाने से बैंकों ने व्यापारियों पर रुपया पूरा करने के नोटिस भेज दिये और बाजारों में उथल-पुथल मच गई। जेवर वालो के जेवर बिक गये और मकान वालों के मकान। एक समय वह आगया जब बाजार में बेचने वाला था और लेने वाला नहीं। कार-बार ठप्प हो गये और प्रत्येक दिशा में बेचैनी पैदा हो गई। लम्बे-लम्बे स्टाक करके काला बाजार करने वालों की तो हिम्मत ही पस्त हो गई। 'अब खाई सो खाई, और आगे राम दुहाई' वाली कहावत को आधार मान कर किसी प्रकार कुछ साहसी व्यापारी समय की प्रतीक्षा करने लगे, परन्तु न खाने में मन लगता था और न पहिनने में।

प्रकाश बाबू ने व्यापार के क्षेत्र में जो खेल खला था उस में आज तक उलटे पासे के दर्शन उन्होंने नहीं किये थे। जब सरकार ने बैंकों के डाइरेक्ट्रों को अपने बैंकों से रुपया उधार लेने से वंञ्चित कर दिया था तो प्रकाश बाबू ने उसी फेर में चार बैंकों को निगल लिया था। बिना डाइरेक्टर बने ही उन के पचपन प्रतिशत हिस्से उन के नाम हो गये और इस प्रकार उन्हें अब रुपये की कमी नहीं रही। परन्तु इस मन्दी की लहर ने तो प्रकाश बाबू का पासा ही पलट दिया। उन्हें

रह-रह कर आज सरकार लुहारा सिंह पर क्रोध आ रहा था। सरदार साहब की ही नेक अनुमति के फल-स्वरूप उनके गोदामों में माल पड़ा था।

दो बार गुप्त रीति से कपड़ा पाकिस्तान भेजने का प्रबन्ध किया परन्तु माल सीमा पर पहुँचने से पूर्व ही पकड़ा गया। किसी प्रकार ले देकर प्राणों की रक्षा की परन्तु माल से हाथ धोने ही पड़े। इस प्रकार जितना भी रुपया काले बाजार में कमाया था वह सब निकल गया और उल्टी गाँठ की भी पूंजी हाथ से जाने लगी।

सरदार लुहारा सिंह और बैरिस्टर पुण्डरीकर ने अपने कमीशन के रूप में जो रुपया कमाया था वह भी किसी चाल से प्रकाश बाबू ने अपने ही काम में लगा लिया था। माल पाकिस्तात भेजने की गुप्त योजना भी सरदार लुहारा सिंह जी ने ही तय्यार की थी और माल मार्ग में ही पकड़े जाने से उन का चित्त आज बहुत खिन्न था। जब उन्होंने प्रकाश बाबू को आकर यह अशुभ सूचना दी तो प्रकाश बाबू मिस कामिनी के साथ बैठे बातचीत कर रहे थे।

कामिनी—"आपने भी अपने चारों ओर एक अच्छा खासा चिड़िया-घर बना कर तय्यार कर लिया है।"

प्रकाश बाबू—"क्यों ?" मुस्कराते हुए प्रकाश बाबू ने कामिनी से पूछा।

कामिनी—"एक तो आप के कविवर 'शून्य' जी हैं कि जिन्हें आप कल्पना का केन्द्र और अनुभूति का मूल-श्रोत कह कर पुकारते हैं और आत्मिक दृष्टि से युक्त विचारवान व्यक्ति मानते हैं, उसे मैं एक निरा मुर्ख असभ्य जानवर के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझती।"

प्रकाश बाबू—"यह किस लिए ?"

कामिनी—"किस लिए ? यदि यही पूछना है तो सुनिए। न उसे बातें करनी आती हैं और न सभ्यता से ही उस का कोई सम्बन्ध है। बालों में कंघा न कर, उन्हें अस्त-व्यस्त फैले रहने देना उसकी दृष्टि में

एक महान कला है जिसे मैं जंगलीपन के अतिरिक्त और कुछ नहीं मानती। शेरवानी के ठीक से बटन तक लगाने की भी उसमें योग्यता नहीं और यदि आप ध्यान पूर्वक देखेंगे तो आप को उसके पायजामे के कमरबन्द का फुँदना सर्वदा कमीज से नीचे ही लटकता दिखलाई देगा। पायजामा चाहे नया हो या पुराना, उसकी नीचे की मोहरी सर्वदा फटी हुई ही दिखलाई देगी। जूते पर पालिशन कराने की तो मानो उसने शपथ ली हुई है और फीते शायद ही जूते के दो चार छेदों में पिरोहे हुए हों।"

प्रकाश बाबू—"परन्तु कामिनी! यह जो कुछ भी तुमने वर्णन किया वह कवि का बाहिरी रूप है। इसके आधार पर उस का मूल्याङ्कन नहीं किया जा सकता।"

कामिनी—"परन्तु उस का भेजा और गुर्दा निकाल कर परखने का अवकाश किसके पास है प्रकाश बाबू! जीवन में परखने के लिए एक 'शून्य' जी महोदय ही तो नहीं रह गये हैं। मैंने जटिल मार्ग पर चल कर अन्वेषण करने और व्यर्थ में अपने आपको छिछली महानता के भ्रम से फँसाना नहीं सीखा प्रकाश बाबू! मैं तो जीवन को ज्यों का त्यों देखती हूँ—उस में जो भोग लिया वह अपना है और जो छूट गया वह नष्ट हो गया।"

प्रकाश बाबू कामिनी के यह शब्द सुन कर अवाक रह गये। प्रसंग और आगे बढ़ाने के लिए उनके पास साधन नहीं था और न शब्द ही, मानो कामिनी ने उनके मुख पर मुहर लगा दी। बहुत साहस करके उन्होंने कामिनी के मुख मण्डल पर देखा और देखा कि उस से सौंदर्य की किरणें फूटी पड़ रही थीं। यौवन के विकास की वहाँ पर सीमा थी और वह यौवन इस समय प्रकाश बाबू को बार-बार चुनौती देकर कह रहा था—"खूब व्यापरी हो तुम भी! बड़े आये थे सौदे बाज बन कर। यह भोली भाली सुशीला का सौदा नहीं जिसे कुँजड़े की टोकरी से मूली गाजर के समान खरीद लिया। सौदा भी कभी-कभी व्यापारी को खरीद लेता है।"

परन्तु प्रकाश बाबू भी व्यापार के क्षेत्र में अब दक्षता को प्राप्त हो चुके थे और वह अचानक ही उदासीन होते हुए बोले—"अच्छा कामिनी ! अब तुम कल मिलना। मेरे पास आज समय का अभाव है, क्योंकि कुछ आवश्यक पत्रों के उत्तर देने हैं। व्यापारिक उथल-पुथल के इस युग में क्षमा करना मैं तुम्हारे साथ अधिक समय नहीं दे सकूँगा; सम्भवत: जीवन में फिर अवकाश मिल सके और हम लोगों की सद्-भावनाओं को प्रणय तक पहुँचने में सफलता भी प्राप्त हो।" इतना कह कर प्रकाश बाबू ने झूठ मूठ ही कुछ फाइलें पलटी प्रारम्भ कर दीं और फिर लुहारासिंह जी की ओर मुख कर के गम्भीरता पूर्वक बोले—"सरकार के पुलिस-विभाग में जो कुछ नए छोकरे आज कल घुस गये हैं उन लोगों ने सब कुछ चौपट कर दिया है। यदि यह माल पाकिस्तान पहुँच जाता तो हमारा बहुत कुछ घाटा पूरा हो सकता था।"

लुहारासिंह—"जी प्रकाश बाबू ! इसी लिए तो यह आयोजन किया था।..."

पूरी बात भी न कहने पाये थे कि बैरिस्टर पुण्डरीकर सामने से आ धमके और एक दम कड़क कर बोले—"सब चौपट कर दिया। अगर इतना माल यहाँ पर घाटे से ही बेच दिया होता तो मिल बन्द होने की तो नौबत न आती परन्तु जिन व्यक्तियों का बुद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं उन के हाथों में व्यापार फँस जाने से यही दशा होती है। अंधे के हाथों में बटेर जो आ फँसी।" तुनक कर इतना कहते हुए सामने बड़े सोफे पर विराजमान हो गये और फिर उन्होंने बड़ी गूढ़ दृष्टि से सरदार लुसारासिंह जी के उतरते और चढ़ते विचारों वाले मुख मण्डल पर कटूरा।

सरदार जी मन ही मन समझ गये कि यह झुँझलाहट कई दिन से कमीशन का बँटवारा न होने के कारण बैरिस्टर पुण्डरीकर के स्व-भाव में आ गई है। संध्या को बार-रूम में जहाँ पाँच हजार के नीले-नीले नोट इस मूर्ख के सामने फेंके और बस, शिष्य बना कर लाख

दुवाएँ देगा । पुण्डरीकर जी के यह वाक्य सुन कर भी सरदार जी चुप रहे, एक शब्द नही बोले और उन का चुप साधना था कि पुण्डरीकर नाटकीय ढंग से बिगड़ कर बोले—"देश विदेश का ध्यान नहीं, अपना और पराये का ध्यान नहीं······"

लुहारासिंह—'बस जाने दीजिए अधिक बहकने को।" बीच ही में सरदार जी कड़क करे बोले, "इन व्यर्थ की अनर्गल बातों में कुछ नही रखा है । भाग्य को बदलना आप के हाथ की बात नहीं । अच्छा करते हुए भी कभी-कभी बुरा हो जाता है।"

पुण्डरीकर—"मैं ऐसा नहीं मानता। संसार बुद्धि से संचालित है और संसार में बुद्धिमान व्यक्ति ही·जीवित रह सकता है।" इतना कह कर उन्होंने अपनी खोपड़ी पर अभिमान के साथ हाथ फेरते हुए कहा—"इसका प्रमाण चाहते हो तो सुनो—हम कपड़ा-मिल और तेल-मिल की समस्त हानि को तुम्हें सरकार से वसूल करके दिखला देंगे।"

प्रकाश बाबू—"सरकार से !" एक दम उछल कर बैरिस्टर पुण्डिरीकर की पींठ ठोंकते हुए बोले—"एक महान पुरस्कार दूँगा। बैरीस्टर पुण्डरीकर की कोठी ठीक महल के सामने बनेगी।"

लुहारासिंह—"और लुहारासिंह की ?" तनिक बिगड़ कर लुहारा सिंह जी ने पूछा ।

प्रकाश बाबू मुस्कुराकर—"उसके बगल में।" और लुहारासिंह जी भी प्रसन्न थे ।

+++ +++ +++

कामिनी के रहने के लिए एक कोठी प्रकाश बाबू ने दे दी थी और आज कल उसने उसी में रहना प्रारम्भ कर दिया था । कामिनी ने अपने जीवन में केवल सौंदर्य का विकास किया था और उस के इस विकास में प्रकृति का सहयोग भी उसे पर्याप्त मात्रा में प्राप्त था। उसके गोल गुलाबी गालों की सुन्दर कान्ति जब सामने शीशे में दिखाई दी तो कामिनी ने अभिमान के साथ कहा—"यह सौंदर्य देवों को भी दुर्लभ है

प्रकाश बाबू ! तुम अभी बच्चे हो। सौंदर्य का सौदा करने का तुम्हारा भ्रम मैं मिटा कर रहूँगी एक दिन। तुम्हें धन पर अभिमान है, परन्तु वह तुम्हारी अपनी वस्तु नहीं, वह निर्जीव है। मेरा यौवन बोलता है, मेरा सौंदर्य निमंत्रण देता है और मेरा हृदय विश्व पर छा जाने के लिए उतावला हो उठा है।"

उस दिन कवि कामिनी का अपमान करके चला गया। वह चला गया परन्तु कामिनी उसे भुला न सकी। उसने कामिनी को कविता कह कर सम्बोधित किया और कविता उसके जीवन की साधना है। साधना के प्रति साधक कभी उदासीन हो ही नहीं सकता, इस लिए उसे विश्वास था कि किसी न किसी दिन कवि उसके पास अवश्य आयगा और कवि वास्तव मे आया; वह आज ही आया। इस समय कामिनी को कवि की आवश्यकता थी। प्रकाश बाबू के व्यवहार से उस का मन खिन्न सा हो रहा था परन्तु हृदय के भावों को मुख-मण्डल पर व्यक्त करना कामिनी ने कभी नही जाना।

कवि का कामिनी ने खड़े होकर आदर-भाव के साथ सत्कार किया और फिर वह उसे अपने कमरे में ले गई। कवि को सोफे पर बिठला कर स्वयँ पास वाली बेंच की मेंढ़क नुमा कुर्सी पर बैठ गई। कमरा कुछ साधारण अवश्य था परन्तु कवि की दृष्टि उसके एक कोने में रखे हुए इकतारे पर पड़ी और उसने सीधा प्रश्न किया—"क्या आपको संगीत से भी रूचि है ?"

कामिनी—"रूचि किस चीज से नहीं है यह पूछिये !" इतना कह कर वह उसी प्रकार मुस्कुरा दी जिस प्रकार मुस्कुराने पर पहिले दिन कविवर 'शून्य' जी कामिनी को अकेले छोड़ कर भाग खड़े हुए थे, परन्तु आज की मुस्कान ने कुछ और ही प्रकार से 'शून्य' जी को प्रभावित किया। 'शून्य' जी स्वयँ जाकर इकतरा उठा लाये और उन्होंने उस पर एक स्वर साध लिया। स्वर का साधना था कि कामिनी के होठ धड़कने लगे और पलक मारते-मारते उसके कण्ठ की मधुर ध्वनि ने कमरे

के वायु-मण्डल को आच्छादित कर लिया। मधुर संगीत की स्वर लह-रियों से शान्त वायु-मण्डल सजीव हो उठा और संगीत के मध्य में एक दो बार कवि ने अपना स्वर कामिनी के स्वर में मिला कर प्राणों में प्राण फूँक दिया। दो प्राणी एक स्वर होकर एक दूसरे के निकट आ गये और संगीत के अन्तिम स्वर संधानने से पूर्व कामिनी कविवर 'शून्य' जी से सठ कर बैठ गई। कामिनी के संगीत की प्रथम पंक्ति इस प्रकार थी —

जीवन का प्रति पल सुखमय हो।

संगीत समाप्त हो गया परन्तु कामिनी उसी प्रकार निस्संकोच भाव से 'शून्य' से जी सठ कर बैठी रही और अन्त में उठ कर उसने अपने यौवन को पास में पड़े हुए सोफे पर पसार दिया; परन्तु 'शून्य' जी आज मंत्र-मुग्ध से जड़ समान बुद्धि विहीन वहाँ पर बैठे थे। कामिनी ने मुस्कुराते हुए कहा—"कवि! कल्पना की कविता करते हो; जीवन की कविता से सम्बन्ध स्थापित करो। कल्पना की कविता को लेकर जीवन में कितने दिन जी सकोगे?"

'शून्य' जी—"परन्तु जीवन से तो अब मैं ऊब चुका हूँ कामिनी! नहीं-नहीं, कामिनी नहीं तुम्हें कविते कहूँगा। तुम्हारे अन्दर सौंदर्य और स्वर का सामंजस्य है। यदि कल्पना और भावना भी आकर तुम्हारे जीवन में प्रवेश कर जातीं तो जानती हो कामिनी! एक बार भारत वासियों को फिर से मीरा के दर्शन हो जाते। परन्तु मैं तुम्हारे इस अभाव की पूर्ति स्वरूप अपने जीवन को समर्पण करता हूँ।"

कामिनी—"मेरे अभाव की पूर्ति करने से पूर्व अपने अभाव की की पूर्ति करने का प्रयत्न करो कवि! जो व्यक्ति जीवन के प्रति उदासीन है उस से मेरा जीवन में मेल नहीं हो सकता। प्रकाश बाबू जीवन का उपभोग करना जानते है इस से मेरा जीवन उन से टकरा गया, परन्तु वह जिस से भी टकराते हैं उसे या तो खा जाना चाहते हैं अथवा अपनी टक्कर से चकना चूर कर देना चाहते है—बस यहीं पर

मेरा उनसे मतभेद है। मैं अपनी स्वतन्त्र सत्ता को किसी भी मूल्य पर खो दने के लिए उद्यत नहीं और अपनी इस सत्ता को सुरक्षित रखने के लिए प्राणों का भी बलिदान दे सकती हूँ।"

'शून्य' जी—"बलिदान! यह तुम क्या कह रही हो कविते! तुम्हारे कोमल मुख से यह कठोर शब्द शोभा नही देता। अभी-अभी कितने मधुर स्वर में तुम प्रेमालाप कर रही थीं और अब प्राणों के बलिदान की बात कर रही हो।"

कामिनी का अट्टहास कमरे के वायु-मण्डल को चीरता हुआ बाहर निकल गया और फिर वातावरण बिल्कुल शान्त था। कामिनी कुछ बोली नहीं, वह गुन गुना रही थी। 'शून्य' जी ने भी वाद विवाद में पड़ कर समय नष्ट करना उचित नहीं समझा और वह ध्यान पूर्वक कामिनी के गुनगुनाने पर कान देकर बैठ गये। कामिनी गा रही थी—

—गीत—

मैं जीवन में हँसने आई
अभी अभी फूटा है यौवन,
घुँघराली काली अलकों से
अभी अभी छूटा शैशवपन।
मैं क्रीड़ा की मधुर पहेली
मुझे न छूना;
मँडराना, माता, मुख-छवि पर,
रहे न जिस से यह जीवन-क्षण
रे अलि! सूना।
मुझे न छूना।
विकसित होने दो नव-यौवन
अभी-अभी छूटा शैशव पन।
स्वर्ण-किरण की कोमल काया
उस पर आज बिछा दूँ पलकें,

खिल जायें कलियां उपवन की
वंद्रिल दृग से माया छलके ।
यौवन की पहिली लघु-छवि में
भूलें कोमल अलि-दल, भूलें,
झूलें चितवन-ज्या पर झूलें—
छितवन-रानी के बन्धन बन ।
अभी अभी फूटा है यौवन ॥

संगीत-स्वर धीरे-धीरे कमरे के वायु-मण्डल में विलीन हो गया और कविवर 'शून्य' जी मंत्र-मुग्ध से कमरे की छत पर देख रहे थे । उन का मन इस समय कला-लोक में विचरण कर रहा था और आत्मा परमारन्द को प्राप्त हो चुकी थी । प्रकाश बाबू के सम्पर्क में आने के पश्चात आज प्रथम बार वह संसार की मोह-माया से अपने को मुक्त कर के कला के विशुद्ध वातावरण में विचरण कर पाये थे । प्रकाश बाबू के कला-निकेतन की कृतियों में 'शून्य' जी ने अपने मन से जो महत्त्व कामिनी को दिया वह अन्य कोई कृति प्राप्त नहीं कर पाई ।

कामिनी—"गीत पसन्द आया ।"

'शून्य' जी—"और गीतकारिका भी ।"

कामिनी—"परन्तु यह कल्पना का गीत नहीं है कवि ! इसमें मेरे उभरते हुए यौवन का विकास है । कला का प्रगतिशील दिग्दर्शन है । यह छाया माया का खोखला स्वरूप नहीं है, मधुरस का सञ्चार है जिस की धारा में से एक चुल्लू मधु आँचन करके कवि मुक्त हो सकता है ।"

'शून्य' जी—"अवश्य हो सकता है कविते ! तुम्हारे कथन पर निर्विवाद रूप से विश्वास करने को मैं उद्यत हूं परन्तु मेरी कल्पना का निरादर तुम इतना क्यों करती हो यह मैं नहीं समझ पाया । जीवन में कल्पना ही सत्य होती आई है । वर्त्तमान सत्य का पूर्व रूप कल्पना नहीं तो और क्या है कविते ?"

कामिनी—"उससे मेरा सम्बन्ध नहीं । व्यर्थ में कल्पना और चिन्ता

से सम्बन्ध स्थापित करना सौंदर्य और माधुर्य का ह्रास करना है। तुमने हाथ में दर्पण ले कर उस में अपना मुख देखने की सम्भवतः कभी चेष्टा नहीं की। लो मैं तुम्हें दिखलाये देती हूँ।" और इतना कह कर कामिनी ने एक दर्पण लाकर 'शून्य' जी के हाथों में दे दिया। "देखिए आपके मुख की क्या दशा हो गई? यदि तुम्हारी माँ आज इस समय यहाँ पर उपस्थित होतीं तो तुम्हारा मुख देख कर उन का हृदय फट जाता। मै नारी होने के नाते तुम्हारी माता के हृदय और उनकी भावना को भली प्रकार परख सकती हूँ।" और इतना कह कर कामिनी इस तरह से मुस्कुराई कि 'शून्य जी पागल हो उठे। उन्होंने यहाँ से भाग निकलने का प्रयत्न किया परन्तु कामिनी की नेत्र-परिधि को चीर कर पार हो जाना उनके लिए असम्भव हो चुका था। कामिनी 'शून्य' जी के पास सोफ़े पर जाकर बैठ गई और उसने अपना दाँया हाथ उनके गले में डालते हुए उनके उलझे हुए बालों की एक लट जो किसी प्रकार बल खोकर कनपटी तक छितरा रही थी एक ओर हटा दी और फिर धीरे-धीरे बोली—"कविता एक फुलवाड़ी है कवि जिसे लगाना और बात है और सुरक्षा प्रदान करना, मंहकाना और हरा-भरा रखना और बात —परन्तु जाने दो इन बातों को। मैं तुम्हारे जीवन में एक अभाव देख रही हूँ और यदि मैं गलत नहीं हूँ तो वह अभाव एक नारी का है, जिसने तुम्हारे जीवन की दिशा ही बदल दी है।"

कविवर 'शून्य' जी ने तरसते हुए नेत्रों से कामिनी के मुख पर देखा, मानो कामिनी ने उनका हृदय खोल कर उसके सम्मख रख दिया। कामिनी ने फिर कहना प्रारम्भ किया—"उस स्त्री ने तुम्हरा जीवन लक्ष्य विहीन कर दिया। तुम्हारे जीवन का सहयोग न बनकर वह स्त्री स्वयं भी अपने जीवन पथ पर भटक पड़ी और उसने तुम्हारे जीवन की पतवार को भी प्रबल वेग से बहती हुई धारा में फेंक दिया।" और इतना कह कर कामिनी ने 'शून्य' जी की दाँई आँख के ऊपर वाली रेखा

पर अपने नेत्र गड़ा कर कहा, "वस और फिर कभी। मैंने तुम्हारे मस्तक की रेखाओं को पढ़ कर जो कुछ भी बतलाया वह असत्य तो नहीं है कवि !"

कवि मौन था। कामिनी ने उसके गत-जीवन का इतिहास चार शब्दों में उठा कर उसके सम्मुख रख दिया। सुशीली की धन-लिप्सा ने उसे प्रकाश बाबू के फंदे में फँसा कर उसका भी जीवन अपने हाथों में जकड़ लिया। जीवन की प्रगति नष्ट कर दी, जीवन का विकास समाप्त हो गया, जीवस बन्धनों में बन्ध कर एक मशीन का टुकड़ा बन गया। उसकी कविता प्रयोजन विहीन कला का निर्जीव दिग्दर्शन मात्र रह गया—कोरा विज्ञापन जिसमें वास्तविकता का लेश नहीं।—"तुमने जो कुछ कहा सत्य कहा कविते !" बस इतना कह कर 'शून्य' जी ने उठने का प्रयास किया।

कामिनी—"तुम अब जा नहीं सकोगे कवि !"

'शून्य' जी—"परन्तु क्यों ?"

कामिनी—"वह इस लिए कि मुझे अभी तुम्हारे जीवन का बहुत कुछ अध्ययन करना शेष है।"

'शून्य'जी—"यह सब कल होगा कविते ! इस समय मैं जा रहा हूँ। यदि तुम मुझे इस समय नहीं जाने दोगी तो मैं पागल हो उठूँगा। मैंने अपने एक मित्र की आशाओं पर तुषारापात किया है। इस समय मैं उन्हीं से क्षमा प्रार्थना करने जा रहा हूँ।"

कामिनी—"क्षमा माँगना जीवन की वह दुर्बलता है जिसके पश्चात प्रगति आप से आप रुक जाती है और विकास का मार्ग अवरुद्ध होकर व्यक्ति अपने कर्तव्य की पूर्ति केवल क्षमा याचना तक ही समझ लेता है। मैं तुम्हें इस दुर्बल-प्रवृत्ति के लिए कभी भी अनुमति नहीं दे सकती और 'शून्य' जी के पैर द्वार की ओर बढते बढ़ते रुक गये। कामिनी सोफे से उठ कर धीरे-धीरे 'शून्य' जी के पास पहुँच गई और उसने धीरे से उनका हाथ अपने हाथ में ले लिया। फिर दोनों कोठी से निकल कर बाहर उसके लान में आ गये, परन्तु दोनों मौन थे, शब्द-विहीन।

[१७]

मन्दी का प्रभाव भारत की प्रत्येक वस्तु पर पड़ा। केवल मिलों में बनने वाली वस्तुओं पर ही नहीं वरन् छोटी फैक्ट्रियों पर भी उसका प्रभाव पड़ा। बाजार में माँग कम हो जाने से चीजों के दाम गिर गये। घी, दूध, जूते, लोहे का सामान और लकड़ी के सामान पर भी प्रभाव इसी प्रकार हुआ जिस प्रकार कपड़ा, तेल, चीनी इत्यादि पर था।

प्रोफेसर सुधांशु ने इस गम्भीर समय की समस्याओं को सोच विचार कर हल करने का उपाय सोचा। इन्होंने सरकार की बुराई करने पर समय नष्ट नहीं किया और न ही अप्राकृतिक कारणों को उपस्थित करके वस्तुओं का मूल्य फिर से बढ़ा देने की ही सरकार से माँग की। वह जानते थे कि विश्व की राजनीतिक उथल-पुथल का जो प्रभाव सब देशों की आर्थिक स्थिति पर पड़ा है उसे बनावटी कारणों से रोका नहीं जा सकता।

प्रोफेसर साहब ने अपने संघ के पाँचों गाँवों के प्रतिनिधियों की एक बैठक बुलाकर देश तथा राष्ट्र के सम्मुख आने वाली परिस्थिति को उपस्थित किया और साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया कि किस प्रकार इस मन्दी की समस्या का सामना किया जा सकता है। आज की सभा के सभापति-पद से भाषण देते हुए उन्हों ने कहा—
"प्रिय बन्धुओ !"

यह संकट का समय है, इस में कोई सन्देह नहीं परन्तु इसका सामना रोने-गाने और सरकार की टीका-टिपणी करने से नहीं किया जा सकता। सरकार के पास कोई जादू का पिटारा नहीं है कि जिसके अन्दर से वह आप लोगों की समस्याओं के हल निकाल-निकाल कर

आप लोगों को दे सकें।

आप लोगों में से बहुतों ने देखा होगा कि गत महा-युद्ध के छिड़ जाने पर अनेकों व्यक्ति बैठे-बैठे बिना परिश्रम किये ही मालामाल हो गये थे। रुपये का बराबर अवमूलन होता गया और नोटों की गड्डियाँ लोगों की तिजोरियों में दिखलाई देने लगीं। बड़ी-बड़ी रकमें खातों में दिखलाते सेठों के दिल दहल उठे और काले बाजार का युग प्रारम्भ हो गया। वह युग आपत्ति-काल की देन थी जिस का जन्म संसार की पारस्परिक फूट से हुआ था। आज युग बदल रहा है। संघर्ष संसार के पटल से एक दम समाप्त नहीं हो गया, परन्तु फिर भी कोरिया के युद्ध में अब संधि की सम्भावना दिखाई देने लगी है और उसके फल-स्वरूप विश्व-युद्ध के काले बादल एक बार आकाश से उड़ते हुए दिखलाई देने लगे हैं।

विश्व-व्यापी इन परिस्थितियों के साथ ही साथ भारतीय संसद में आने वाले सन् १९५२-१९५३ के बजट ने भी चीजों के ऊपर बढ़ते भावों पर एक करारी चोट की और बाजरों के भाव पानी की तरह बह निकले सट्टे के बाजार बन्द हो गये और सट्टेबाजों के मुख पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। पोल का माल खाने वालों के लिए तो यह सर्वनाश का समय है परन्तु हम और आप जैसे कर्मठ व्यक्तियों को इस से घबराने का मैं कोई कारण नहीं समझता।"

सदस्यों की आवाज—"कठिन परिस्थित का हम डट कर गम्भीरता के साथ सामना करेंगे।"

प्रोफेसर सुधांशु—"मुझे आपसे यही आशा थी और मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारा संघ देश के सामने आने वाली इस कठिन परिस्थिति में पीठ दिखाने की अपेक्षा और उल्टा अपनी दृढ़ प्रतिज्ञता का ही परिचय देगा। इस कठिन परिस्थिति का सामना करने के लिए हमें दृढ़ संकल्प के साथ अपने-अपने कार्यों पर और भी कटिबद्धता के साथ जुट जाना होगा। हम आठ घण्टे कार्य करने के स्थान पर दस घण्टे

काम करेंगे और इस प्रकार मजदूरी का दर घटाकर उत्पादन को सस्ता करने में सहयोग देंगे। इस प्रकार हमारा उत्पादन बढ़ जाने से हमारी आर्थिक आय में कमी नहीं आने पायगी ?

सदस्य—"हम सब आपके मत से महमत हैं।"

मिस केतकी—"हम लोग देश और राष्ट्र के लाभ के लिए हर प्रकार का बलिदान देने को उद्यत हैं। कष्ट सहन करना देश और राष्ट्र की शक्ति तथा भविष्य के उज्वल होने का द्योतक है। इस दिशा में हमारा हर प्रकार का सहयोग हर समय आपके आदेश के साथ रहेगा।"

मिस केतकी के इन शब्दों को सुन कर सब ने करतल-ध्वनि की और नियाज अहमद ने प्रोफेसर साहब की शुभ सलाह की सराहना करते हुए गम्भीर स्वर में कहा—"हमारे देश का मजदूर जब देश और राष्ट्र की जरूरतों को समझ कर त्याग के साथ आगे बढ़ेगा तभी हमारी तरक्की होगी। मैं जिस काबिल भी हूँ आप लोगों की चौबीस घण्टे सेवा करने को तय्यार हूं। आप लोग अधिक से अधिक महनत करके कम से कम मूल्य पर अच्छा और सुन्दर उत्पादन कीजिए और मैं भी अपनी पूरी काबलियत के साथ उसे बेच कर अपने संघ को रुपये की कमी से बचाये रखने की कोशिश करूंगा। हम लोगों का माल पीछे तय्यार होता है और पहिले बिक जाता है। हम गोदामों में माल बन्द करके उस पर काला बाजार करने की कोशिस नहीं करते। इस लिए जिन दामों पर भी माल बिकेगा हमारा उत्पादन भी उन्हीं दामों पर होगा। हम कोई लम्बा-चौड़ा फायदा कमा कर खरीदारों को बेवकूफ बनाते हुए करोड़पति बन कर पूंजी के बोझ से इन्सान को कुचल देने की कोशिस नही करते। हमारा मुनाफा मजदूरी से ऊपर सिर्फ दाल में नमक के समान होता है और वह हमेशा बना रहेगा। आप लोग यकीन रखें कि यह मन्दी की हवा हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। लेकिन हमें प्रोफेसर साहब के बतलाये

हुए रास्ते पर चल कर खतरे के गले को अपने ऊपर आजाने से पहिले दबोच लेना चाहिए। दुशमन को कमजोर समझना नादानी है और वह नादानी करने को हम तय्यार नहीं। हम लोग रात दिन एक करके भी मन्दी के असर से अपने को दबने नहीं देंगे।"

"नही दबने देंगे", सब ने एक स्वर में कहा। "हम रात दिन परिश्रम करके अपना उत्पादन बढ़ाएंगे और अपने परिश्रम के बल से उसे सस्ता कर देंगे।"

प्रोफेसर सुधांशु—"मुझे यही आशा थी। कुछ दिन पश्चात् कच्चे माल के मूल्य में अवमूलन होने पर उत्पादन और भी सस्ता हो जायगा और उस समय तुम्हारा यह अधिक परिश्रम अधिक आय में परिणित होकर राष्ट्र को उन्नति के पथ पर अग्रसर करेगा। वह समय अब दूर नहीं है जब हमारे संघ का प्रत्येक मकान सुन्दर और पक्का बन जायगा और बस्तियों की सड़कें तथा नालियाँ भी पक्कीं हो जाँयगी। अपने संघ के उस नव-निर्माण की योजन मैं तय्यार कर चुका हूँ और अब केवल उस योजना पर कार्य प्रारम्भ करना है परन्तु उस कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व हमें इस मन्दी से टक्कर लेते हुए एक बार व्यापार के क्षेत्र में स्थिरता स्थापित करनी है।"

प्रोफेसर सुधांशु की बात का सब ने समर्थन किया और दूसरे दिन से संघ के सब कारखानों में आठ घण्टे के स्थान पर दस घण्टे कार्य होने लगा। सभी फैक्ट्रियों का उत्पादन बढ़ गया और इससे फैक्ट्रियों की आय में किसी प्रकार की भी कमी नहीं आई, बल्कि और बढ़ोतरी ही हुई।

मिस केतकी—"आपने जो संघ के नव-निर्माण की योजना कल प्रस्तुत की थी वह मुझे बहुत पसन्द आई। उसके अनुसार कार्य का वितरण और उसकी सुव्यवस्था से प्रत्येक व्यक्ति को अपना पूरा-पूरा समय उत्पादन-कार्य के लिए लगाने का अवसर मिलेगा। कार्य का सही बटवारा ही राष्ट्र का वास्तविक उत्थान है। हमारे यहाँ हर

प्रकार के उत्तर-दायित्व रहने से वह एक को भी सही-सही रूप में नहीं निभा पाते।"

प्रोफेसर सुधांशु—"इसी लिए मैं संघ के कार्य का नवीन विभाजन करके इसे और प्रगति की ओर ले जाने का स्वप्न देख रहा हूं केतकी ! मेरा विश्वास है कि मेरी इस नवीन योजना के प्रसारित हो जाने पर संघ की फैक्ट्रियों का उत्पादन ड्योढ़ा हो जायगा।"

मिस केतकी—"निश्चिय रूप से हो जायगा। कोई शक्ति उस बढ़ते हुए उत्पादन को रोक नहीं सकती और फिर जितना-जितना अवमूलन होगा उतना-उतना ही सिक्के का प्रसार कम हो जाने से रुपये के मूल्य में बढ़ोत्री होगी। यह हमारे संघ की सफलता होगी और हमारे संघ की सफलता हमारे राष्ट्र की उन्नति का साधन बनेगी।"

प्रोफेसर सुधांशु—"हमारे राष्ट्र की यह उन्नति ही हमारी सरकार की सफलता होगी। भारत का दुर्भाग्य है कि यहाँ के निवासी अभी तक भी बहुत अधिक प्रतिशत अशिक्षित हैं और जो शिक्षित भी हैं उनका भी राजनीतिक दृष्टि-कोण बहुत संकुचित और अप्रगतिशील है। असहयोग से प्राप्त की हुई सत्ता को सहयोग प्रदान करना भारतीय जनता के लिए एक पहेली वन रहा है और यही कारण है कि आज भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर भी हमारी स्वार्थ्य-लिप्सा ने राष्ट्र बुरी तरह जकड़ लिया है कि हम उसे आगे बढ़ने देना पसन्द ही नहीं करते। हम लोग स्वयँ सरकार हैं, इस कठोर सत्य का अनुभव करना ही हमारे लिए एक समस्या बन गया है। जो कांग्रेस कल तक सरकारी नियमों को भंग करने में बढ़ावा देती थी वही आज उन्हें तोड़ने पर दण्ड देने के लिए दाँत किट किटाती है।"

मिस केतकी हँस पड़ी—"बात वास्तव में यही है। जब तक हमारा राष्ट्रीय-स्तर ऊंचा नहीं उठेगा तब तक हम इस को समझने अनभिज्ञ ही रहेंगे। पर समय की चोटें और परिस्थितियों की

टक्करें स्वायँ मार्ग प्रदर्शित करेंगी और इस प्रकार ठुक-पिट कर राष्ट्र जिस मार्ग को अपनायगा वह सहयोग द्वारा आपत्तियों का सामना करने वाला मार्ग होगा। उस मार्ग पर चल कर ही राष्ट्र बलवान बनेगा और उसमें वह जीवन लहरायेगा कि जिस की जड़ें पाताल तक पहुँच जाँयगी। एक बार स्थापित हो जाने के पश्चात् फिर उन जड़ों को उखाड़ फेंकना भी ममस्या बन जायगा। वह होगा भारत का स्वर्ण-युग जिसे इतिहास ने चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय में स्थापित किया था और जिस की शांति तथा समृद्धशीलता दिग्दिगन्त में अशोक ने प्रसारित की थी। वह राष्ट्र के उत्थान का वह काल होगा जब अभावों की पूर्ति स्वयँ होगी और सरकार को गालियाँ देने के स्थान पर राज्य सत्ता सँभालने वाले युवक क्षेत्र में आंयगे। आज वह समय आता जा रहा है जब राज्य-सत्ता का अर्थ निरंकुश-शासन और अधिकारों का अन्धा प्रयोग न होकर राष्ट्र की सेवा है। गत चुनाव ने जनता की शक्ति का दिग्दर्श कराने में कोई कमी उठा नहीं रखी। जनता की यह शक्ति शिक्षा के प्रसार के साथ बढ़ती ही चली जायगी और वह दिन दूर नहीं है जब जनता स्वयँ अपने उत्तरदात्वि को समझते हुए सरकार के व्यर्थ किये जाने वाले अनेकों व्यय कम करके राष्ट्र के सिर पर पड़ने वाले भारों को कम कर देगी।"

यह बातें हो ही रही थीं कि सामने से नियाज अहमद का ट्रक आता हुआ दिखाई दिया। मिस केतकी ट्रक को आते हुए देख कर धीरे से बोलीं—"कार्यकर्त्ता हो तो नियाज जैसा हो, बेलाग, निस्वार्थ, कर्म, त्याग तथा तपस्या की स्वर्ण-मूर्त्ति।"

प्रोफेसर सुधांशु—"मेरी योजनाओं की सफलता नियाज, केतकी और सुभद्रा के कठिन परिश्रम का परिणाम मात्र है केतकी! और कुछ नहीं। योजना निरर्थक हैं, कल्पना मात्र हैं, जब तक उन्हें सही-सही समझ कर कार्यरूप में परिणित करने वाले कार्यकर्त्ता न हों। यह कहते हुए उन्होंने एक चित्रों का लिफाफा मिस केतकी के सम्मुख

खोलते हुए कहा—"यह है बनस्थली का क्रमिक विकास। यह सब आप लोगों के परिश्रम का इतिहास है।"

नियाज अहमद ट्रक से उतर कर इन्हीं दोनों व्यक्तियों के पास एक मूढ़े पर आ बैठे और माथे का पसीना पोंछते हुए गम्भीर स्वर में बोले—"प्रकाश बाबू के कई मिलों में हड़ताल हो गई प्रोफेसर साहब और कपड़ा-मिल को तो आज एक मजदूरों का तूफानी दस्ता आग लगाने पर तुला हुआ था। वह तो समय पर पुलिस ने आकर हड़तालियों पर काबू पा लिया नहीं तो आज मिल खाक में मिल जाना था। और आप को यह भी बतला दूँ कि प्रकाश बाबू का वह दस मंजिला महल भी बनता-बनता रुक गया है। उसकी तीसरी मंजिल की भी छतें अभी तक नहीं पड़ सकी हैं। मिलों के मजदूरों के साथ-साथ राज मजदूरों ने भी हड़ताल कर दी है। हड़ताल के साथ रुपये की भी कमी दिखाई दे रही है। सीमेन्ट के आर्डर कैंसिल कर दिये हैं, स्टील-कोटा उठाया नहीं गया और भट्टे वालों ने पेशगी रुपया जप्त कर लिया। वही भट्टे वाले जो पन्द्रह रुपये कन्ट्रोल पर चालीस रुपया वसूल करते थे आज चट्टे लगाये खरीदारों के मुँह ताक रहे हैं।" वह सूचना देकर गर्व के साथ अकड़ कर बैठ गये।

प्रोफेसर सुधाँशु और मिस केतकी को हार्दिक खेद हुआ परन्तु उसे प्रकट न करते हुए मिस केतकी ने पूछा—"अब तो कोई झगड़े की सम्भावना वहाँ पर दिखाई नहीं दे रही थी नियाज भय्या!

नियाज अहमद—"पुलिन के पहुँचते ही भीड़ काई की तरह फट गई। चन्द इने गिने आदमियों को छोड़ कर सब भाग खड़े हुए। मैं तो दूर से केवल इतना ही देख पाया।"

प्रोफेसर सुधांशु—"समय की परिस्थितियों को भुला कर प्रकाश बाबू तथा मजदूर-नेता दोनों ही राष्ट्र का अहित करने पर उतारू प्रतीत होते हैं - मजदूर समझते हैं कपड़ा-मिल को जला कर वह प्रकाश बाबू से उनकी निरंकुरता का प्रतिशोध ले रहे हैं परन्तु वह यह नहीं

समझते कि मिल को इस प्रकार नष्ट करके वह कितने मजदूरों को सर्वनाश के द्वार पर भटकने के लिए छोड़ने पर उतारू हो चुके हैं। प्रकाश बाबू की नीति से मजदूर की यह स्वार्थप्रिय प्रवृत्ति किसी भी प्रकार राष्ट्र के उत्थान में कम घातक नहीं है।"

नियाज—"परन्तु पहले किसने की ?"

प्रोफेसर सुधांशु—"पहिले बाद का प्रश्न न्यायालय निश्चित करेगा। उस पर विचार करना हमारा लक्ष्य नहीं। हम तो केवल यही समझते हैं कि यह प्रवृत्ति दोनों ही दलों के लिये असन्तोष जनक है और राष्ट्र-हितों की सुरक्षा इस प्रवृत्ति को धारण करके न प्रकाश बाबू ही कर सकते हैं और न मजदूर ही। दोनों ही वर्ग राष्ट्र के साथ शत्रुता का व्यवहार कर रहे हैं और इसी लिए राष्ट्र की दृष्टि में दोनों समान रूप से दोषी हैं।"

मिस केतकी—"व्यवहार के क्षेत्र में कोरा सिद्धान्तवाद काम नहीं कर सकता प्रोफेसर साहब ! आज प्रथम बार मुझे नियाज भय्या के मत का समर्थन करना पड़ रहा है। संघर्ष मैं भी नहीं चाहती, परन्तु जब कंधों पर आ पड़े तो उससे पीठ दिखलाना भी कायरता है। प्रकाश बाबू का मजदूरों के प्रति दुर्व्यवहार ही इस सब उथल-पुथल का कारण है।"

प्रोफेसर सुधांशु—"परन्तु तुमने इतनी दृढ़ता पूर्वक कैसे कहा केतकी !"

मिस केतकी—"विश्वस्थ सूचना के आधार पर।"

नियाज अहमद मिस केतकी के मुख से अपनी बात का समर्थन पाकर मन ही मन झूम उठा और उसके होठों पर धीमे-धीमे स्वर वाली एक गुन-गुनाहट खेलने लगी। इस से अधिक तो वह कुछ और चाहता ही नहीं था। मिस केतकी के मुख से निकले हुए आज के चार-पाँच शब्दों ने उसका स्थान नियाज से पूजा-स्थल पर स्थापित कर दिया। नियाज श्रद्धा से झुक गया और वह आज सही अर्थ में समझ पाया कि

मिस केतकी की विचार-धारा कितनी स्वतंत्र है । वह न तो प्रकाश बाबू के ही पीछे नेत्र बन्द करके चल सकती है और न प्रोफेसर सुधांशु के ही पीछे, परन्तु जिसे वह सही समझती है उसका अनुकरण करने में उसे विलम्ब नहीं ।

मिस केतकी का औषधालय जाने का समय हो गया था और वह उठ कर चल भी पड़ी और नियाज अहमद भी चले गये परन्तु प्रोफेसर सुधांशु उसी प्रकार चिंता-निमग्न जहाँ के तहाँ मौन-मुद्रा में बैठे रहे । प्रकाश बाबू के सामने आनेवाली समस्याएँ रह-रह कर उन के सामने आ खड़ी होती थीं, और उन का हल खोज निकालना भी कोई कठिन कार्य नहीं था, परन्तु उन्होंने सोचा, 'प्रकाश···वह तो प्रथम श्रेणी का दम्भी, कपटी और पाखण्डी व्यक्ति है । दम्भ, पाखण्ड और कपट को ही वह व्यापार की मूल-शक्तियाँ मानता है । ऐसी परिस्थिति में कोई भी सही सुझाव उसके सामने प्रस्तुत करना कोरी विडम्बना मात्र होगा । उस के पास जाने के भी वह परमात्मा जाने क्या अर्थ लगायगा और उसमें न जाने मेरी क्या-क्या स्वार्थ-सिद्धि समझ कर संशय की दृष्टि से देखेगा । फिर यदि वह कुछ समझ भी पाय तो उसके साथी भी उसे सही मार्ग पर नहीं आने देंगे । कार्य की सिद्धि हो या बर्बादी, उनका कमीशन चलता है । माल बिकना और खरीदना, चाहे वह लाभ से हो अथवा हानि से, उन्हें लाभ ही होता है ।···नहीं कुछ नहीं, किया जा सकता ।' और वह अपने माथे पर हाथ रख कर थके मन से बैठ गये ।

[१८]

रानी सुशीला पर दृष्टि जम गई और अधिकार भी कर लिया। मिस केतकी ने हृदय को द्रवित किया परन्तु अधिकार प्राप्त करने में सफलता न मिल सकी, कामिनी के सौंदर्य ने निमंत्रण के स्थान पर एक चुनौती दे डाली और विचित्र प्रकार की ही परिस्थिति पैदा कर दी। जब प्रकाश बाबू निराश हो कर कामिनी की ओर से खिचे तो वह सिमट कर पास में आ बैठी और जब प्रकाश बाबू ने कामिनी को सुलभ समझ कर अङ्क में भर लेने के लिए हाथ बढ़ाया तो वह मुरक कर दूर जा खड़ी हुई। कामिनी एक समस्या बन गई प्रकाश बाबू के लिए। 'शून्य' कवि को कल जानवर घोषित करने वाली कामिनी आज उस से इस प्रकार कंधे पर हाथ रखे लॉन में घूम सकती है इस की प्रकाश बाबू स्वप्न में भी आशा नहीं कर सकते थे। परन्तु आँखों को धोखा नहीं दिया जा सकता था और प्रकाश बाबू उल्टे ही पैरों लौट लिए। कामिनी ने प्रकाश बाबू को आते और लौटते हुए न देखा हो ऐसी बात नहीं परन्तु जीवन के इन सुखमय कारणों को नष्ट करना वह नहीं चाहती थी।

कामिनी—"तो कवि ! तुमने प्रोफेसर सुधांशु का साथ छोड़ कर प्रकाश बाबू की नौकरी कर ली—इसका अर्थ यही समझूँ न मैं।"

'शून्य' जी—"यही समझ लीजिए आप, परन्तु नौकरी करने के अभिप्राय से मैं यहाँ नहीं आया। मेरे यहाँ आने का कारण थी सुशीला और उसी के आग्रह को टालने का साहस मैं न कर सका।"

कामिनी—"तुम कला के पुजारी बन कर प्रकाश बाबू के माया-जाल में फँस गये और तुमने अपनी प्रतिभा का प्रयोग प्रकाश बाबू की आज्ञा-पालन करने के लिए किया, यही किया न ?"

'शून्य' जी—"बिलकुल यही किया कविते ! परन्तु कला की सेवा मान कर किया ।"

कामिनी–"ठीक है ।" और इतना कह कर वह व्यंग्य के साथ मुस्कुरा दी । "तुम्हारा कला का दृष्टिकोण बुद्धि से सम्बन्ध नहीं रखता कवि ! आज मैं अपने फिर उन्हीं शब्दों को दुहरा रही हूँ जिन से रूठ कर एक दिन तुम मझे अकेली छोड़ कर सुशीला के पीछे-पीछे दौड़ गए थे । परन्तु यह तुम्हारे जीवन की वह दुर्बलता है जिस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं ।"

'शून्य' जी कामिनी की इस बात का क्या उत्तर दें, यह उनकी समझ में नहीं आ रहा था । कामिनी के कथन में असत्यता नहीं थी, यह 'शून्य' जी का हृदय अनुभव कर रहा था । वह कुछ कहना ही चाहते थे कि कामिनी मस्कुरा कर इठलाती हुई आँखों को घुमा कर बोली, "तुमने मुझे कविते ! कह कर सम्बोधित किया । क्या मैं पूछ सकती हूं कि इस शब्द के प्रयोग का बुद्धि से कोई सम्बन्ध है ?"

'शून्य' जी—"है कविते ?···परन्तु जाने दो इन बातों को । जीवन में बुद्धि ही तो सब कुछ नहीं है । मानव की भावना, मानव की कल्पना मानव की इच्छाएँ और आकाँक्षायें यह सब भी तो कुछ महत्त्व रखती हैं । जीवन के निर्माण में क्या तुम्हारी दृष्टि से इन का कोई स्थान नहीं ?"

कामिनी—"है क्यों नहीं ? परन्तु बुद्धि-विहीन भावना और कल्पना मानव को गढ़े में भी ढकेल सकती हैं । क्या तुम अपने को इस परिस्थिति से कुछ ऊपर समझते हो कवि ?"

'शून्य' जी फिर मौन हो गए । उन के पास फिर कोई उत्तर नहीं था और कामिनी कहती जा रही थी—"मेरा सौंदर्य तुम्हें भटका भी सकता है । सौंदर्य में स्थायित्व नहीं होता और उसी प्रकार मैं भी स्थाई नहीं हूं । मेरा मन चंचल है, बहुत चंचल । मेरी इच्छाएँ प्रबल हैं, बहुत प्रबल । मेरी कल्पनाएँ मधुर हैं, बहुत मधुर । मेरा जीवन

मुक्त है, नितांत मुक्त। कोई बँधन मैं नहीं जानती, कोई प्रतिबन्ध मैंने पालन नहीं किया। प्रकाश बाबू भी स्वतंत्र प्रकृति के व्यक्ति हैं इस लिए मैं उन्हें प्यार करने लगी हूं।"

'शून्य' जी—"प्यार करने लगी हो? परन्तु प्रकाश बाबू तो प्यार को मूर्खता कहते हैं।"

कामिनी—"सो तो मैं भी कहती हूँ। परन्तु कवि! संसार में जो कुछ भी कोई व्यक्ति कहता है वह करता नहीं, जो करता है वह सोचता नहीं और जो सोचता है उसकी कल्पना नहीं करता। किसी भी व्यक्ति के जीवन को समझ लेना कोई खेल नहीं और न ही संसार में व्यक्तियों का जीवन इतना सरल ही होता है जितना तुम्हारा।"

'शून्य' जी—"मेरा जीवन तुम्हें सरल दीखता है कविते। मेरी कविताएँ एम० ए० में पढ़ाई जाती हैं। बड़े-बड़े डाक्टर आचार्य मेरी कविता का अर्थ नहीं लगा सकते और तुमने मेरा जीवन पढ़ते समय उसे साधारण ही कोटि में लाकर टिका दिया। मैं तो समझ ही नहीं पा रहा हूं कामिनी! यह सब गोल माल क्या है? मैं वास्तव में मूर्ख हूँ या तुम्हारे सौंदर्य-जाल ने मुझे मूर्ख बना दिया है। आज मेरा विचार हो रहा है कि चलो हम लोग इस समस्या को ले कर मिस केतकी के सम्मुख रख दें। वह निश्चित रूप से इस का सही उत्तर दे सकेंगी।"

कामिनी—"मिस केतकी! हाँ तनिक यह तो कहो कवि! कि यह मिस केतकी कौन हैं?"

'शून्य' जी—"मिस केतकी! मिस केतकी को तुम नहीं जानतीं कविते! चलो आज तुम्हारा परिचय मिस केतकी से करा लाता हूँ। तुम निश्चय ही उनसे भेंट करके बहुत प्रसन्न होगी। वह देवि है वास्तव में देवि! क्या मस्तिष्क पाया है उस महिला ने, कि बस वर्णन नहीं किया जा सकता। मेरी कविता-शक्ति मौन हो जाती है उनके सम्मुख और बस देखते और सुनते ही बनता है। मानव-मात्र की निस्वार्थ सेवा करने का उन्होंने व्रत लिया है और हमारे मित्र प्रोफेसर

सुधांशु के साथ नव-निर्माण-कार्य में जुटी हुई है।"

कामिनी—"नव-निर्माण-कार्य में· ?"

'शून्य' जी—"हाँ-हाँ ! नव-निर्माण-कार्य में ।" यह कहते-कहते खड़े हो कर कवि ने अपनी दोनों एड़ियाँ उचकाते हुए दूर पश्चिम में संकेत करके बोले—"देखती हो कविते ! वहाँ क्षितिज के पास में एक थोड़े से मकानों की बस्ती दिखलाई दे रही है। इस बस्ती का नाम बन-स्थली है। वहीं पर इन नव-निर्माण की योजनाओं का केन्द्र प्रोफेसर सुधाँशु ने स्थापित किया है।"

कामिनी—"परन्तु वह नव-निर्माण है क्या ? कुछ इस का भी तुम्हें ज्ञान है।" उत्कण्ठा लेकर कामिनी ने पूछा।

'शून्य' जी—"बस यह सब मैं कुछ नहीं जानता। हाँ इतना अवश्य सुना है कि प्रोफेसर साहब की योजनाओं पर बहुत दृढ़ता और सुन्दरता के साथ कार्य किया जा रहा है। बस्ती के रहने वाले सभी व्यक्ति प्रसन्न हैं और जब से प्रोफेसर साहब ने उस ग्राम में पदार्पण किया है वहाँ पर शिक्षा के प्रचार के साथ-साथ धन का भी विशेष लाभ हुआ है। ग्राम के सब व्यक्ति प्रसन्न हैं और स्वास्थ्य-रक्षा का बहुत सुन्दर प्रबन्ध कर दिया गया है। मिस केतकी स्वयं एक प्रसिद्ध डाक्टरनी हैं और उनके सहयोग से इस दिशा में प्रोफेसर साहब को उन्नति करने में विशेष सफलता मिली है।" इसी प्रकार विस्तार के साथ जो कुछ भी नव-निर्माण का 'शून्य' जी को ज्ञान था वह सब उन्होंने कामिनी को प्रेम-पूर्वक समझा दिया। कामिनी की इच्छा हो आई कि वह चल कर उन नव-निर्माण की योजनाओं का निरीक्षण करे और यदि वास्तव में वहाँ उसके योग्य को कोई योजना हो तो उसे अपना-कर कार्य-रूप में परिणत करने का प्रयत्न करे।

'शून्य' जी को साथ ले प्रकाश बाबू की कोठी के सामने से होती हुई सुशीला और प्रकाश बाबू के नेत्रों में चुभ कर कामिनी मस्ती में हथिनी के समान झूमती हुई रेशमी जार्जेट की साड़ी के सुनहरे

पल्ले को कंधे पर डाले बनस्थली की ओर बढ़ चली। मन्द पवन के हल्के-हल्के झोंकों में कामिनी के घुँघराले बाल उड़ रहे थे और उन्हें संभालने के लिए कभी-कभी वह अपना हाथ सिर पर फेर लेती थी। सुशीला कोठी की खिड़की से और प्रकाश बाबू सामने लॉन में खड़े यह दृश्य देख रहे थे और न जाने कितनी देर तक देखते रहते यदि इसी समय सरदार लुहारासिंह जी और बैरिस्टर पुण्डरीक वहाँ पर न आ जाते।

तीनों व्यक्ति लॉन में बैठ गये। इन तीनों में कोई बाहर का आदमी नहीं था इसी लिए कोई बात किसी से छुपाने की आवश्यकता नहीं थी। सब योजनाओं का कच्चा चिट्ठा खुल कर सामने आ गया। बैरिस्टर पुण्डरीकर ने घोषणा की—"यदि इस समय परिस्थिति से संघर्ष करना है तो हमें अपने हानि पहुंचाने वाले कामों को एक दम बन्द कर देना चाहिए।"

सरदार लुहारासिंह—"और सबसे पहिले उस दस मंजिले महल का बनना बन्द कर देना चाहिए।"

प्रकाश बाबू—"यह नहीं होगा।" कड़क कर बोले।

बैरिस्टर पुण्डरीक—"नहीं होगा! तब क्या रुपये का कोई प्रबन्ध हो गया है?"

प्रकाश बाबू—"नहीं।"

लुहारा सिंह—"फिर?"

प्रकाश बाबू—"महल का न बनना मेरी मृत्यु है। मिस केतकी के सम्मुख मैं अपनी योजना का मॉडल प्रस्तुत अवश्य करूँगा। सूर्य पूर्व से निकलना बन्द हो कर पश्चिम से निकल आए परन्तु मेरा दस मंजिला महल अवश्य बन कर पूरा होगा।"

बैरिस्टर पुण्डरीकर—"परन्तु उस महल पर बैठ कर निरीक्षण करने के लिए जब कारबार ही नहीं रहेंगे तो उस महल का क्या बनेगा? आज चारों ओर जो बची कुची चहल-पहल भी दिखलाई

दे रही है वह भी तुम्हारी आकांक्षाओं के महल की नीवों में कूट-कूट कर भर दी जायगा। चारों ओर सुनसान हो जायगा—सन्नाटा, और उस सन्नाटे में यह महल भाँय-भाँय करके तुम्हें खाने के लिए दौड़ेगा। तुम पागल हो जाओगे प्रकाश बाबू! पागल।"

प्रकाश बाबू—"पागल! पागल।" और प्रकाश बाबू जोर से खिल खिला कर हँस पड़े। वह वास्तव में पागल हो गये। "मैं पागल हो जाऊँगा।" यह कहते हुए पागल की भाँति लान में घूमने लगे। उन का सिर चकरा रहा था और नेत्र ऊपर को चढ़ गये थे। बैरिस्टर पुण्डरीकर और सरदार लुहारासिंह जी भयभीत होकर चुपके से एक ओर को खिसक लिए। रानी 'सुशीला' ने प्रकाश बाबू की यह दशा देखी तो वह भी भयभीत हो उठी। किसी प्रकार साहस करके प्रकाश बाबू के पास गई और उन्हें धीरे-धीरे घास पर लिटा दिया। थोड़ी देर में प्रकाश बाबू को वहीं पर पड़े-पड़े नींद सी आ गई। नींद में पहिले तो वह कुछ समय तक शान्त बने रहे परन्तु फिर यकायक बड़बड़ाना प्रारम्भ हो गया। नौकर चाकर कोठी के सब आकर एकत्रित हो गये और उनकी सहायता से सुशीला उन्हें उठवा कर अपने निजी कमरे में ले गई।

प्रकाश बाबू पागल पन में पलंग पर उछल-उछल कर कह रहे थे—"सधांशु! तुम्हें केतकी पर हाथ साफ करके भी संतोष नहीं हुआ। मैं अपनी इस कठिन परिस्थिति में किसी प्रकार अपने को सँभालने के लिए कामिनी को लाया तो तुमने उस पर भी डोरे डालने प्रारम्भ कर दिये। यह सब तुम अच्छा नहीं कर रहे हो सुधांशु! अपना माडल तैयार करके तुम्हें अभिमान हो गया है, परन्तु मेरी असफलता सिद्धान्त स्वरूप न हो कर परिस्थितियों के कारण हुई है। मैं अपने को असफल नहीं मानता। सफलता मैं प्राप्त करूँगा और एक दिन केतकी को यह दिखला दूँगा कि जो महानता और गौरव मेरी योजनाओं में है उस के सम्मुख सुधांशु की योजनाएँ बच्चों का खिलवाड़

है।" और इतना कह कर वह शांत हो जाता। यह वाक्य मानो प्रकाश बाबू को रट गये थे और वह पाँच-पाँच मिनट मौन रह कर फिर इन्हीं शब्दों को उच्चारण करना प्रारम्भ कर देते थे।

अचानक प्रकाश बाबू उठ कर पलंग पर बैठ गये। दो तीन नौकर उन्हें सँभाले हुए थे। उन्होंने बड़ी दीन भाषा में कहा—"सुधांशु तुम आये हो यहाँ पर मित्रता निभाने के लिए। ऐसे ही होते हैं मित्र! तुम विश्वासघात कर रहे हो। सुशीला रानी को भी मेरे पास से छीन कर ले जाना चाहते हो। मैं मानता हूँ कि तुम स्त्रियों को वश में करने का वशीकरण-मंत्र जानते हो परन्तु······" इतना कह कर प्रकाश बाबू पलंग पर पीछे को लेट गये, एक दम मौन। उनका बदन थर-थर कांप रहा था और बड़े वेग से पसीना छूट रहा था।

रानी सुशीला ने जिस डाक्टर को फोन किया था वह अपने औषधालय में नहीं था। दूसरे डाक्टर को बुलाने के लिए नौकर दौड़ गये, परन्तु अभी तक कोई नहीं आ पाया था। इसी समय मिस केतकी की कार अकस्मात् आकर प्रकाश बाबू की कोठी के पोर्टिको में रुकी और उस में से उतर कर मिस केतकी तथा प्रोफेसर सुधांशु अन्दर आ गये। प्रकाश बाबू की यह दशा देख कर दोनों व्यक्ति एक-दम बेचैन हो उठे। मिस केतकी प्रोफेसर सुधांशु को यहीं पर छोड़ कर कार से अपने औषधालय चली गई और विद्युत की गति के साथ अपना बक्स लेकर लौट आई।

आवश्यकतानुसार उपचार मिस केतकी ने किया और अंत में एक औषधि नींद आने की देकर पास वाली कुर्सी पर बैठ गई। प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी के बैठे-बैठे भी प्रकाश बाबू ने वही पहले वाक्य कई बार दुहराये और उन्हें उच्चारण करते समय वास्तव में उन की दशा बहुत ही दैनीय हो उठती थी।

सुशीला—"बहिन केतकी! मैं आप की हृदय से आभारी हूँ कि

आपने इस कठिन समय में आकर मेरी सहायता की। मैं आप की क्या सेवा कर सकती हूँ ?"

मिस केतकी—"यह शब्द उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं रानी सुशीला ! प्रकाश बाबू की यह दशा देख कर जितना हार्दिक खेद इस समय प्रोफेसर सुधांशु को है उतना अन्य किसी व्यक्ति को नहीं हो सकता। मनुष्य सिद्धांत के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर कर देता है, परन्तु सिद्धांत के क्षेत्र से बाहर निकल कर जब मानव और मानवता के क्षेत्र में पदार्पण करता है, तो उसके सम्मुख आदर्श का नया अध्याय खुल जाता है। तुमने कवि से दीक्षा प्राप्त की है और पूँजीपति का पाणिग्रहण किया है। यह भार तुम्हारे सिर पर इतने महान् हैं कि सम्भवतः कभी जीवन में इनसे मुक्त हो सको। हमारी सेवा का भार सिर पर व्यर्थ के लिए वहन करने का कष्ट न करो, बस हमारी आपसे यही प्रार्थना है।" कहते-कहते मिस केतकी का गला भर आया और कंठ अवरुद्ध हो गया। प्रोफेसर सुधांशु बिना एक शब्द भी बोले चुपचाप मिस केतकी के साथ उठ कर कोठी से बाहर चले गये। चलते समय उन्होंने एक बार प्रकाश बाबू मुख के पर देखा और उन के नेत्रों से दो बूँद आँसू बह कर उनके कुर्त्ते पर टपक गये।

[१६]

मन्दी का प्रभाव धीरे-धीरे बाजारों से विलुप्त होना प्रारम्भ हो गया। सोने का भाव जो एक बार एक सौ अठारह से टूट कर बहत्तर और तिहत्तर पर पहुँच गया था फिर धीरे-धीरे ऊपर चढ़कर पिच्चानवें को छूने लगा। गुड़ का भाव जो छै और सात को छूने चला था फिर दस से बातें करने लगा। कपड़ा मन्दा हो जाने से लोगों के न जाने कितने दिन के दबे हुए अरमान एक दम प्रश्रय पाकर बजाजे में टूट पड़े। जिन व्यापारियों ने धैर्य से काम लिया, वह मन्दी के झटके को सँभाल गये। दूकानों में बड़े-बड़े स्टाक भरने की बुरी प्रथा को परित्याग करके मिलों से ताजा माल लाते और उसे बेच कर फिर नया माल लाने की नीति को अपनाया।

सरकार ने भी बहुत सी चीजों का निर्यात खोल कर तथा बहुत सी चीजों पर से निर्यात कर में कटौती करके उनके दरों का क्रांतिकारी अवमूलन रोक दिया। इससे व्यापारिक क्षेत्र में अनिस्थिर वातावरण फिर स्थिर हो उठा और साहसी व्यापारियों ने अपनी परिस्थितियों को सँभाल कर उन्नति के पथ पर कदम बढ़ाया। इस आपत्तिकाल में जिन मजदूरों ने राष्ट्र के साथ विद्रोह किया और समय की आवश्यकताओं को न समझते हुए कठिन परिश्रम से मुख मोडा उन्हें मुँह की खानी पड़ी और जिन पूंजीपतियों ने अपने जर-जर साधनों द्वारा समय की बाढ़ को रोकने का असफल प्रयास किया वह भी स्थिर न रह सके। उन के पैर लड़-खड़ाये और उन्हें चारों खाने चित्त गिरना पड़ा।

बनस्थली—संघ ने इस आपत्तिकाल का सामना बहुत स्थिरता से किया और इसी लिए उस की सभी फैक्ट्रियों का उत्पादन घटने के स्थान पर और बढ़ गया और इस बढ़ोत्तरी द्वारा संघ की आय भी बढ़ गई।

जन फैक्ट्रियों में अभी तक केवल एक ही शिफ्ट में कार्य हो रहा था उन में तीन-तीन शिफ्ट काम चलने लगा। प्रकाश बाबू की बन्द पड़ी मिलों के जिन मजदूरों ने इस संघ का सदस्य बनना स्वीकार किया उन्हें प्रोफेसर सुधांशु ने अपनी व्यवस्था में सम्मिलित कर लिया। फैक्ट्रियों का उत्पादन बढ़ते ही प्रोफेसर सुधांशु ने अपना ध्यान अपनी बनी वस्तुओं के लिए देहली से बाहर के अन्य बाजारों में उचित स्थान खोजना प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार बनस्थली-मार्के की बहुत सी विशुद्ध चीजें देश भर में प्रचारित हो गईं। जिस मन्दी के प्रभाव से देश के कई मिल बन्द हो गए, कितने ही कारखानों को ताला लग गया, कितनी ही यूनियनों को हड़तालें करनी पड़ीं, कितने ही मजदूर-नेताओं के प्रति दिन व्याख्यान देने से गले पक गये, उसी के फल-स्वरूप प्रोफेसर सुधांशु ने अपनी योजना को बल दिया। प्रोफेसर सुधांशु की सभी योजनाएँ कठोर परिश्रम के आधार पर पुष्पित तथा पल्लवित होती हुई आकाश वल्लरियों के समान भारत के गगन-मण्डल में लह-राने लगीं और तब देश के विभिन्न दलों के नेताओं, लेखकों, कलाकारों, सामाजिक-कार्य कर्त्ताओं और विद्वानों की दृष्टि उस ओर गई। सभी ने आश्चर्य के साथ देखा कि इस चमारों की गली सड़ी बस्ती में, जिस में सभ्य व्यक्ति बिना दस पाँच बार नाँक सिकोड़े घुस भी नहीं सकता था और जिसकी गलियों को कईबार महात्मा गाँधी अपने दल के साथ झाड़ू लगाने पर भी स्थाई रूप से स्वास्थ्य प्रद नहीं बना सके थे, यह सौंदर्य और सुगन्ध-युक्त पुष्पों के भार से झूमती हुई बेल-वल्लरी आशा और अरमानों से भरे स्वच्छ और सुन्दर आकाश का चुम्बन कर रही थीं। सब की दृष्टि इस वाटिका के माली पर गई और देखा कि वह कितनी सादगी के साथ बनस्थली की उसी कच्ची चौपाल में बैठा हुआ गाँव के बच्चों को पढ़ाने में संलग्न है। वही नीम का वृक्ष है और उसका वही टूटा हुआ तख्त जिसे ग्राम-वासियों ने एक दिन बड़े प्रेम और आदर के साथ उन्हें दिया था। उस पर वही फटा हुआ मुज-

फर्रुखनगर का काला कम्बल था जिसे अपनी जूते गाँठने की थली से उठा कर श्रद्धा के साथ बूढ़े साठ वर्ष के कालू चमार ने अपने काँपते हुए हाथों से प्रोफेसर सुधांशु के हवाले किया था।

सामने से नियाज अहमद, मिस केतकी, कविवर 'शून्य जी, बहिन सुभद्रा और मिस कामिनी की टोली आ रही थी। प्रोफेसर सुधांशु खड़े हो गए और सबका स्वागत किया।

मिस केतकी—"आज आप का स्वप्न पूर्ण हो गया प्रोफेसर साहब! पाँचों बस्तियों के सब मकान बन कर तय्यार हो चुके है। सब सड़कें पूर्ण हो गईं। सब बस्तियों में दो-दो पाठशालाएँ, दो-दो वाचनालय और एक-एक चिकित्सालय बन गए हैं। प्रत्येक ग्राम में एक-एक डेयरी है और बनस्थली में इन सभी की केन्द्रीय संस्थाएँ हैं।"

नियाज अहमद—अब सिर्फ आप की इस चौपाल का नव-निर्माण होना बाकी है। आप अपना मकान चल कर देख लीजिए। वह गाँव के बीचों बीच है और सभी से अलग थलग।"

कामिनी—"कितना प्यारा मकान है आप का?"

प्रोफेसर सुधांशु—"क्या कामिनी को बहुत प्यारा लगा?"

कामिनी—"बहुत प्यारा।"

प्रोफेसर सुधांशु—"तो कामिनी और कविवर 'शून्य' जी उसी मकान को सुशोभित करेंगे। बनस्थली के हृदय में निवास कर के कवि मैं समझता हूं अपनी कविता के साथ ग्राम वासियों के जीवन में आनन्द और उमङ्ग का संचार करेगा। कामिनी जिसे कवि ने कविता-स्वरूप देखा है, ग्राम के जीवन में सौन्दर्य का विकास करने में सफल होगी।"

सब मौन थे; कामिनी और कविवर 'शून्य' जी के मस्तक श्रद्धा के साथ प्रोफेसर सुधांशु के सम्मुख झुक गये और कवि तथा कविता ने अपना जीवन संघ की सेवा में लगाने का वचन दिया। इस पर सभी उपस्थित सदस्यों ने प्रसन्नतापूर्वक तालियाँ बजाईं। मिस केतकी ने प्रेम-पूर्वक कामिनी का हाथ पकड़ कर कविवर 'शून्य'

जी के हाथ में थमाते हुए कहा—"भावना और सौन्दर्य का यह समागम बनस्थली-संघ के लिए शुभ हो, ऐसी हमारी हार्दिक कामना है। हमें पूर्ण आशा है कि बनस्थली की इच्छित महत्त्वकांक्षाओं को रूप और अनुभूति के इस कलात्मक सम्मिलन से बल मिलेगा और यहाँ का नीरस वायुमण्डल एक बार रस-पूर्ण हो कर जीवन की कर्मठ योजनाओं पर और भी प्रगति के साथ अग्रसर होगा।"

नियाज अहमद ने आशा भरे नेत्रों से इस युगल जोड़ी के ऊपर निहारा परन्तु उसे इस बात का खेद अवश्य था कि जो मकान उन्हों ने अपनी श्रद्धा के पात्र प्रोफेसर सुधांशु के लिए अपनी विशेष देख रेख में बनवाया था उस में उन्होंने स्वयँ रहना स्वीकार न करके उसे 'शून्य'जी को दे दिया। परन्तु इस में अब परिवर्तन की सम्भावना नहीं थी। सब ने प्रोफेसर साहब के कथन का स्वागत किया और यह पूछे बिना न रह सके—"क्या मैं पूछ सकता हूँ कि प्रोफेसर साहब का अपना मकान बनस्थली में कौन सा होगा?"

प्रोफेसर सुधांशु मुस्करा कर बोले—"जहाँ मैं बैठा हूँ, बस यही मेरा मकान होगा नियाज! मैं जानता हूँ तुम्हारे मन में उठने वाली भावना को, परन्तु बनस्थली-संघ के क्या सभी मकान मेरे मकान नहीं हैं। सब मकान एक से हैं। किसी में कोई अन्तर नहीं। मेरी कल्पना और आशा का मॉडल बन कर तय्यार हो गया। मैं चाहता हूँ कि भारत इसी प्रकार के संघों में विभक्त हो कर अपने निवासियों को धन-धान्य से पूर्ण करता हुआ अपने में आप पूर्ण हो उठे। हमारे देश और देश की परिस्थितियों को समझने वाले महान् नेता महात्मा गांधी ने इस संगठन की ओर संकेत किया था, परन्तु उन की योजनाओं को समझने में अनभिज्ञ व्यक्तियों ने उन्हें अप्रगतिशील कह कर कार्य-रूप में लाने का विरोध किया। आविष्कारों के इस युग में, कल पुर्जों की रात दिन चक्कर लगाती हुई दुनियाँ में, मानव-जीवन को लील लेने वाली साँय साँय करती हुई प्रगति की भयंकर धारा में बहता हुआ

आज का मानव-जीवन अशांति द्वारा शांति की ओर दौड़ रहा है। केवल दौड़ लगाना ही प्रगति नहीं है। प्रगति का अर्थ शिक्षा है, प्रगति का अर्थ सुख तथा शांति है, प्रगति का अर्थ मानव के हृदय में मानव की संवेदना है, प्रगति का अर्थ सम-भाव से मानव और मानव की शक्तियों का विकास है, प्रगति का अर्थ संघर्ष के क्षेत्र में शक्ति और प्रवृत्तियों का संचालन नहीं, अपने सुख तथा शांति के लिए दूसरों की छाती का रक्त चूसना नहीं, नवीनतम आविष्कारों से विश्व को आतंकित पूँजी का मानव पर विजय प्राप्त करना नहीं।

मैं आशा करता हूं कि बनस्थली-संघ भारत और विश्व के सम्मुख यह महान दृष्टिकोण रखेगा।"

मिस केतकी—"अवश्य रखेगा। हम सब लोग आपके दिखलाये हुए मार्ग पर चल कर मानवता के इन उच्चादर्शों को प्रसारित करने में संलग्नता से कार्य करेंगे।"

नियाज अहमद—"जरूर करेंगे। आपका बनाया हुआ यह बनस्थली-संघ का मॉडल के सामने समाज कार्य-क्रम की रूप-रेखा रखेगा।"

इसके पश्चात प्रोफेसर सुधांशु ने सब के साथ घूम कर संघ के पाँचों ग्रामों का निरीक्षण किया। सभी मकानों पर बन्दर बाले बँधी हुई थीं और उन के द्वारों पर स्वस्थ्य बच्चे खेल रहे थे। घर-घर पर प्रोफेसर सुधांशु का स्वागत किया गया और ग्रह-स्वामी तथा स्वामिनी द्वारा गले में मालाएँ डाली गईं। प्रोफेसर सुधाँशु के साथ मिस केतकी के भी गले में पुष्प-मालाएँ डाली जाती थीं। यह समारोह आज बहुत ही सुन्दर रूप से मनाया गया। घर घर का निरीक्षण करने के पश्चात जब यह टोली चौपाल पर लौट कर आई तो सब से आगे प्रोफेसर सुधांशु तथा मिस केतकी थे, दोनों के गले पुष्प भार से झुके जा रहे थे। उनके पीछे कविवर 'शून्य' जी और कामिनी थे और उन के पीछे नियाज अहमद तथा बहिन सुभद्रा थी। और उन के पीछे बहुत सी भीड़ थी। प्रोफेसर सुधांशु और मिस केतकी ने ज्यों ही चौपाल की पहली सीढ़ी

पर पैर रखा तो कामिनी ने चुपके से मुस्कराते हुए मिस केतकी की साड़ी का एक पल्ला प्रोफेसेर सुधांशु की लाँघ से बाँध कर गँठ-बन्धन कर दिया और कविवर 'शून्य' ने मधुर कण्ठ से लहरी छेड़ दी :—

प्रिय ! प्रमुदित मृदु बोलो ।
विमल-वचन कल-अमल-सुमन-दल-
अवगुंठत खोलो
प्रिय, प्रमुदित मृदु बोलो ।
जीवन का वह पानव पुनीत
उमडी जिस उर में प्रगति, प्रीत ;
मलयानिल पर ले चला प्राण
भोले मन का स्पनिल अतीत ।
अब अमल-कमल-से किरण-जाल
पर मीलित दृग खोलो !
प्रिय ! प्रमुदित मृदु बोलो ।
बह गया तिमिर, उफना प्रभात,
चंचल लहरों से चला वात,
हट गया रात्रि का अमिट जाल,
स्वर्णिम झलका छवि-मृदुल-गात
बन छवि छवि की प्रतिमा अपार
अब मलिन पङ्क धोलो !
प्रिय पुलिकत मृदु बोलो ।
उठते रवि के नव किरण-यान
पर परिमल के हलके सुप्राण,
क्रीडित हैं मधु के मधुर चोर
ले उर में तेरा अमल ध्यान ।
तुम भी हो प्रमुदित आज प्राण
प्रिय ! [illegible], सोलो ।
प्रिय ! प्रमुदित मृदु बोलो ।

—:o:—